Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

रीतिकाव्य नवनीत

5372

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

9/-

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

अनुक्रम

● हिन्दी रीतिकाव्य : मूल्यांकन ९-३७

नामकरण ९

रीतियुगीन साहित्य की विविधरूपता १३

रीतियुगीन वीरकाव्य १४

रीतियुगीन संतकाव्य १७

रीतियुगीन प्रेमाख्यानक काव्य १८

रीतियुगीन कृष्ण भक्ति काव्य २०

रीतियुगीन राम भक्ति काव्य २२

रीतियुगीन नीतिकाव्य २३

रीतियुगीन हास्य-व्यंग्य-विनोदकाव्य २५

रीति-शृंगार प्रवाह २९

● पुनर्मूल्यांकन ३७-५०

● कवि-परिचय ५१

आचार्य केशवदास ५१

सेनापति ५५

बिहारी ५९

कविवर मतिराम ६३

महाकवि भूषण ६९

देवदत्त (देवकवि) ७४

पद्माकर ७७

घनानंद ८०

द्विजदेव ८४

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

काव्य नवनीत	१-१०४
केशवदास	२
सेनापति	२१
बिहारी	३१
मतिराम	३९
भूषण	४७
देव	५७
पद्माकर	७१
घनानंद	८१
द्विजदेव	९१

5372

State Museum, Lucknow

State Museum

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

हिन्दी रीतिकाव्य : मूल्यांकन

नामकरण

हमारा हिन्दी साहित्य काल की दृष्टि से तीन कालों में विभक्त है—१. प्राचीन काल, २. मध्यकाल और ३. आधुनिक काल। इनमें से प्रत्येक काल को अलग-अलग युगों में विभाजित किया जा सकता है और इन युगों और कालों के साहित्य को विभिन्न धाराओं या प्रवृत्तियों में। साहित्य की अनेक धारायें और प्रवृत्तियाँ अपने कालखंड या युग-विशेष में सीमित न रहकर अन्य कालों और युगों में भी प्रवहमान् होती रहती हैं। ऐसी दशा में प्रवृत्तियों के आधार पर कालों और युगों का विभाजन नहीं किया जा सकता, क्योंकि ऐसा विभाजन सत्य और वैज्ञानिक नहीं होता। हम देखते हैं कि हिन्दी साहित्य के अन्तर्गत वीर, भक्ति, शृंगार जैसी काव्य-धारायें किसी भी कालखंड या युग में समाप्त नहीं होतीं। अतः युग-विभाजन किस के आधार पर किया जाये, यह एक समस्या हो जाती है।

साहित्य को तीन कालखंडों में विभाजित करना उतना कठिन नहीं है, क्योंकि जहाँ पर हम भाषा या भावप्रवाह में महत्वपूर्ण मोड़ देखते हैं उनको ध्यान में रखते हुए प्राचीन, मध्य और आधुनिक कालों में विभाजित किया जा सकता है। हिन्दी साहित्य का इतिहास सामान्यतः लगभग एक सहस्र वर्षों का इतिहास है जो सन् १००० वि० से आज तक विस्तृत है। प्राचीन काल इसके उद्भव का काल है जिसे हम सन् १००० से १४०० वि० तक का काल मान सकते हैं। मध्यकाल इसके विकास का काल है जो सन् १४०० से १९०० वि० तक विस्तृत है और आधुनिक काल विस्तार का काल है जो १९०० वि० के पश्चात् चल रहा है। आधुनिककालीन विशाल हिन्दी-साहित्य का सृजन उसके १०० वर्षों की ही उपलब्धि है। इस प्रकार उद्भव-काल, विकास-काल और विस्तार-काल के रूप में हम प्राचीन, मध्य और आधुनिक कालों को देख सकते हैं।

अब आता है इन कालों के अन्तर्गत युग-विभाजन का प्रश्न। यद्यपि यह

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

एक जटिल कार्य है फिर भी मोटे तौर पर हम युग-विभाजन का आधार उस युग की व्यापक एवं मुखर साहित्य-चेतना को मान सकते हैं। साहित्य-चेतना से मेरा अभिप्राय वर्ण्य विषय और अभिव्यक्ति दोनों से ही है। ऐसी दशा में प्राचीनकाल या आदिकाल या उद्भव काल को हम कई युगों में बाँट सकते हैं जिसका मुख्य आधार युगीन चेतना और उसका प्रभाव है। इस दृष्टि से हम साधना-युग और वीरगाथा-युग—ये दो नाम इस काव्य को दे सकते हैं। साधना-युग संवत् १००० से १२५० और वीरगाथा युग संवत् १२५० से १४०० तक माना जा सकता है। साधना–युग के अन्तर्गत रचा गया साहित्य सिद्धों, नाथों और जैनों का आध्यात्मिक साधना एवं धर्मोपदेश सम्बन्धी साहित्य आता है। वीरगाथा युग में चारण साहित्य जिसके अन्तर्गत किसी वीर को काव्य का नायक बनाकर उसकी वीरता और संयोग-वियोग का वर्णन प्रमुखतया किया गया है। इसके अतिरिक्त इस युग में भक्ति, प्रेम, शृंगार, नीति आदि की रचनायें भी फुटकल रूप में मिलती हैं जो मुख्य चेतना के रूप में नहीं हैं।

मध्यकाल के युग अधिक स्पष्ट हैं। ये युग हैं भक्तियुग एवं रीति-शृंगार युग। मध्यकाल का भक्तियुग समसामयिक भक्ति सम्बन्धी चेतना के आधार पर किया गया युगखंड है। इस युग में चतुस्संप्रदाय अथवा पंचभक्ति संप्रदायों के भक्ति दर्शनों के आधार पर प्रतिष्ठित भक्ति की भावना से हिन्दी-साहित्य ओत-प्रोत है। यह पूर्वकालीन आध्यात्मिक साधना से भिन्न चेतना है, क्योंकि इसमें अन्य सभी साधनोपायों की अपेक्षा भक्ति को श्रेष्ठ स्वीकार किया गया है और भक्तिभावना ही काव्य को सार्थक बनाने वाली भावना स्वीकार की गयी है। तुलसी का मत है :—

> जप पूजा, उपवास दान मख जो जेहि रुचै करो सौ।
> पायेहि पै जानिये करम फल भरि भरि वेद परोसौ।
> काम क्रोध मद लोभ मोह मिलि ज्ञान विराग हरो सौ।
> विगरत मन सन्यास लेत जल नावत आम धरो सौ।
> बहु मुनि मत बहु पन्थ पुराननि जहाँ तहाँ झगरो सौ।
> गुरु कह्यो रामभजन नीकौ मोहि लगत राजडगरो सौ।

और भी: भगत हेतु विधि भवन विहाई। सुमिरत सारद आवत धाई।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

रामचरित सर बिनु अन्हवाये । सो श्रम जाइ न कोटि उपाये ।
कवि कोविद अस हृदय विचारी । गावहिं हरिजस कलिमल हारी ।

इस प्रकार रामानंद का विशिष्टाद्वैत, वल्लभ का शुद्धाद्वैत, माधव का द्वैत, निम्बार्क का द्वैताद्वैत चैतन्य का भेदाभेद भक्तियुग में राजमार्ग के समान सर्व मान्य पथ स्वीकृत हो चुका था और साहित्य भी भक्ति भाव में व्यक्त होकर ही सम्मान पाता था । अतः उसे भक्तियुग कहना चाहिए ।

मध्यकाल के दूसरे युग के सम्बन्ध में थोड़ा अधिक मत वैषम्य है । कोई उसे कलाकाल, कोई अलंकृतकाल, कोई श्रृंगारकाल, और कोई रीतिकाल कहने के पक्ष में है । परन्तु यदि हम अपनी कसौटी अर्थात् साहित्यिक चेतना की मुखरता के प्रभाव की दृष्टि से देखें, तो इसे रीतियुग या अधिक से अधिक रीति-श्रृंगार युग ही कहना चाहिए ।

वीर, भक्ति आदि भावनाओं के समान ही श्रृंगार की भावना भी हमारे अंतस का एक प्रमुख अंग है । यह एक ऐसी मन:स्थिति है जहाँ हमारी वृत्ति विशेष रमती है । मध्यकाल के दूसरे चरण में साहित्य का जो भी स्वरूप उभर कर आया उसमें श्रृंगार का ही अधिकाधिक प्रभाव परिलक्षित होता है । अतएव इसे श्रृंगारयुग कहना तर्कसम्मत प्रतीत होने लगता है ।

परन्तु उस समय की मुख्य साहित्य-चेतना जो इससे भी अधिक व्यापक और गहरे रूप में दिखाई देती है, वह है पद्धतिपरकता । एक सांचे या पैटर्न को लेकर काव्य लिखना । शास्त्रीय विधि या पद्धति का आधार बनाकर लिखने की चेतना इस युग में अधिक समायी हुई दिखाई देती है । यदि हम इस युग के समग्र साहित्य को देखते हैं, तो इसमें भक्ति साहित्य, वीर साहित्य, नीति और फुटकल साहित्य श्रृंगार से कम नहीं लिखा गया । सभी पूर्ववर्ती धाराओं का विकास इस युग में मिलता है । इसके अतिरिक्त श्रृंगार, पूर्ववर्ती भक्तियुग के सूर, जायसी, विद्यापति, नंददास, गंग, केशव आदि की रचनाओं में इस युग से भी अधिक मिलता है । दूसरे इस युग के श्रृंगार को हम कालिदास या विद्यापति जैसे कवियों के श्रृंगार से भिन्न पाते हैं, वह श्रृंगार एक पद्धति का अनुसरण करता दिखाई देता है । इसके अन्तर्गत, आलंबन, उद्दीपन, नायकनायिका, ऋतुवर्णन, नखशिख, भाव, अनुभाव, हाव, संचारी, चेष्टा, सखी, दूती आदि के रूप में श्रृंगार-वर्णन पद्धति को जो काव्य शास्त्रीय ग्रंथों में

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

मिलती है, सामने रखकर श्रृंगार वर्णन किया गया है । इस युग की यह पद्धतिपरकता ही मुख्य साहित्य चेतना है, श्रृंगार वर्णन की प्रवृत्ति इसी में ढली हुई है ।

वर्णन की शास्त्रीय परम्परा का ध्यान ही हमें इस काल के ग्रंथों में अधिक मुखर दिखलाई देता है । फलतः हमें शिवराज भूषण, रामचन्द्र भूषण, आलीजाह प्रकाश, रावणेश्वर काव्यतरु, जगत विनोद जैसे ग्रन्थ मिलते हैं जिनके अन्तर्गत वीर, भक्ति, श्रृंगार आदि के वर्णन प्रचुर मात्रा में हैं, पर ढाँचा है शास्त्रीय । अतः मेरी दृष्टि में इसे रीतियुग ही कहना अधिक समीचीन है । अधिक से अधिक हम इसे रीतिश्रृंगार युग कह सकते हैं, क्योंकि रीतिपरकता के पश्चात् दूसरी चेतना श्रृंगार की ही है जो प्रबलता ग्रहण किये है । कलाकाल या अलंकृतकाल कहना भी एकांगी है, क्योंकि कला या सजावट की चेतना अथवा अलंकरण की चेतना भी किसी पद्धति या शास्त्र का अनुसरण करती है और रीतिचेतना में वह भी समाविष्ट है, क्योंकि इसके भीतर, अलंकार, ध्वनि, रीति, वक्रोक्ति, रस आदि सभी कला या अलंकार के सिद्धान्त आ जाते हैं ।

इस काल-विभाजन का प्रसंग पूरा करने के लिए आधुनिक या अर्वाचीन काल को ले लेना भी सार्गल होगा, अनर्गल नहीं । आधुनिक काल के युगों के नामकरण के सम्बन्ध में प्रायः यह कहा जाता है कि अन्य युगों के नाम प्रवृत्ति के आधार पर दिये जाते हैं, पर आधुनिक युग में कभी-कभी व्यक्तियों का और कभी-कभी प्रवृत्तियों का उल्लेख होता है । यथा-भारतेन्दुयुग, द्विवेदीयुग, छायावाद, प्रवोगवाद, प्रगतिवाद आदि । युग-नाम-निर्धारण सम्बन्धी यह अनेक रूपता कैसी ? मेरे विचार से अर्वाचीन काल का विभाजन भी साहित्य की प्रमुख चेतना के आधार पर ही होना चाहिए । हम उन्हें राष्ट्रीयता युग, स्वच्छन्दतावादी (छायावाद युग) और यथार्थवादी युग कह सकते हैं । भारतेन्दु और द्विवेदी युग भी छायावाद के पूर्व राष्ट्रीयता का युग था । इस समय किसी भी रचना का मूल्य राष्ट्रीयता की भावना को जाग्रत करने में ही आँका जाता था । इस युग की अधिकाँश रचनाओं में यही स्वर प्रधान है । छायावादी युग एक प्रकार का लौकिक और आध्यात्मिक रोमांस का युग है । इस युग की प्रमुख चेतना स्वच्छन्दतावादी या रोमांटिक है और हम उत्कृष्ट रचनाओं में प्रेम और रूप

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

के प्रति स्वच्छन्द मुग्धता की प्रवृत्ति देखते हैं। इसी का अवशेष या अधिक स्फुट रूप हालावाद, प्रेमवाद आदि के रूप में कवियों की स्वच्छन्दता, मौज मस्ती तथा स्थूल विलास-वासना को रचनाओं में देखा जा सकता है। श्रृंगार और प्रेम की ये रचनाएँ भी रीतिकाव्य से भिन्न प्रवृत्ति की हैं। उसके बाद जिसे हम प्रगति, प्रयोगवादी युग के रूप में पुकारते हैं, वह मूलतः यथार्थवादी युग है। कवि यथार्थ का खुला चित्रण करना चाहता है। उसे कोरे आदर्श या रोमांस से घृणा है। वह प्रेम का भी यथार्थ रूप ही प्रस्तुत करना चाहता है। कल, कारखानों के यांत्रिक वातावरण, पीड़ितों, के दलितों के मर्मस्पर्शी स्वर, दफ्तर-घर आदि का देखा और अनुभूत रूप जो आज की उत्तर छायावादी युग की कविताओं में मिलता है, वह यथार्थ के प्रति आग्रह की मुख्य चेतना को प्रकट करने वाला है। अतः इसे यथार्थवादी युग कहना चाहिये। इसी के अनुरूप इसमें व्यंग्ययुक्त तथा घिनौना, कभी सुरुचि को चुनौती देने वाला काव्य भी मिलता है, और कभी-कभी जीवन के सुन्दर सुरुचिपूर्ण, रमणीय रूप का बड़ा मोहक, हृदयस्पर्शी उद्‌घाटन भी। यथार्थवाद इस युग में खूब फूलता-फलता नजर आ रहा है। अतएव जहाँ तक नामकरण का प्रश्न है, जैसा ऊपर कहा जा चुका है इसे रीतियुग या रीतिश्रृंगार युग कहना ही अधिक संगत है।

रीतियुगीन साहित्य की विविधरूपता

वर्ण्य विषय की दृष्टि से कतिपय समालोचकों एवं इतिहासकारों की यह धारणा कि इस रीतियुग में केवल विलासप्रधान श्रृंगार की ही रचनायें हुई हैं, मुझे एक दुखद आश्चर्य में डाल देती हैं। तथ्य तो यह है कि इस युग की समस्त साहित्यिक धाराओं के काव्य-ग्रन्थों का विवरण प्राप्त करने पर रीतियुग सर्वाधिक समृद्ध प्रतीत होता है। इसमें एक-एक धारा के काव्यग्रन्थ प्रभूत संख्या में लिखे गये हैं। इस युग के कवि का व्यक्तित्व आधुनिक युग के साहित्यकार के समान प्रायः बहुमुखी है। अधिकांश बड़े-बड़े कवियों ने वीर, भक्ति, श्रृंगार, नीति सभी प्रकार के काव्य लिखे हैं। केशव, मतिराम, चिन्तामणि, सूरति, वृन्द, दास, पद्‌माकर रसिक गोविन्द आदि कवियों के नाम इस दृष्टि से उल्लेखनीय हैं। अतः यह सोचना या समझना भ्रान्तिपूर्ण है कि इस युग में या इस युग के कवियों द्वारा केवल श्रृंगारी काव्य का ही प्रणयन किया गया है।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

इसके अतिरिक्त रीतियुग के समग्र साहित्य पर दृष्टिपात करने से यह बात भी स्पष्ट हो जाती है कि रीतियुगीन काव्य पलायनवादी काव्य नहीं था। उसमें यद्यपि अत्युक्तिपूर्ण वर्णन है, समर्थ तथा उच्च एवं सूक्ष्म कल्पना का वैभव भरा है, फिर भी जीवन की—यथार्थ की धरती पर ही इस युग के पैर हैं। चाहे जीवन के हास्य-विनोद, भोग-विलास, नायक-नायिका के प्रेम-सौन्दर्यमय क्रियाकलाप को लें, चाहे वीरों की प्रशस्ति एवं गुणावलियों को, अथवा सन्तों एवं भक्तों की निर्वेद और साम्य समन्वय भावना को लें; हम सर्वत्र यह देख सकते हैं कि यथार्थ की उपेक्षा नहीं की गई है। अधिकांशतः इस युग के साहित्य की प्रवृत्ति जीवन के उपभोग्य स्वरूप का उद्‌घाटन है, चाहे वह लौकिक पक्ष हो, चाहे आध्यात्मिक पक्ष।

रीतियुगीन काव्य की व्यापकता और विविधरूपता का परिचय पाने के लिए हम संक्षेप में इस युग में प्रवहमान विभिन्न-काव्य धाराओं का उल्लेख आवश्यक समझते हैं। इस उल्लेख में हम यह बात स्पष्टतया देख सकते हैं कि पूर्ववर्ती युगों की समस्त काव्य-धारायें, इस युग में विकास और विस्तार को प्राप्त हुई हैं। इस युग की कलाप्रियता एवं साहित्यिक अभिरुचि का एक स्तुत प्रमाण इस बात में ही मिल जाता है कि नूतन साहित्य धाराओं के स्रोत फूटने पर भी कोई भी पूर्वगामी काव्य-धारा इस युग में सूखी नहीं। प्रत्येक काव्यधारा को इस युग में सरस समर्थन प्राप्त हुआ। सबसे पहले हम पूर्व युग-वर्ती धाराओं को लेंगे। इनका नामोल्लेख इस प्रकार है—

वीरकाव्य, संतकाव्य, प्रेमाख्यानकाव्य कृष्णभक्तिकाव्य तथा रामभक्तिकाव्य।

रीतियुगीन वीरकाव्य

हिन्दी वीरकाव्य का श्री गणेश उसके साहित्य के उद्‌भव काल में ही हो चुका था। कुछ लोगों के विचार से तो उसका प्रारम्भ ही वीर गाथाओं से होता है। रासो और आल्हा जैसी समर्थ रचनायें इसके प्रमाण में हैं। मध्य-काल या विकास-काल के प्रथम युग अर्थात् भक्तियुग में भी वीररस की रचनाएँ हुईं। गोस्वामी तुलसीदास के युद्ध वर्णन, गंग, केशवदास आदि कवियों की वीररस की उत्तम कविताएँ मिलती हैं। परन्तु इस पूर्ववर्ती युग में उसकी कोई निश्चित धारा नहीं है। रीतियुग में वीर-काव्य की प्रबल धारा बहती हुई दिखायी देती है। हम यह कह सकते हैं कि वीरकाव्य का जो स्पष्ट

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

रूप हमें रीति युग में मिलता है, वह किसी भी युग में नहीं । वास्तव में रीति-युग ने वीरकाव्य की रचना में सबसे महत्वपूर्ण योग दिया है । उसका कारण यह है कि यह समय एक साथ ही युद्ध और विलासिता का युग था । दैनिक जीवन में विलासिता की प्रवृत्ति छायी हुई थी । विलासिता के अधिक से अधिक साधन जुटाने में एक दूसरे से संघर्ष और टक्कर हो जाना भी स्वाभाविक था । अतः युद्ध उसके परिणाम थे । युद्ध का दूसरा कारण अत्याचार एवं अधर्म का विरोध था । इस दूसरे प्रकार के कार्य में जो वीरता का भाव इस युग में जाग्रत हुआ था, उसका वर्णन करने वाले कवियों में हमें अधिक ओज तथा उदात्त तेज के दर्शन होते हैं । इसलिये हम देखते हैं कि औरंगजेब के अत्याचार का विरोध और शिवाजी की वीरता का वर्णन करने वाले भूषण तथा अलाउद्दीन के अन्याय से टक्कर लेने वाले हमीर का गुणगान करने वाले जोधराज और चन्द्रशेखर वाजपेयी की रचनाओं में जो उदात्त प्रभाव दिखायी पड़ता है, वह केवल अपने आश्रयदाता के रूप में किसी राजा की प्रशंसा करने वाले कवियों की रचनाओं में नहीं दिखलायी देता । मुख्यतः इस युग का वीर-काव्य प्रसिद्ध वीरों जैसे शिवाजी, क्षत्रसाल या हम्मीरदेव आदि के वीरतापूर्ण कार्यों एवं इनके ओजतेजमय व्यक्तित्व एवं चरित्र-वर्णन के रूप में है या फिर उस समय घटित युद्धों के वर्णन के रूप में दिखायी देता है। यद्यपि प्रथम प्रकार के वीर काव्यों का अधिक स्थायी प्रभाव है, फिर भी द्वितीय प्रकार के काव्यों का भी ऐतिहासिक एवं सामाजिक महत्व है ।

यों तो वीरकाव्य प्रसंगवश लिखने वाले कवियों की संख्या काफी अधिक है, क्योंकि रीतिकवियों तक ने अपने लक्षण ग्रंथों में वीररस तथा ओजगुण के उदाहरण प्रस्तुत करते हुए वीररस की रचनाएँ की हैं, परन्तु वीरकाव्य धारा के अन्तर्गत आने वाले प्रमुख कवियों और उनकी रचनाओं के नाम हैं—भूषणकृत शिवराज भूषण, शिवाबावनी एवं छत्रसालदसक मानकवि कृत राज-विलास, लालकवि कृत छत्रप्रकाश, श्रीधर कृत जंगनामा, सूदन कृत सुजानचरित्र, हरिकेश कृत जगतसिंह दिग्विजय, जोधराज कृत हम्मीर रासो तथा चन्द्रशेखर वाजपेयी कृत हम्मीर हठ । कविवर पद्माकर यद्यपि शृंगारी कवि के रूप में हैं, फिर भी, उनकी हिम्मत बहादुर विरुदावली वीरकाव्य का उत्तम उदाहरण है।

रीतियुगीन वीर काव्यधारा के कवि प्रायः सुविख्यात हैं, अतः इनके परि-

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

चय देने की यहाँ आवश्यकता नहीं प्रतीत होती है। मैं समझता हूँ कि केवल उनके वीरकाव्य के कुछ नमूने ही इस प्रसंग को पूर्णतया हृदयंगम कराने के लिए पर्याप्त होंगे। सबसे पहले हम कविनायक भूषण को लेते हैं। भूषण ने अपने वर्णनों में जो व्यक्तित्व, चारित्र्य एवं घटनाचक्र का सजीव रूप प्रस्तुत किया है उसे पढ़कर कभी-कभी दुःख होता है कि ऐसे प्रतिभासम्पन्न कवि ने कोई प्रबन्ध-काव्य क्यों नहीं लिखा? शब्दों के निर्माण तथा शब्दों के चयन-संयोजन की उनमें विलक्षण शक्ति थी। शब्द-प्रभाव के सहज स्फूटित विवेक के कारण भूषण की रचना में भाव का वर्णन न होकर भावाभिनय होने लगता है। प्रमाणस्वरूप एक छन्द है—

बाने फहराने घहराने घण्टा गजन के,
नाहीं ठहराने रावराने देस-देस के।
नग भहराने, ग्राम नगर पराने सुनि,
बाजत निसाने शिवराज जू नरेस के।
हाथिन के हौदा उकसाने कुंभ कुंजर के,
भौन कौ भजाने अलि छूटे लटकेस के।
दल के दरारे हूते कमठ करारे फूटे,
केला के से पात बिहराने फन सेस के।

वीरकाव्य-धारा के अन्य कवियों के युद्ध-वर्णन ही प्रायः अधिक महत्व के हैं। इन कवियों को प्रधान विशेषता अतिशय विवरण देने की है। जैसा कहा जा चुका है कि इनका सामाजिक, ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक महत्व विशेष है। सूदनकृत "सुजान चरित" में तो वस्तुओं का ककहराक्रम से (वर्ण के अनुसार) परिगणन किया गया है जिसका नामोल्लेख के अतिरिक्त कोई महत्व नहीं। युद्ध-वर्णन भी ध्वन्यात्मक शब्दों की खिलवाड़ जान पड़ती है—

रथ धुन्धकाक्र धुन्धर धडड धुंकट धननन्नं।
धर धूम धाम धड़ाक धद्धर धूम डट्टय बनननं।
ममकार मम्मड मडडडं मंकात भग्गत मनूननं।
कहु सननन्नं कहुं खननन्नं कहुँ झननन्नं कहुं ठनननं।।

इस छन्द में शस्त्रास्त्रों की युद्धान्तर्गत ध्वनियों का यथार्थ वर्णन अवश्य है, पर उसमें युद्ध की गम्भीरता और भय या उत्साह को प्रेरित करने की सामर्थ्य

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

नहीं। पद्माकर की हिम्मत बहादुर विरदावली में यद्यपि युद्ध-क्रिया का अधिक सजीव रूप प्रकट हुआ है, फिर भी भाव-संचारकता के स्थान पर तटस्थ दर्शन की ही विशेषता अधिक दिखलायी देती है, जैसे—

गहि-गहि हय लटकैं दिशिदिशि भटकैं भूपर पटकैं नहि अटकैं।
पाइन सों पीसैं अदिगन मीसैं जबसे दीसैं नहि भटकैं।
प्रति गजन उठेलैं दंतन ठेलैं ह्वै भटमेल जो करैं॥

इसमें घोड़ों और हाथियों के युद्धों का वर्णन है। छन्द सहज गति से चलने वाला है।

इस प्रसंग में हरिकेश के कुछ छन्द ओज और वीरता की सृष्टि करने वाले हैं। छत्रसाल की प्रशंसा में लिखा उनका एक छन्द दृष्टव्य है :—

डहडहे डंकन को सबद निसंक होत,
बहबही सुत्रन की सेना अति सरकी।
हाथिन के झुण्ड मारु राग को उमंड इते,
चंपत को नंद चढ्यो, उमडि समर की।
कहै हरिकेस काली ताली दे नचत ज्यों-ज्यों।
लाली उछरत छत्रसाल मुखवर की।
फरकि-फरकि उठैं बहैं अस्त्र बाहिबे को,
करकि-करकि उठैं कड़ी बखतर की।

भ्रम में पड़ने की आवश्यकता नहीं, यह कविता रीतियुग की है।

रीतियुगीन संतकाव्य

अब हम प्राचीन वैदिक साहित्यरूपी हिमगिरि-शैलश्रृंग के अदृश्य स्रोत से उद्भूत भक्तियुग रूप मैदान खंड के हरिद्वार से प्रकट होने वाली भक्ति-काव्य-गंगा का परिचय दे रहे हैं जो इस युग के विशाल भूभाग में शतधार होकर अनेक प्रकार की क्षुद्र-विशाल सविकार निर्विकार, साकार निराकार धाराओं को समेट कर बहती हुई दिखलाई देती है। इस भक्ति-काव्यगंगा का इस युग में विशाल विस्तार दिखाई देता है। पूर्ववर्ती युग को हम भक्तियुग इसलिए कहते हैं कि उसमें इस युग की भक्तिकाव्यधारा के गंगोत्री, जमनोत्री जैसे उद्गम स्थान हैं। निर्गुण और सगुण भक्तिकाव्य धाराओं के उद्गमकर्ता या प्रवर्तन कर्त्ता कबीर, जायसी, सूर, तुलसी का

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

सम्बन्ध जिस युग से है, उसे ही भक्तियुग कहना चाहिए। परन्तु यह सत्य है कि इनके द्वारा प्रवर्तित सन्त, प्रेमाख्यान, कृष्णभक्ति एवं रामभक्ति काव्यधाराएँ रीतियुग में आकर असीम विस्तार को प्राप्त हुईं। इतना ही नहीं ये विभिन्न संप्रदायों एवं पंथों की शाखा-प्रशाखाओं में भी विभक्त होकर बहुविध रूप में इस युग में दिखलायी देती हैं। इन विभिन्न भक्तिकाव्यधाराओं का विशेष परिचय देने की आवश्यकता नहीं है। केवल इनके विस्तार और प्रसार का अनुमान जिससे लगाया जा सके, उतना ही कहना है।

संतकाव्यधारा अनेक पंथों एवं संप्रदायों में प्रसरित देखी जाती हैं जिनमें से कुछ महत्त्वपूर्ण नाम हैं—कबीर पंथ, नानकपंथ, दादूपंथ, निरंजन संप्रदाय, बावरी पंथ, सतनामी पंथ, शिवनारायणी पंथ, प्राणनाथी राधास्वामी मलूकदासी पंथ आदि। इनमें से एक-एक पंथ के अन्तर्गत अनेक सन्त कवि हुए हैं जिनमें से सहस्रों छन्दों की रचना करने वाले कम नहीं हैं। अपनी साधना को प्रेरणा देने वाली बानियों के अतिरिक्त जिनकी वाणी काव्य की दृष्टि से भी महत्त्वपूर्ण है, ऐसे सन्तों की भी कमी नहीं। सुन्दरदास, रज्जब, यारी, पलटू, मलूकदास, जगजीवनदास, चरनदास, शिवनारायण, तुलसी साहेब आदि अनेक सन्त अपनी वाणी के प्रभाव का जादू रखने वाले कवि ही थे। इनके सम्बन्ध में तो हम बहुत कुछ जानते भी हैं, परन्तु एक संप्रदाय ऐसा है जिस के सम्बन्ध में प्रायः बहुत कम जाना गया है। यह है निरंजन संप्रदाय। ओरियण्टल कांफरेन्स के तिरुपति अधिवेशन में स्व० डॉ० पीताम्बरदास बड्थवाल ने हिन्दी शाखा के अध्यक्ष पद से भाषण करते हुए इस संप्रदाय के उन हिन्दी कवियों का पहले पहल उल्लेख किया था जिन बारह निरंजिनी कवियों का विवरण राघवदास ने अपने भक्तमाल (संतमाल) में दिया है। निरंजन संप्रदाय के कवियों में हरिदास, तुलसीदास, सेवादास, मनोहरदास, कान्हडवास आदि विशेष प्रसिद्ध हैं। प्रथम तीन की तो सहस्रों की संख्या में वाणियाँ उपलब्ध हैं। इस प्रकार कबीर, नानक, दादू, जैसे कुछ कवियों द्वारा प्रवर्तित संतकाव्य धारा का कितना विपुल विस्तार रीतियुग में आकर हुआ, इसका अनुमान ऊपर के संक्षिप्त उल्लेख द्वारा भी सहज ही लगाया जा सकता है।

रीतियुगीन प्रेमाख्यानकाव्य

यही दशा प्रेमाख्यान काव्य की है। प्रेमाख्यान काव्य में निराकार ईश्वर की उपासना और साधना का संकेत कथा द्वारा देकर प्रेम,

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

की सर्वोपरि महत्ता बताई गयी है। इस धारा के तीन कवि कुतुबन मंझन और जायसी हमें भक्तियुग में प्राप्त होते हैं, परन्तु रीतियुग में आकर इस धारा ने भी असीम विस्तार प्राप्त किया और अनेक महत्वपूर्ण कवियों ने अनेक ग्रंथ उसी पद्धति पर लिखकर हमारे हिन्दी साहित्य के भंडार को समृद्ध किया। प्रेमाख्यान काव्यधारा की दो शाखायें दिखलायी देती हैं–एक तो शुद्ध प्रेमाख्यानों की ओर दूसरी रूपकात्मक प्रेमाख्यानों की। भक्ति संकेत रूपकात्मक प्रेमाख्यानों में मिलता है। परन्तु इस युग में रचे गये शुद्ध प्रेमाख्यानों की भी एक बड़ी लम्बी संख्या है जिनमें से कुछ महत्वपूर्ण नाम हैं—केसकवि, हंसकवि, बोधा, जनकुंज, गणपति, दामोदर आदि। रूपकात्मक प्रेमाख्यानों का इस युग में अधिक विस्तार हुआ। अनेक प्रेमकथाओं के माध्यम से इस धारा के कवियों ने प्रेमभावना और सूफी सिद्धान्तों का प्रचार किया। रीतियुग में इस सूफी प्रेमाख्यानकारों के लिये यद्यपि आदर्शरूप ग्रंथ जायसी का पद्मावत ही रहा, फिर भी अनेक कवियों ने बहुसंख्यक ग्रंथों में जोरदार रचनायें प्रस्तुत की हैं। इन कवियों में प्रमुख हैं–जानकवि, कासिमशाह, सूरदास, दुखहरनदास, नूरमुहम्मद, शेख निसार आदि। रीतियुग के पश्चात् आधुनिक काल में भी यह परम्परा चलती रही। जानकवि ने जहाँगीर, शाहजहाँ और औरंगजेब—तीन बादशाहों का समय देखा था। इन्होंने ७० ग्रंथों की रचना की थी जिनमें से २१ प्रेमाख्यान थे। इनमें से प्रसिद्ध हैं कनकावति, कामलता, मधुकरमालति और छीता। इन ग्रंथों में जानकवि ने ललित शैली में काव्यरचना की है। उदाहरणार्थ "छीता" ग्रंथ में नायिका का वर्णन करते हुए उन्होंने लिखा है—

अजहूँ कली फूल नहिं भई। रूप बास तौऊ जग छई।
सादे वसन सेत ही अंग। तामैं वदन कमल मधि गंग।
सेतवसन उज्ज्वल वदन, देखत बढ़त अनंद।
कहत जान सोहत सुभग, मनहुँ चाँदनी चंद॥

कासिमशाहकृत "हंसजवाहर" भी प्रसिद्ध रचना है। इसी प्रकार सूरदास कृत "नलदमन", दुखहरनदास कृत "पुहुपावती", नूरमुहम्मदकृत "इन्द्रवती अनुराग बाँसुरी" तथा शेख निसारकृत "यूसुफ जुलैखा" सुन्दर रचनायें हैं जिनमें प्रेमकथायें अवधी भाषा में दोहा शैली में वर्णित हुई हैं। इन रचनाओं

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

में संयोग और वियोग दोनों ही प्रकार के श्रृंगार का वर्णन हुआ है, परन्तु संयोग की अपेक्षा वियोग का वर्णन अधिक मर्मस्पर्शी है। इनमें रूपक के आधार पर निर्गुण परमात्मा के प्रति प्रेमोपासनामय साधना का उपदेश दिया गया है।

वास्तव में रीतियुग, निर्गुणोपासना से अधिक सगुणोपासना के लिए उपयुक्त था। हिन्दूमुस्लिम दोनों ही धर्मभावनाओं को समन्वित साधना का मार्ग बताने के लिए ही विशेषरूप से ईश्वर के निराकार स्वरूप का सांकेतिक उद्घाटन संत एवं सूफी काव्यधाराओं में मिलता है। परन्तु इस युग में आकर इन निर्गुणोपासक धाराओं में भी सगुण स्वरूप अधिक स्पष्ट होता दिखाई देता है। तुलसी और सूर की रचनाओं के प्रभाव स्वरूप सन्तकाव्यधाराओं में भी अवतार तथा देवी-देवताओं पर आस्था के भाव दिखलाई देते हैं जो कि पूर्ववर्ती तथा इस युग की सगुणोपासक भक्तिकाव्यधारा का प्रधान प्रतिपाद्य था।

रीतियुगीन कृष्णभक्तिकाव्य

रीतियुग में कृष्णभक्तिकाव्य का भी विभिन्न कृष्णोपासक सम्प्रदायों के माध्यम से बहुविध विस्तार हुआ। इन सम्प्रदायों में प्रधान वल्लभ सम्प्रदाय, राधावल्लभ सम्प्रदाय, हरिदासी सम्प्रदाय हैं। इनके अंतर्गत अनेक भक्तकवियों ने असंख्य पदों की रचना की जो कवित्व एवं भक्तिभावना दोनों ही दृष्टि से अत्युत्कृष्ट हैं। कृष्णोपासक संप्रदायों का भक्ति के प्रचार और प्रसार में जो योग है, वह तो है ही, परन्तु इस युग के ललित काव्य की रचना में भी उनकी देन बड़ी महत्वपूर्ण है। विभिन्न कृष्णोपासक संप्रदायों के कवियों में अधिक प्रमुख व्यक्तित्व हैं—ध्रुवदास, नागरीदास, चाचा हितवृन्दावनदास, सुन्दरि कुँवरि, बख्शी हंसराज, ब्रजवासीदास, मंचितकवि, हठीजी आदि। इन कवियों ने असंख्य ललित छन्दों और पदों की रचना की। कृष्णकाव्य के विशाल साहित्य को देखकर ऐसा लगता है कि जैसे कृष्ण के रूप-सौन्दर्य, लीलाविलास तथा माधुर्यभाव ने इन कवियों के हृदयों में काव्य का अजस्र स्रोत प्रवाहित कर दिया था और ये अनवरत अशिथिल रूप से अपने आराध्य कृष्ण-राधा की रूपमाधुरी एवं ललितलीलाओं का वर्णन करते हुए भी कभी

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

न अघाते थे। ध्रुवदास ने चालीस ललित ग्रंथों की रचना की। नागरीदास का काव्य अतिप्रख्यात था। इनकी प्रेमरस से सराबोर रचनाओं को पढ़ते ही हृदय निमग्न हो जाता है। चाचा हितवृन्दावनदास तो असंख्य पदों के रचयिता थे। कहा जाता है कि इन्होंने चार लक्ष पद रचे जिनमें से डेढ़लक्ष पदों के अनेक संग्रह अब भी छतरपुर राजपुस्तकालय में मिलते हैं। मैंने छतरपुर में इनके कुछ संग्रहों को देखा भी है। इनके एकही ग्रंथ 'प्रेमनंद सागर' में अप्रकाशित ५७७५ पद हैं। इससे इनकी रचना के बहुसंख्यक होने का अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है। पर रचना का आधिक्य उनके काव्य गुण को बाधित नहीं कर सका है।

सुन्दरि कुँवरिबाई नागरी दास की वहिन थीं। इन्होंने ११ ग्रंथों की रचना की थी। इनकी रचना भी काफी सुन्दर होती थी। एक छन्द उदाहरण के लिए यहाँ पर दे रहे हैं—

श्याम रूप सागर मैं नैन वारपार थके,
नचत तरंग अंग-अंग रंगमगी है।
गाजन गहर, धुनि बाजन मधुर बेनु,
नागिनि अलक जुग सोंधै सगबगी है।
भँवर त्रिभंगताई पानिप लुनाई तामैं,
मोती मनि जालन की जोति जगमगी है।
काम पौन प्रबल धुकात लोपी पाल तामैं,
आज राधे लाज की जहाज डगमगी है।

ब्रजवासीदास का "ब्रजविलास" तो अत्यंत प्रसिद्ध ग्रंथ है और मानस के समान दोहा चौपाइयों में यह ब्रजलीलाओं के लिये पढ़ा जाता है। कवि मंचित का प्रसिद्ध ग्रंथ कृष्णायन है। इसकी रचना भी बड़ी ललित है। "मंचित" एक उत्कृष्ट कोटि के कवि थे। इनके काव्य में ललित शब्द-योजना एवं उक्तिचमत्कार प्राप्त होता है। उदाहरणार्थ एक छन्द है, जो अक्षयतृतीया के अवसर पर पीपल पूजने के प्रसंग पर लिखा गया है——

तुम नाम लिखावति हौ हम पै, हम नाम कहौ कहा लीजिये जू।
जब नाव चलैं सिगरी जल में न थल में न चलै कहा कीजिये जू।
हम कवि मंचति औसर जो अकती सकती हम पै नहिं कीजिये जू।
हम तौ अपनो वर पूजति हैं, सपने नहिं पीपर पूजिये जू।

5312

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

इस छन्द में पातिव्रत भाव के साथ-साथ एक सांस्कृतिक झांकी भी प्रस्तुत की गयी है। कृष्णोपासक कवियों का पदसाहित्य भी बड़ा ही भावपूर्ण एवं सरस है।

रीतियुगीन रामभक्तिकाव्य

रीतियुग में रामकाव्यधारा का भी प्रचुर विकास हुआ। पर यह रीतियुगीन रामकाव्य रसिक सांप्रदायिक है, रामायण अथवा गोस्वामी तुलसीकृत रामचरितमानस की पद्धति पर चलनेवाला नहीं। इस युग में रसिक परंपरा के कवि ही अधिकांश में मिलते हैं। दो-एक नाम ऐसे अवश्य हैं जिन्होंने अपने ग्रंथों में रामकथा का मर्यादावादी रूप प्रकट किया है। यथा गोविन्दसिंह ने 'गोविन्द रामायण' में, सरजूराम पंडित ने 'जैमिनिपुराण' में, मधुसूदनदास ने "रामाश्वमेध" में तथा महाराज विश्वनाथ सिंह ने 'आनंद रघुनंदन नाटक' और 'आनंद रामायण' में। परन्तु इनके अतिरिक्त जो रसिक संप्रदायी कवि हुए उनमें से प्रसिद्ध नाम हैं—रामप्रियाशरण, जानकी रसिक अली, ललकदास, जनकराजकिशोरशरण, प्रेमसखी, रसिक बिहारी, रघुनाथदास, हेमलता। रघुनाथदास, रामसनेही, बनादास आदि। रीतियुग के इन रामोपासक कवियों ने अधिकांश में रसिक रूप से कवितायें लिखी हैं अर्थात् राम का लीलापुरुषोत्तम रूप इनके सामने रहा है, मर्यादा पुरुषोत्तम रूप नहीं। इसका कारण यह है कि इस परंपरा के रामोपासक कवियों के सामने मुख्य लक्ष्य सांप्रदायिक उपासना का था। इनकी साधना अधिकांशतः वात्सल्य या माधुर्य भाव की दिखलाई देती है। सामाजिक एवं लोकदृष्टि का अभाव इनकी रचनाओं में मिलता है जो गोस्वामी तुलसीदास की मर्यादावादी रचनाओं का प्रमुख स्वर था। ऐसा कहा जा सकता है कि इस संप्रदाय पर कृष्णोपासक रसिकसंप्रदायों का प्रभाव पड़ा और मंदिर या मठों से संबंधित सांप्रदायिक रामोपासक साधना भी उसी पद्धति पर ढलकर बह चली जिसपर कृष्णोपासना चल रही थी। यह भी कहा जा सकता है कि कृष्णभक्तिकाव्य की माधुरी ने लोगों को इतना अधिक आकृष्ट किया कि मर्यादा-वादी राम के स्वरूप में भी रसिकता का समावेश हो गया और इन कवियों ने भी रामलला और जनकलली के रूपलावण्य तथा लीलाविलास के पद गाना ही अपना कर्त्तव्य समझा। इसका कारण यह समझा गया कि

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

मर्यादावादी राम का रूप उतना सरस न था जिसमें मनोरमता का पूर्णतया संचार हो सकता । परन्तु बात ऐसी नहीं है । वास्तव में हमें गोस्वामी तुलसीदास को इस परम्परा के काव्य में अपवाद के रूप में स्वीकार करना चाहिए । उन्होंने देश, काल और समाज की आवश्यकता के अनुसार रामचरित के उदात्त और आदर्श स्वरूप का चित्रण किया है जो जीवन के स्वस्थ तत्वों को उभार कर समाज के विकसनशील तन्तुओं के संगठन एवं संयोजन द्वारा जीवन को परिपूर्णता की ओर अग्रसर करता है । तुलसी के रामचरितमानस के युगान्तर स्थायी प्रभाव और महत्व का यह एक कारण है । हम यह कह सकते हैं कि इस युग की रामकाव्यधारा युगीन श्रृंगारिक चेतना से बच न सकी । उसका रसिक साम्प्रदायिक रूप फिर प्रकट हो गया ।

रीतियुगीन नीतिकाव्य

नीतिकाव्य मुक्तक काव्य के रूप मे विशेष पल्लवित हुआ । यद्यपि हम अन्य रचनाओं के बीच-बीच भक्तियुगीन काव्यों में भी नीतिमुक्तकों को पाते हैं, पर नीतिमुक्तकों की रीतियुग में एक विशिष्ट प्रकार की परम्परा का निर्माण हुआ और इन नीति मुक्तकों का छन्दसिक माध्यम दोहा, कुण्डलियाँ और छप्पय विशेष रूप से बने । इस युग के नीति मुक्तकों में यथार्थ जीवन के वास्तविक अनुभव के निचोड़ के रूप में हमें ऐसे छन्द मिलते हैं जो वैयक्तिक, सामाजिक अथवा धार्मिक आचरण के विधि-निषेधमय सूत्र हैं । इनमें प्रायः हमें एक प्रकार का स्मरणीय आचरण शास्त्र प्राप्त होता है । इन नीतिकारों की रचनाओं जीवन के अनुभवों का प्रकाशन उपदेश रूप में भी हुआ है और अपनी बीती के रूप में भी । अतएव प्रायः प्रत्येक नीतिकार की रचना अपनी निजी विशेषता से ओतप्रोत है । इस काव्यधारा में बड़ी रोचकता से अवगाहन कर हम दैनिक जीवन सागर में सन्तरण का अभ्यास तथा साहस प्राप्त करते हैं । अपने अनुभवों को सरस संक्षिप्त रूप में अन्योक्ति, प्रतीक या रूपकात्मक शैली में रखकर इन कवियों ने समाज का विशेष उपकार किया है । हिन्दी साहित्य के "रीतियुग" में इस नीतिमुक्तक परंपरा का सुन्दर विकास हुआ है । इस परम्परा के कुल महत्वपूर्ण कवियों का यहाँ संक्षिप्त परिचय देना अभीष्ट होगा ।

नीतिकार कवियों में छत्तीसगढ़ के गोपाचन्द्र मिश्र का नाम उल्लेखनीय है । इन्होंने अनेक ग्रंथों की रचना की । इनका "खूब तमाशा" नामक ग्रंथ

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

बड़ा मनोरंजक है। चारों दिशाओं के दुःखों-सुखों का इनका वर्णन बड़ा रोचक और स्मरणीय है। इनके नीति संबंधी अनेक छन्द अति प्रसिद्ध हैं। किसान के काम और उसके कठिन जीवन पर प्रकाश डालता हुआ इनका एक छन्द इस प्रकार है :—

कारी होत देह सहै सीत घाम मेह,
नित रहै लेह देह सुख नहीं खानपान को।
ईति भीति से उदास गिरिमान नयमान को।
राजै देत पोता हरजोता खूब सोता,
नहि खोता दिन यों ही रहै लेस न सयान को।
देह में न चाम रहै हाथ में न दाम,
याते कहत "गुपाल" काम कठिन किसान को।

इस युग के अन्य नीतिकार कवियों में वृन्द, बैताल, घाघ, गिरिधर, सम्मन और दीनदयाल गिरि के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं।

वृन्दकवि के नीति संबंधी दोहे अति प्रसिद्ध हैं। शुद्ध नीति की दृष्टि से वृन्दसतसई अपना विशिष्ट स्थान रखती है। बैताल के छप्पय, लोकनीति की जोरदार सूक्तियों के रूप में प्रख्यात हुए। "टके" पर प्रसिद्ध छप्पय इन्हीं का है जिसकी दो पंक्तियाँ हैं :—

अब एक टके बिन टकटका लगो रहत नित राति दिन।
बेताल कहैं बिक्रम सुनो धिक जीवन एक टेक बिन॥

वेताल की टके वाली उक्ति आज भी उतनी ही सत्य है। घाघ की घरेलू ग्रामीण किसानी नीति की सूक्तियाँ, ग्राम्य किसानों के बीच कृष्टि और आचार शास्त्र का काम करती हैं। अपनी कहावतों में घाघ किसी को भी नहीं छोड़ते। एक उदाहरण देखिये :—

आलस नींद किसानै नासै, चोरै नासै खाँसी।
अँखियाँ लीबर बेसवै नासै, बाबै नासै दासी॥

कहावत कितनी सटीक है। वृन्द कवि के समान ही गिरिधर कविराय अपनी कुण्डलियों के लिए अति प्रसिद्ध हैं। गिरिधर की कुण्डलियों में व्यापक और गहरी नीति की बातें कही गयी हैं, जो बड़ी जीवनोपयोगी हैं। इनके छन्दों में गृह्य नीति, समाजनीति, राजनीति सभी की बातें आ जाती हैं। सम्मन

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

कवि वृन्द के समान अपने नीति के दोहों के लिए प्रसिद्ध हैं, परन्तु जहाँ पर वृन्द ने संस्कृत के हितोपदेश, चाणक्य नीति, विदुरनीति जैसे ग्रंथों से अपनी सूक्तियाँ जुटाई हैं, वहाँ सम्मन ने अपने निजी जीवन अनुभवों का निचोड़ प्रकट किया है। वे कहते हैं :--

सम्मान चहु सुख देह को तौ छोड़ौ ये चारि ।
चोरी चुगली जामिनी, और परायी नारि ।।

नीतिकार कवियों में गिरधर के समान ही, वरन् उनसे भी अधिक जोरदार सूक्तियाँ दीनदयाल गिरि की अन्योक्तियों में मिलती हैं। गिरि एक बड़े ही प्रतिभा सम्पन्न कवि थे। इनकी रचनाओं में अनुभव और पाण्डित्य की विदग्धता के साथ-साथ उक्ति की मधुराई भी विद्यमान रहती है। वे कहते हैं:--

हरि के सुमिरे दुख सबै, लघु दीरघ अघ जाँहि ।
जैसे केहरि भूरि भय, करि मृग दूरि पराँहि ।
पूजत लोग मलीन को, पावन जन पूजें न ।
कर्ण घ्राण सुबरन लसै, लेपत कज्जल नैन ।

इनकी अन्योक्ति कल्पद्रुम की कुण्डलियाँ तो अत्यन्त ही प्रसिद्ध और लोकप्रिय हैं। दीन दयालगिरि बहुरस-सिद्ध कवि थे। हम प्रायः उन्हें नीतिकार कवि के रूप में ही जानते हैं, परन्तु उनकी श्रृंगार और भक्ति की रचनाएँ भी बड़ी सुन्दर हैं। "अनुरागबाग" नामक ग्रंथ का एक छन्द देखिए :--

फुही फुहा बूँद झोर वारिवाहन ते,
कुहू-कुहू सुनि परै कूक कोकिलान की ।
ताही समय स्याम झूलते हिंडौरे चढ़े,
वारौं छवि कोटिन में रति पंचवान की ।
कुण्डल लटक सोहै भृकुटी मटक मोहै,
अटक चटक पट पीत फहरान की ।
झूलत समै की सुधि भूलत न हूलति री,
उझुकनि झुकनि झकोरनि भुजान की ।।

रीतियुगीन हास्य-व्यंग्यविनोदकाव्य

नीतिकाव्य धारा के समान ही "हास्यव्यंग विनोद" काव्यधारा भी इस

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

युग में बहती दिखाई देती है जो इस बात की द्योतक है कि इस युग का साहित्य एकांगी न होकर जीवन के विविध पक्षों के स्पर्श द्वारा प्रस्फुटित होने वाला साहित्य था। अध्यात्मिक साधना का वातारण होते हुए भी जीवन के भौतिक पक्ष के प्रति उदासीनता न थी। इस पक्ष का खिलता-फूलता रूप जिसमें जीवन की मौज-मस्ती, हास्य विनोद की छटा छिटकी हुई है, इस युग के काव्य में कम नहीं है। पर्याप्त सूक्तियाँ तो नीतिकारों के मुक्तकों में मिलती हैं, परन्तु इसके अतिरिक्त, हुक्के की प्रशंसा, घोड़ों की पहचान, सूम की निन्दा खटमल, भंड़ौए आदि से सम्वन्धित कविताएँ भी काफी संख्या में मिलती हैं। वेनी कवि के भंड़ौए प्रसिद्ध हैं। इनके भंड़ौओं में हास्य की फुहार के साथ-साथ व्यंग्य के तीखे छीटे मिलेंगे। वावा लालकदास जो रामभक्ति परम्परा में रसिक सम्प्रदाय के कवि थे, अपने भक्तजनों में स्त्रियों को विशेष प्रोत्साहन देते थे। बेनी कवि की दृष्टि इन पर पड़ी और झट से एक छन्द का तीर उन्होंने छोड़ ही दिया जिसकी नोक इस प्रकार की है :—

बाजे बाजे ऐसे डलमऊ में बसत जैसे,
मऊ के जुलाहे लखनऊ के ललकदास।

मऊ के जुलाहे अपने-अपने छैलापन के लिए प्रसिद्ध थे, उन्हीं की कोटि में बावा ललकदास भी आ गये। कवि किसी को नहीं छोड़ते। लखनऊ की सड़कों पर कीचड़ जम गई थी। पता नहीं वेनी कवि का घोड़ा या बैल उस कीचड़ में फँसा या नहीं, पर उन्होंने छन्द बना ही डाला—

गड़ि जात बाजी औ गयन्दगन अड़िजात,
शुतुर अकड़ि जात मुश्किल गऊ की।
बावन उठाय पाँव धोखे जो धरत,
होत आप गडकाब रहि जात पाग मऊ की।
बेनी कवि कहैं देखि थर-थर काँपै गात,
रथन को पथ न विपति बरदऊ की।
बार बार कहत पुकारि करतार तोसों,
मींचु हू कबूल पै न कीच लखनऊ की।

इसी प्रकार अली मुहिबखाँ प्रीतम ने जो आगरे के निवासी थे, "खठमलवाइसी" नामक एक हास्यप्रधान ग्रंथ लिखा जिसमें खटमलों के प्रभाव

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

और आतंक का बड़ा विनोदपूर्ण एवं रोचक वर्णन किया गया है। 'खटमल बाईसी' का एक छन्द देखिये—

जगत के कारन करन चारौं वेदन के,
कमल में बसैं वे सुजान लान धरि कै।
पोखन अवनि दुख सोखन तिलोका के,
समुद्र में जाय सोवैं सेज सेस करि कै।
मदन जरायो औ संहारै दृष्टि ही मैं,
सृष्टि बसे हैं पहार बहू भजि हरबारि कै
बिधि हरिहर बड़ौ इनतेन कोऊ तेऊ,
खाट पै न सोवैं खटमलन सों डारि कै।

इसी प्रसंग में एक सूम कंजूस का भी व्यंग्यपूर्ण वर्णन पठनीय है—

पौर मैं किवार देत, घरै सबैं गारि देत,
साधुन को दोष देत प्रीति न चहत हैं।
माँगने को ज्वाब देत, बात कहे रोय देत,
लेत देत माँज देत ऐसे निबहत हैं।
बागै हू के बंद देत, बोरन की गाँठ देत,
परदन की काँछ देत काम में रहत हैं।
ऐंत पै सबेही कहैं लाला कछु देत नाहिं,
लाला जू तौ आठौं जाम देत ही रहत हैं।।

इसी प्रकार के हास्य-व्यंग्य सम्बन्धी अनेक छन्द रीतियुगीनकाव्य में मिलते हैं और इस काव्य-प्रवृत्ति का अपना महत्व है इस प्रसंग में 'पद्माकर' के होली-वर्णन सम्बन्धी हास्यविनोद की अपनी विशेषता है। हम उसे शृंगारिक हास्य कह सकते हैं। "नैन नचाय कही मुसुकाय लला फिरि आइयो खेलन होरी" तो उनका अति प्रसिद्ध छन्द है ही। होली के हुड़दंग के एक ललित दृश्य का विनोदपूर्ण वर्णन 'पद्माकर' द्वारा इस प्रकार प्रस्तुत किया गया है—

ऊधम ऐसो मचो ब्रज मों सब, रंग नरंग उमंगन सींचैं।
दै पिचकारिन छज्जन छत्तिन ह्वै छवि छाजत केसरि कीचैं।
त्यों 'पद्माकर' हौंहुँ गई हुती, पीछे गोपाल गुलाल उलीचैं।
एकै संग जो मैं रपटी सखी वै भये ऊपर मैं भई नीचैं।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

होली का हास्य है, अतः यह वर्णन भी क्षम्य है ।

आचार्य भिखारीदास ने जैसा लिखा है कि "आगे के कवि रीझि हैं तौ कविताई नतु राधिका कन्हाई सुमिरन को बहानों हैं ।" आचार्य वल्लभ ने पहले ही से कह दिया था कि भगवान सर्वभावेन भजनीय है । अतः कवित्व की सिद्धि में भी यह 'राधिका कन्हाई' का स्मरण होता जाये, तो क्या बुरा है । दास जी को अपनी कविताई पर चाहे पूरा भरोसा न हो पर 'राधिका कन्हाई' के सुमिरन से अधिक कविताई ही इनके काव्य में सिद्ध हुई है । आगे के कवि भी काफी समय तक रीझते ही रहे, पर समय की परिवर्तित परिस्थित में हमें कविता का स्वरूप परिवर्तित करना ही आवश्यक था और इसीलिए आधुनिक युग में कविता की धारा ने जबरदस्त मोड़ लिया । परन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि रीतियुगीन कवियों को कविताई को कोई असिद्ध कर सकता है ।

जैसा कि पहले कहा जा चुका है कि इस युग की प्रमुख चेतना शृंगारिक थी, हास्य विनोद के प्रसंग में भी उसका प्रभाव काफी अंश में देखने को मिलता है । गोपी-ग्वाल अथवा कृष्ण-गोपी संवादों की नोक झोंक बड़े रसीले विनोद से सरावोर है । कृष्ण का दान लेना और साँकरी खोर ने दान वसूल करना प्रसिद्ध हो गया था । गोपियाँ दान देती थीं, पर कभी-कभी कृष्ण की काफी खबर भी लेती थीं । इस प्रसंग की नोक झोंक के दो छन्द दृष्टव्य हैं । कृष्ण अकड़कर जोर जताते और दान माँगते हुए कहते हैं—

नंद बबा की सौं मारिहौं सांट, उतारि कै तौ गहनो सब लैहौं ।
भौंह कमान तू काहे चढ़ावति, नैनन डाटे ते हौं न डरै हौं ।
देखत देखत ही कवि "भीषम", ग्वालन पै दधि दूध लुटैहौं ।
गूजरि गाल न मारि गँवारि, हौं दान लिये बिन जान न दै हौं ।

कृष्ण के बचन अशिष्टता भरे थे, फिर भी गोपियाँ डरने वाली नहीं थीं । कृष्ण के इस प्रकार के वचन का मुँहतोड़ उत्तर देती हुई वे कहती हैं—

दानी भये नये माँगत दान हौ जाति है कंस तो बंधन जै हौ ।
टूटे छरा बछरादिक गोधन जो धन है सो सबै धन दै हौ ।
ऐकत हौ बन में रखवानि चलावत हाथ घनौ दुख पै हौ ।
जैहै जो भूषन काहू तिया को तो मोल छला के लला न बिकैहौ ।

दूसरा छन्द यद्यपि रसखान का है जो रीतियुग के प्रारम्भ से कुछ पूर्व आते

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

हैं पर उनके सवैयों में रीति युगीन चेतना का पूर्ण विकास दिखाई देता है। वास्तव में हम यह कह सकते हैं कि रीतियुगीन काव्य चेतना का अन्तरंग भक्तियुग में ही निर्मित हो चला था। सूरदास, नंददास, रसखान, केशव, सेनापति, गंग, ब्रह्म आदि की रचनाओं में रीति-काव्य-धारा के प्रारम्भिक स्रोत देखे जा सकते हैं। आचार्य केशवदास ने इस शुद्ध काव्यधारा को एक शास्त्रीय प्रमाण प्रदान किया और शास्त्रीय लक्षण पद्धति को अपनाकर उसके उदाहरण स्वरूप विविध रसों, अलंकारों, ध्वनि-भेदों आदि के निदर्शन रूप में रीतिशृंगार काव्य की शुभ मधुर मोहक धारा बह चली और इसकी सरस मादक माधुरी ने उस युग में समस्त काव्य-स्वरूपों को प्रभावित कर दिया। यहाँ तक कि भक्ति काव्य भी नायक, नायिका, हावभाव, नखशिख, ऋतुविलास, संयोगवियोग, अष्टयाम आदि की पद्धति पर चलने लगे। इसीलिये इस काव्य-प्रवाह को ही रीतियुग की मुख्य काव्यचेतना के रूप में स्वीकार करना चाहिये।

रीतिशृंगार प्रवाह

रीतियुग में रीतिशृंगार काव्य की रचना अति प्रचुर मात्रा में हुई और कविता को राजाश्रय भी खूब प्राप्त हुआ। तुर्क बादशाहों ने तो प्रायः फारसी कवियों को ही आश्रय दिया था, परन्तु मुगलों के शासनकाल में हिन्दी के, विशेष रूप से ब्रजभाषा कवियों को सामान्य आश्रय प्राप्त हुआ। मुसलिम शासकों के अतिरिक्त हिन्दू राजाओं ने भी ब्रजभाषा के कवियों को आश्रय दिया। उत्तर भारत में ही नहीं, दक्षिण भारत में भी ब्रजभाषा को आश्रय मिला। शाहजहाँ ने सुन्दर कविराज को, औरंगजेब ने कवि वृंद को आश्रय दिया था और वही उसके पुत्र के साथ कलकत्ते भी चले गये थे। उत्तर में कमायूं, श्रीनगर (गढ़वाला), पटियाला के राजाश्रय में भी इस युग के ब्रजभाषा कवियों ने सुन्दर रचनायें कीं। दक्षिण में भी महाराज शाहजी, शिवाजी, शंभाजी आदि ने हिन्दी कवियों को सम्मानित किया। साथ ही गुलबर्ग के संत गेसूराज की शिष्य-परम्परा में अकबरसाहि ने भूषण के बड़े भाई चिन्तामणि को आश्रय दिया था। अधिकांश आश्रय प्राप्त कवियों ने अपने आश्रय दाता राजाओं की प्रशंसा के साथ-साथ लक्षण ग्रंथों का ही निर्माण किया और इस प्रकार प्रायः संस्कृत ग्रंथों के आधार पर छन्द, अलंकार, रीति, गुण नायिकाभेद आदि के लक्षण उदाहरणपूर्ण ग्रंथ अति प्रचुर संख्या में प्रणीत हुए। इन लक्षण ग्रंथों के

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

निर्माण से कवि को दोहरा लाभ हुआ । एक तो यह कि उसने शुद्ध काव्य परम्परा में रचना का अवसर प्राप्त किया और कोरी राज-प्रशंसा अथवा आध्यात्मिक काव्य-रचना से अलग होकर काव्य-रचना की; दूसरा यह कि उसे अपनी विद्वता और प्रतिभा, दोनों को ही एक साथ प्रदर्शित करने का अवसर मिला। इस प्रकार इस युग का काव्य व्युत्पत्ति एवं परिमार्जन दोनों का लाभ प्राप्त करने के कारण उत्कर्ष एवं विदग्ध काव्य है ।

इस परम्परा के कवियों को हम दो रूपों में देख सकते हैं । एक तो वे हैं जिन्होंने लक्षण स्रोत काव्य-ग्रंथ रचे और दूसरे प्रकार के वे कवि हैं जिन्होंने लक्षणों से बंधकर तो रचना नहीं की, पर उनके ध्यान में रसरीति रही अवश्य । अतः दूसरी धारा के "कवि स्वच्छन्द होते हुए भी हैं रीति श्रृंगार प्रवाह के ही कवि, उससे अलग नहीं हैं । लक्षण कवियों में भी हम दो प्रकार के कवि देखते हैं—एक तो आचार्यत्व प्रधान कवि और दूसरे कवित्व प्रधान कवि । आचार्यत्व प्रधान कवियों में चिन्तामणि, सूरति, श्रीपति, दास, सोमनाथ, प्रतापसाहि लछिराम आदि कवि आते हैं, और दूसरे कवित्व प्रधान कवि-वर्ग में मतिराम, भूषण, देव, कालिदास, रसलीन, पद्माकर, ग्वाल आदि कविगण जिनकी रचनाओं में शास्त्रीय वैदग्ध्य की अपेक्षा कविता की क्रांति जगमगाती दिखलायी देती है ।

रीतिमुक्तधारा में हम बिहारी, आलम, रसनिधि, घनानन्द, ठाकुर रामसहाय, दीनदयाल गिरि, विक्रम जैसे कवि आ सकते हैं जिन्होंने रसरीति की अभिज्ञता रखते हुये भी लक्षण के रूप में काव्यशास्त्र का उपयोग नहीं किया । इन कवियों की रचना बड़ी मनोरम है ।

रीतिश्रृंगार प्रवाह के कवियों के पृथक्-पृथक् परिचय अथवा उनके काव्य विवेचन की आवश्यकता यहाँ नहीं प्रतीत होती है । इन कवियों के सम्बन्ध में बहुत कुछ सुविज्ञात है । अतः इस प्रवाह के काव्य की कतिपय विशेषताओं का उल्लेख ही यहाँ पर्याप्त होगा । रीतिश्रृंगार परम्परा के कवियों की सबसे बड़ी देन इनके भाषा-संस्कार के क्षेत्र में देखी जाती है । इन कवियों ने ब्रजभाषा में रचना की जो हिन्दी की एक बोली है । यह भी सत्य है कि ब्रजभाषा के अन्तर्गत विभिन्न प्रदेशीय शब्दावली का भी समावेश हुआ है; जैसे भूषण ने मराठी, बिहारी ने राजस्थानी, चन्द्रशेखर आदि ने पंजाबी अरबी फारसी, दास, रामसहाय, दीनदयाल गिरि ने अवधी के शब्दों का प्रयोग किया है । फिर भी कवियों ने

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

इन शब्दों को ऐसा माँज-घिसकर सुष्ठु एवं सुघर रूप में प्रत्युक्त किया है कि वे भाषा-समृद्धि में सहायक बनकर ही हमारे सामने आये हैं। बिहारी के दो दोहों को देखिए —

छुटी न सिसुता की झलक, झलक्यो जोबन अंग।
दीपति देह दुहून मिलि, दिपति ताफता रंग ॥
सायक सम मायक नचन, रंगे त्रिविध रंग गात।
झखौ विलखि दुरि जात जल, लखि जलजात लजात ॥

ऊपर के दोहों में ताफता फारसी का शब्द है, जो दोहे की भावना और अर्थ के अनुरूप ब्रजभाषा के रूप को धूपछाँही स्वरूप प्रदान कर रहा है। दूसरे दोहे में सायक, मायक शब्द एक वजन के ढाले गये हैं। झखौ अवधी का स्वरूप लिये हुये हैं और "जात जल, जरु जात, लजात" शब्दों में तो यमक के आधार पर विदग्ध कारीगरी दिखाई गयी है। इसी के वजन की पंक्ति बिहारी के एक दूसरे दोहे की यह है—"गात रूप लखि जात दुरि, जातरूप को रूप"। बिहारी के ऐसे पदों में जो शब्दों की पच्चीकारी है उसमें सामने किसी हीरे को काटकर अँगूठी में जड़ने वाले कारीगर की प्रतिभा भी मात हो जाती है जिसके कटाव के कारण श्वेत रंग के हीरे से सतरंगी किरण फूटने लगती हैं। अनेक भावों एवं अर्थों की बहुरंगी किरणें बिहारी, देव, पद्माकर आदि जैसे कवियों के भी विदग्ध काव्य से फूटती हैं। उन्हें प्रस्फुटित करने के लिए भावकता का प्रकाश चाहिए।

शब्द-प्रयोग के प्रसंग में शब्द तत्व के निरपेक्ष प्रभाव और महत्व की सिद्धि भी रीतिकाव्य के रचयिता कवियों की रचना से हो जाती हैं। जहाँ अर्थ की गरिमा से शून्य छन्द केवल वर्णचमत्कार या शब्द-संगठन के बलपर ही हमें आकृष्ट करने की क्षमता रखता है। दो एक उदाहरण द्रष्टव्य हैं —

(१) **रस सिंगार मंजन किये, भंजनु देन।**
अंजन रंजन हू बिना, खंजनु गंजनु नैन ॥

(२) **जलजोर उठी घनघोर घटा ब्रज ऊपर कोप पुरन्दर को।**
कवि पुष्कर गोकुल गोप सबै, निरखैं मुखश्री मुरलीधर को।
धरतें धरिबो धरनीधर को धर क्यों न हिये धरतीधर को।
कर लै जनु कांकर को करको करनाकर को करना कर को ॥

इसी प्रकार शब्दावली के सौन्दर्य के साथ-साथ सुकुमार भाव-सौन्दर्य का संकेत करने वाला 'देव' का एक उपालम्भपूर्ण छन्द भी देखिए :—

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

हौं बनी दूलह वे दुलही, उलही सुख-बेलि-सी केलि घनेरी।
हौं पहिरो पिय को पियरो, पहिरी उनरी चुनरी! चुनि मेरी।
'देव' कहा कहौं, कौन सुनै री, कहा कहे होत कथा बहुतेरी।
जेहरि मेरी धरैं नित जे हरि ते हरि चेरी के रंग रचेरी!

ऊपर के छन्द में दूसरी ओर चौथी पंक्तियों की शब्दावली का गठन द्रष्टव्य है। यह रीति कवियों की शब्द साधना है।

रीतियुगीन रीतिश्रृंगार धारा के कवि वास्तव में आदि से अन्त तक कवि ही हैं, कवि के अतिरिक्त और कुछ नहीं। भक्ति, वैराग्य, नीति उपदेश जो वृद्धावस्था की भावनायें हैं और जो पूर्ववर्ती तथा समवर्ती युग की अन्य धाराओं के साहित्य में परिव्याप्त थीं, उन्हें छोड़कर इन कवियों ने यौवन और सौन्दर्य को अपना विषय बनाया। उन्होंने जीवन के बसन्त पर छन्द लिखे, अतएव स्वाभाविक ही है कि इन कवियों का दृष्टिकोण अन्य कवियों से भिन्न हो। इसी कारण इस प्रवाह की कविता की विशेषताओं में सौन्दर्य एवं भावचेतना, प्रचुर मात्रा में देखने को मिलती है। भक्तिकालीन सौन्दर्य चेतना, नैतिकता एवं आदर्शात्मकता के आकाश में विचरण करती है, परन्तु रीतियुगीन सौन्दर्य चेतना धरती पर के सौन्दर्य-वैभव का चयन और आकलन करने वाली है। अपनी उत्कृष्टता में वह किसी प्रकार कम नहीं, परन्तु उत्कृष्ट होती हुई भी वह अलौकिक सौन्दर्य नहीं, लौकिक सौन्दर्य का वर्णन करती है। यह सौन्दर्य-चित्रण हमारे अनुभव में उतर कर बोलता है। मतिराम लिखते हैं :—

कुंदन को रंग फीको लगे, झलकै अति अंगन चारु गोराई।
आँखिन मैं अलसानि चितौनि मैं मंजु विलासनि की मधुराई।
को बिनु मोल बिकात नहीं, 'मतिराम' लखे अँखियान लुनाई।
ज्यों ज्यों निहारिये नीरे ह्वै नैननि, त्यों-त्यों खरौ निकरै ह्वै निकाई॥

अथवा जब आभूषणों को देह के सहज वर्ण-सौन्दर्य की तुलना में तुच्छ ठहराते हुए लिखते हैं :—

पहिरि न भूषण कनक के, कहि आवत एहि हेत।
दरपन के से मोरचे देह दिखाई देत।
मानहु विधि तन अच्छ छबि, स्वच्छ राखिबे काज।
दृग पग पोंछन को कियो, भूषन पायंदाज॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

तब हम रूप लावण्य का अनुभव करते हैं। इस प्रसङ्ग में रीतिकाव्य के सम्बन्ध में बहुत कुछ कहा जा सकता है। अंग-अंग का वर्णन, प्रकृति और नारी की छवि को जिस बारीक सुघराई से रीतियुगीन काव्य में प्रस्तुत किया गया है, वह अप्रतिम युगीन उपलब्धि के रूप में स्वीकार किया जाना चाहिए। नेत्र, होठ, मुख, कान, कंठ, हाथ, कटि, नितम्ब, अंगुली, एँड़ी, प्रत्येक का सौन्दर्य दर्शनीय है। बिहारी और मतिराम द्वारा वर्णित पैर और ओंठ की ललाई का वर्णन दो दोहों में देखिए। बिहारी कहते हैं:—

पग पग मग आगमन परति, चरन अरुन द्युति झूलि।
ठौर ठौर लखियत उठे, दुपहरिया से फूलि॥
अरुन वरन करनि न परै अमल अधर दल माँझ।
कैधौं फूली दुपहरी, कैधौं फूली साँझ।

इस प्रकार रीतिश्रृंगार काव्य के अन्तर्गत हम सौन्दर्य का मनोरम चित्रण पाते हैं। सौन्दर्य का यह चित्रण स्थिर चित्रण नहीं, वरम् भाव-चेष्टा-युक्त गतिमय रूप है। कुछ छन्द इस बात को सिद्ध कर देंगे:—

झलके पख बनजात से, झके मग बनजात।
अहह दई जल जात से, नैननि तें जल जात॥
नैननि मढ़ि चित चढ़ि रही, वह स्यामा वह साँझ।
झाँकी दै ओझल भई, झकि झरोखे माँझ॥ (रामसहाय)

अनुप्रास की छटा, शब्द-योजना दृष्टव्य है।

इसी प्रकार प्रकृति का वर्णन इसी शैली में देखिये:—

झीने झर झुकि झुकि झमकि, झलनि झाँपि झकझोर।
झुमड घुमड बरसत सघन उमडि घुमडि घन घोर॥ (विक्रमसाहि)

इतना सब रूप चित्रण करते हुए भी समस्त सौन्दर्य जो इन कवियों की चेतना में समाया था, उसका वर्णन ये नहीं कर पाते। जब बिहारी स्वयं लिखते हैं कि:—

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

लिखन बैठि जाकी सबी, गहि गहि गरब गरूर ।
भये न केते जगत के चतुर चितेरे कूर ।।

तब फिर और कवियों की क्या बिसात है ?

रूप-सौन्दर्य-चित्रण की विशेषता के साथ-साथ ही इस धारा के कवियों की रचनाओं में घटनाओं और चेष्टाओं के माध्यम से भाव-चित्रण की अद्‌भुत विशेषता विद्यमान है । किस चित्रण से कैसे भाव का संकेत करेंगे, इसका अनुमान लगाना कठिन है, पर ये चित्रण इतने सूक्ष्म सुकुमार और मर्मस्पर्शी हैं कि सहृदय ही इनका पूर्ण प्रभाव हृदयंगम कर सकता है । कुछ छंद यहाँ दिए जाते हैं:––

अपने अपने सुष्ठि गेहनि में चढ़े दोऊ सनेह की नाव पै री ।
अँगनान में चींजत प्रेम भरे समयो लखि मैं बलि जाँव पै री ।।
कहै ठाकुर दोऊ न की रुचि सों रँग ह्वै उमड़े दोउ ठाँव पै री ।
सखी कारी घटा बरसै बरसाने पै, गोरी घटा नंद गाँव पै री ।।

इस छंद में घरों में सनेह की नाव पर चढ़ना, कारी और गोरी घटाओं का बरसना जैसे पद कितने भाव प्रवण हैं । वर्षा के ही प्रसङ्ग का एक छंद नागरीदास का देखिए :––

भादों की कारी अँध्यारी घटा झुकि बादर मंद फुही बरसावैं ।
राधिका आपनी ऊँची अटा पैं छकी रसरीति मलारहिं गावैं ।।
ता समैं मोहन के दृग दूरि ते आतुर रूप की भीख यों पावैं ।
पौन मया करि घूँघट टारे दया करि दामिनी रूप दिखावैं ।।

रूप की लालसा से प्यासे कृष्ण के ऊपर प्रकृति भी किस तरह दया करेगी, इसे कवि को छोड़कर और कौन समझ सकेगा । संयोग के साथ ही इन कवियों के वियोग-जनित भाव भी कम मार्मिक नहीं । 'देव' का एक छन्द इस प्रसंग में इस प्रकार है :––

सेज भये विष, भावै न भूख न, भूखन भोजन की कछुई छी
"देवजू" देखे करै बध सों मधु, दूध सुधी, दधि माखन छी छी ।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

चंदन तौ चितयो नहिं जात, चुकी चित माँहि चितौनि तिरीछी ।
फूल ज्यों सूल, सिला सम सजे विछौननि बीछी जनु बीछी ।।

इसी प्रकार के मतिराम, घनानंद, पद्माकर आदि कवियों के अनेक छन्द हम देख सकते हैं ।

भाव-सौन्दर्य के समान ही रीतिश्रृंगार धारा का काव्य कल्पना के वैभव से समृद्ध है । बड़ी सटीक मनोरम कल्पनायें इन कवियों के अप्रस्तुत विधान को अलंकृत करती हैं । बिहारी, मतिराम, देव, दास, पद्माकर आदि इस कल्पना वैभव के विशेष धनी हैं । पर इनके अतिरिक्त अन्य कवि भी हैं जिनकी कल्पना बड़े सुन्दर रूप में प्रकट होकर भाव, विचार या तथ्य को हमारे सामने प्रत्यक्ष करती है । इस प्रसंग में अधिक उदाहरण देने की आवश्यकता नहीं क्योंकि अपनी कल्पना के लिये ये कवि अति विख्यात हैं । केवल दो छंद उदाहरण-स्वरूप दे रहे हैं । एक चिन्तामणि का सीता-स्वयंवर का छन्द इस प्रकार है—

हंसन के छौना स्वच्छ सोहत विछौना बीच,
होत गति मोतिन की ज्योति जोन्ह जामिनी ।
सत्य कैसी ताग सीता पूरन सुहाग भरी,
चली जयमाल लै भराल गज गामिनी ।
जोई उर बसी सोई मूरति प्रतच्छ लसी,
चिन्तामनि देखि हँसी संकर की स्वामिनी ।
मनो सरच्चन्द, चन्द मध्य अरविन्द
अरविन्द मध्य विद्रुम विदारि कढ़ी दामिनी ।।

इस छन्द में हँसी की बड़ी बारीक कल्पना की गई है। 'देव' की एक स्थूल कल्पना का स्वरूप इस छन्द में देखिए—

माखन सों मन दूध सो यौवन, है दधि ते अधिकौ डर ईठी ।
जा छवि आगे छपाकर छाछ समेत सुधा बसुधा सब सीठी ।।
नैनन नेह चुवै कवि 'देव' बुझावत बैन वियोग अंगीठी ।
ऐसी रसीली अहीरी अहै कहौ क्यों न लगै मन मोहनै मीठी ।।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

अतः स्पष्ट है कि इन कवियों की कल्पना नवीन-नवीन उपमानों की सृष्टि में लगी रहती थी।

रीतिश्रृंगार काव्य-धारा की एक प्रमुख विशेषता उक्ति वैचित्र्य की है। विदग्ध चमत्कारिक, स्मरणीय, चुटीली अभिव्यक्ति रीतिकाव्य की प्रमुख देन है। उक्ति की विशिष्टता ही काव्य को प्रभावशाली बनाती है। इस कसौटी पर रीतिकाव्य बड़ा खरा उतरता है। इस उक्ति विशेष के लिए दोहा, सवैया, कवित्त जो तीन छन्द इन कवियों ने चुने थे, वे भी अतीव उपयुक्त बैठते हैं। इन छन्दों के अन्तिम चरण में तो जैसे सूक्ति ढलकर निकल आती है। इस प्रसंग में और अधिक न कहकर केवल कुछ चुभती हुई वैचित्र्यपूर्ण उक्तियों का उल्लेख कर देना ही पर्याप्त होगा—

जब जब वे सुधि कीजिए, तब तब सब सुधि जाँहि।
आँखिनु आँखि लगी रहैं आँखैं लागति नाँहि॥
कागद पर न लिखत बनत, कहत सँदेस लजात।
कहियै सब तेरो हियो, मेरे हिय की बात॥
दृग अरुझत, टूटत कुटुम, जुरत चतुर चित प्रीति।
परति गाँठ दुरजन हिये, दई नई यह रीति॥ (बिहारी)

चौगुनौ रंग चढ़्यो चित में चुनरी के चुचात तला के निचोरत।
मूरति जो मनमोहन की मनमोहनी के थिर ह्वै थिरकी सी॥
देव 'गुपाल' को नाम सुने सियराति सु वा छतिया छिरकी सी।
पूरन प्रीति हिये हिरकी खिरकी-खिरकीन फिरै फिरकी सी॥
बड़े बड़े नैननि सों आँसू भरि भरि ढरि,
गोरो गोरो मुख आजु ओरोसो बिलानो जात।
अब लगी आँखिन ही पूतरी कसौटिन में,
लागी रहै लील दाकी सोने सी गोराई की॥ (देव)

कबहूँ वा विलासी सुजान के आँगन सों अंतुवान को लै बर सों॥घनानंद
"वा मुख की मधुराई कहा कहौं मीठी लगै अंखियान लुनाई।"
आँखिन ते गिरे आँसू के बूँद सुहास गयो उड़ि हँस की नाई॥ मतिराम

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

इस प्रकार की असंख्य स्मरणीय सरस चुटीली उक्तियों से रीतिकाव्य परिपूर्ण है । इनमें से किसे चुना जाय और किसे छोड़ा जाय, यह समस्या है ।

हिन्दी साहित्य का यह रीतिश्रृंगार काव्य उसकी निजी सम्पत्ति है । इस काव्य सम्पत्ति में संस्कृत को छोड़कर कदाचित् ही किसी अन्य भाषा का साहित्य हो, जो हिन्दी की समता कर सके । अतः हमें आज यांत्रिक झनझनाहट के लौह-युग में अपने पूर्वगामी युग के साहित्य की स्वर्णसम्पत्ति एवं रत्नराशि का मूल्य भली प्रकार समझ कर उसे सुरक्षित रखना चाहिए । यह काव्य-विभव हमारी सौन्दर्य-चेतना का विकास कर, शब्द-चयन की प्रतिभा को जगाने वाला है । यह उपेक्षणीय नहीं, वरन् अभिनंदनीय है । हमें इस पर गर्व है ।

पुनर्मूल्यांकन

हिन्दी का रीतिकालीन साहित्य उसका उत्तर मध्ययुगीन साहित्य है जो सामान्यतः सं० १७०० से लेकर सं० १९०० विक्रमी तक निर्मित हुआ । उस समय रीतियुगीन साहित्य और विशेष रूप से रीतिकाव्य को उत्कृष्ट स्थान प्राप्त था । रीतिकाव्य साहित्यिक दृष्टिकोण रखने वाले काव्य-रसिकों के विचार से काव्य की विशुद्ध धारा है जिसके अन्तर्गत अन्य किसी विशिष्ट वैचारिक या साम्प्रदायिक भावना का आग्रह नहीं है । उसके अन्तर्गत स्वच्छ काव्यात्मक प्रतिभा सौन्दर्य का मनोरम एवं प्रभावी चित्रण प्रस्तुत करती दिखलाई देती है । इसीलिए दो-ढाई सौ वर्षों तक रीति-परम्परा के काव्य का विशेष सम्मान और महत्व रहा । न केवल राजदरबारों में, वरन् जन-सामान्य के अन्तर्गत भी रीतिकाव्य ने सौन्दर्य-चेतना और कलात्मक दृष्टि-कोण के विकास करने में सहायता पहुँचाई ।

आधुनिक युग के प्रवेश के साथ इस काव्य के संबन्ध में दृष्टिकोण बदला और रीतिकालीन काव्य विशेष रूप से रीतिकाव्य पर अनेक प्रकार के दोषा-रोपण किए गए और यह काव्य नितान्त हेय एवं पतनोन्मुख काव्य कहा गया तथा उसके प्रति घृणा और द्वेष का भाव जागृत किया गया । इसकी प्रतिक्रिया में दूसरा मत इस प्रकार का निर्मित हुआ कि वास्तव में हिन्दी का रीतिकाव्य ही उत्कृष्ट काव्य है । ये दोनों ही दृष्टिकोण राग-द्वेष की भावना से युक्त कहे

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

जा सकते हैं । अतः आज इस बात की आवश्यकता है कि हम रीतिकाव्य का पुनर्मूल्यांकन प्रस्तुत करें और यह स्पष्ट करने का प्रयत्न करें कि इस काव्य का महत्व क्या है ? साथ ही यह भी जानने का प्रयत्न करें कि इसमें किन तत्वों की कमी है ।

रीतिकाव्य पर जो दोष लगाए जाते हैं, वे निम्नलिखित हैं—

(१) अश्लीलता ।
(२) समाज को प्रगति देने की अक्षमता ।
(३) आश्रयदाता की अतिशय प्रशंसा ।
(४) चमत्कार-प्रियता ।
(५) रूढ़िवादिता ।

अश्लीलता की धारणा युग-सापेक्ष्य है । एक ही प्रकार की वस्तु या व्यक्त रूप एक युग में अश्लील कहा जा सकता है और दूसरे युग में नहीं । इसका प्रमाण हमें संस्कृत की अनेक रचनाओं को पढ़ने पर मिल जाता है । कविकुल गुरु कालिदास, भर्तृहरि, अमरुक तथा सप्तशती और मुक्तककार अनेक संस्कृत के कवि हैं जिनकी रचनाओं में नारी-शरीर के अंगों का तथा भावों का ऐसा वर्णन है जो उस समय अश्लील नहीं था, पर आज वह अश्लील समझा जाता है । यही दशा मध्ययुग के काव्यगत वर्णनों के प्रसंग में भी कही जा सकती है जो उस समय अश्लील नहीं थे, आज अश्लील समझे जाते हैं । भक्तियुग में ही सूरदास, नन्ददास, विद्यापति, जायसी, सेनापति आदि के अनेक वर्णन ऐसे हैं जो रीतिकालीन वर्णनों से अधिक अश्लील कहे जा सकते हैं । आधुनिक युग में भी इस प्रकार के वर्णनों का अभाव नहीं है । प्रकृतिवादी और प्रगतिवादी काव्यों तक में ऐसे वर्णन मिलते हैं जो हेय और अश्लील हैं । ऐसी दशा में रीतिकालीन सौन्दर्य-चित्रण के प्रसंग में और विशेष रूप से नख-शिख सौन्दर्य चित्रण में कतिपय अंगों का यदि ऐसा वर्णन मिलता है जो आज अश्लीलता की सीमा में आ जाता है तो उसके आधार पर हम समस्त काव्य को लांछित करें, यह उपयुक्त नहीं ।

इसी प्रकार शारीरिक अंगों का वर्णन एक देश में अश्लील हो सकता है दूसरे देश में नहीं । दक्षिण-पूर्वी देशों में अनेक स्थलों पर स्त्रियों के लिए कमर

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

से ऊपर का समस्त खुला या केवल आभूषण युक्त अंग-प्रत्यंग वहाँ के लिए अश्लील नहीं है, जबकि अपने देश के नागरिक समाज में उसे अश्लील माना जाता है। इसी प्रकार चित्रकला और मूर्तिकला के अन्तर्गत पुरुष और नारी के अनावृत रूप भी अश्लील नहीं माने जाते। ऐसी दिश में यदि रीतिकालीन कवि अंग-प्रत्यंग के सौन्दर्य का निरूपण करके अपनी कल्पना द्वारा उस सौन्दर्य को और भी अधिक उत्कर्ष प्रदान करना चाहता है तो इसमें उसे लांछित नहीं किया जा सकता। इससे साथ ही साथ इस प्रसंग में एक और भी बात है जिसका सम्बन्ध प्रचलन और परम्परा से है। कभी-कभी एक ही पदार्थ या भाव का द्योतक शब्द एक भाषा में अश्लील नहीं है पर दूसरी में अश्लील माना जाता है। अंग्रेजी के ब्रेस्ट, किस, एम्ब्रेस आदि शब्द हमें अश्लील नहीं लगते हैं, पर इनके हिन्दी पर्याय कुच, चुम्बन, आलिंगन आदि सामान्यतः अश्लील समझे जाते हैं। ऐसी दशा में अश्लीलता युग, देश और प्रसंग-सापेक्ष वस्तु है और उसके आधार पर सामान्यतः समस्त रीतिकालीन काव्य पर अश्लीलता की छाप लगाकर उसे बहिष्कृत नहीं कर सकते।

हाँ, इस प्रसंग में यह कहना आवश्यक है कि रीतिकाव्य में कुछ ऐसे वर्णन हैं जो कामशास्त्र के आधार पर किए गए हैं और वे हमारी निम्न वासनाओं को उभाड़ने वाले हैं। ऐसे प्रसंग चाहे जिस काव्य में हों, सामान्यतः वर्जित ही माने जायँगे। यहाँ यह कह देना आवश्यक है कि इस प्रकार के वर्णन की परम्परा भी रीतिकाव्य में संस्कृत-काव्य से आई है।

समाज को प्रगति की प्रेरणा न दे सकने का दूसरा दोष इस युग के काव्य पर लगाया जाता है। यह लांछन भी बहुत ठीक नहीं है। जहाँ तक रीतिकाव्य का प्रश्न है यह स्पष्ट है कि उसका प्रमुख क्षेत्र शृंगार रहा, परन्तु रीतिकाव्य के अन्तर्गत भी वीरता, भक्ति और नीति से युक्त रचनाएँ मिलती हैं। शिवराज भूषण, रामचन्द्राभरण, बिहारी सतसई आदि इसके प्रमाण हैं जिनमें वीरता, भक्ति, नीति आदि विषयों से सम्बन्धित रचनायें हैं। यह बात रीतिकाव्य के सम्बन्ध में है। परन्तु इसके अतिरिक्त उस युग में अन्य काव्य-धाराएँ भी प्रवाहित थीं जिनके अन्तर्गत आध्यात्मिक तथा लौकिक जीवन को प्रेरित करने की शक्ति थी। यह नहीं कहा जा सकता कि रीति युग का काव्य जीवन और

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

उसकी प्रगति से नितान्त विमुख था। तथ्य यह है कि यह काव्य पूर्ववर्ती भक्ति युग के काव्य से अधिक लोक-जीवन विमुखी है।

भक्तिकाव्य का वास्तव में बहुत अधिक विस्तार इस युग में हुआ। संत साहित्य के अनेक पंथ इस युग में अधिक प्रचलित हुए। सुन्दरदास, रज्जब, यारी, पलटू, प्राणनाथ,जगजीवनदास, चरनदास, दरिया, शिवनारायण, तुलसी साहब हाथरस वाले आदि इस युग के संत कवि हैं। निर्गुणोपासना की सूफी काव्यधारा के भी बहुसंख्यक कवि रीति युग में हुए। इनमें से अधिक प्रसिद्ध कवि हैं जानकासिम शाह, नूरमुहम्मद, शेख मिसाद आदि।

संत काव्य धारा मूलतः संयम और साधना पूर्ण जीवन पर बल देने वाली है और यह कहा जा सकता है कि भारतीय जीवन में चारित्रिक बल का मूल श्रोत संतों से ही प्राप्त होता है। जब इस प्रकार की विचारधारा के कवि इस युग में हैं, तो ऐसा नहीं कहा जा सकता कि इस युग का काव्य जीवन की प्रगति से रहित है।

सगुण भक्तिधारा के अंतर्गत कृष्ण-भक्ति और राम-भक्ति से सम्बन्धित असंख्य रचनाएँ इस युग में की गईं। कृष्णभक्ति के अन्तर्गत वल्लभ सम्प्रदाय, राधावल्लभ सम्प्रदाय, हरिदासी सम्प्रदाय और गौड़ीय सम्प्रदाय इन चारों सम्प्रदायों की वहुविधि रचनाएँ इस युग की सुन्दर उपलब्धि के रूप में स्वीकार की जानी चाहिए। इस परम्परा के अनेक उत्तम कवियों ने अपनी उत्कृष्ट रचनाएँ हिन्दी साहित्य को प्रदान कीं। इनमें से प्रमुख हैं—ध्रुवदास, नागरीदास, चाचा हितहरि वृन्दावनदास, बख्शी हंसराज, ब्रजवासीदास आदि।

कृष्ण काव्यधारा के समान ही राम काव्यधारा के अन्तर्गत इस युग में अनेक कवियों ने ग्रंथ लिखे। रामोपासना के रसिक सम्प्रदाय का विस्तार इसी युग की देन है। इस धारा के कई प्रसिद्ध कवि रीतिकाल में वर्तमान थे। उनमें से कुछ प्रमुख हैं—गुरुगोविन्द सिंह, जानकी रसिकशरण, सरजूराम पंडित मधुसूदनदास, जनकराज, किशोरीशरण, सहजराम तथा रसिक बिहारी। इनके अतिरिक्त रीवां नरेश महाराजा जयसिंह, महाराजा विश्वनाथ सिंह और महाराजा रघुराजसिंह ने भी रामकाव्य से सम्बन्धित सुन्दर ग्रंथों की रचना की। ऐसी दशा में इन भक्तिप्रधान रचनाओं के आधार पर यह कहा जा

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

सकता है कि उस युग की मान्यता के अनुसार रीतिकालीन काव्य में जीवन के आध्यात्मिक पक्ष को प्रेरणा देने वाले ग्रंथों की रचना भी प्रचुर मात्रा में हुई। भक्तिकाल की सभी धाराओं का विकास इस युग में हुआ।

जीवन के लौकिक पक्ष को प्रेरित और प्रगतिमान करने वाला साहित्य भी इस युग में प्रचुर मात्रा में लिखा गया। इस बात की पुष्टि में हम इस युग के वीर और नीति काव्य की रचनाओं की ओर ध्यान आर्कषित करना चाहते हैं जहाँ वीर काव्यों में ओज और उदात्तता के साथ वीरता की भावना संचालित होती है वहीं नीति काव्य में जीवन के कटु एवं मधुर अनुभवों के आधार पर उपयोगी और वांछनीय बातें कही गई हैं। ये दोनों ही काव्य-धाराएँ रीति-काल में व्यापक विस्तार प्राप्त किए हुए हैं। वीर-काव्य के अन्तर्गत विशेष प्रसिद्ध कवि हैं—भूषण, मान, लाल, श्रीधर, सूदन, हरिकेस, जोधराज और चन्द्रशेखर वाजपेयी। इनकी रचनाएँ अत्यंत प्रसिद्ध हैं और इनके आधार पर यह कहा जा सकता है कि इस युग में हिन्दी के वीर काव्य का उदात्त स्वरूप देखने को मिलता है।

रीति युग का नीति काव्य भी कम समृद्ध नहीं है। अनेक कवियों ने जीवन को दिशा-निर्देश करने वाले सुन्दर मुक्तक तथा दुर्नीति और दुराचरण पर प्रहार करने वाले हास्य-व्यंग्य काव्य लिखे हैं। यह नीति और हास्य-व्यंग्य काव्य इस युग के सामाजिक निर्माण और प्रगति को सँभालने वाला काव्य है। व्यंग्य और भड़ौआकार बेनी कवि इसी युग में हुए जिन्होंने अनुदारता, आडम्बर आदि पर व्यंग्यात्मक प्रहार किया है। इसी समय 'खटमल-बाइसी' नामक हास्यप्रधान काव्य लिखने वाले प्रीतम कवि भी हुए। इसके अतिरिक्त अन्य अनेक हास्यकार कवि इस युग में मिलते हैं जो मूलतः नीतिकार हैं। घाघ, भड्डरी, बैताल आदि इसी प्रकार के कवि हैं। इनकी रचनाओं में जीवन के कटु-मधुर अनुभवों का वर्णन तो है ही, साथ ही साथ समाज में किस प्रकार का व्यवहार करना चाहिए, यह भी उनकी रचनाओं में प्राप्त होता है। कई लोगों ने अन्योक्तियों द्वारा सुन्दर और मार्मिक नीतिकाव्य प्रस्तुत किया है। इन सब पर दृष्टिपात करने से यह बात स्पष्ट हो जाती है। कि इस युग के काव्य में भी समाज को आध्यात्मिक और लौकिक दोनों ही प्रकार की प्रगति प्रदान

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

करने की क्षमता है ।

तीसरा दोष जो इस युग के काव्य पर लगाया जाता है वह है आश्रयदाता की अतिशय प्रशंसा करना । यह दोष भी आंशिक रूप से ही स्वीकार किया जा सकता है और उस युग के लिए आश्रयदाता की प्रशंसा, कला और काव्य के संरक्षण के लिए किन्हीं अंशों में आवश्यक भी थी । काव्य और कला के लिए किसी न किसी प्रकार का संरक्षण आवश्यक होता है । रीतिकाल के लिए यह विशेष रूप से सत्य था । उस समय यदि कविता, संगीत, चित्र आदि कलाओं को राजाश्रय प्राप्त न होता तो इनका विकास तो रुक ही जाता, ये सुरक्षित भी नहीं रह सकती थीं । अतएव थोड़ी बहुत प्रशंसा के द्वारा उस समय के कवियों और कलाकारों ने राजाओं और सामन्तों से कलात्मक और साहित्यिक विकास का परिपोषण प्राप्त किया । इतना ही नहीं, अनेक राजाओं और सामन्तों के हृदयों में भी काव्य और कला की सृजन-स्फूर्ति जागृत की । राजस्थान और विन्ध्यप्रदेश के कई शासक इसके प्रमाण हैं । अतएव आश्रय-दाता की जो थोड़ी बहुत प्रशंसा मिलती है, वह स्वाभाविक एवं वांछनीय है ।

इसके अतिरिक्त यह प्रशंसा नितांत असत्य भी नहीं है । रीतिकवियों ने जिन राजाओं और आश्रयदाताओं की प्रशंसा की है, वे उसकी पात्रता भी रखते हैं । यह मात्र झूठी प्रशंसा नहीं, वरन् गुणों और योग्यता की सराहना है । यह भी सत्य है कि कवियों ने बहुत थोड़े ही अंश में आश्रयदाताओं की प्रशंसा की है । केशव, विहारी, देव, मतिराम, पद्माकर आदि कवियों के द्वारा इनकी विशाल काव्य-रचना के बीच कुछ ही छंद ऐसे हैं जो इनके आश्रय दाताओं की प्रशंसा से सम्बद्ध हैं और इन छंदों में यह देखा जा सकता है कि उनके द्वारा सद्गुणों को प्रेरणा ही मिलती है ।

यदि निष्पक्षता से विचार किया जाय तो रीतिकवियों ने काव्यशास्त्रीय परि-पाटी को अपना कर आश्रयदाताओं की अतिशय और दीर्घ प्रशंसा से अपने को मुक्त कर लिया था । इसीलिए सामान्यतः रीतिकाव्य के अन्तर्गत भूमिका या प्रस्तावना रूप में अथवा ग्रंथ के समापन के समय ही प्रशंसात्मक उक्तियाँ प्राप्त होती हैं । काव्य-रचना के प्रधान भाग में अलंकार, रस, ध्वनि अथवा किसी अन्य महापुरुष के जीवन का विवरण प्राप्त होता है । अलंकार, रस,

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

नायक-नायिका भेद आदि के लक्षण उदाहरण की परिपाटी से इन कवियों ने आश्रयदाता के चरित्र को लिखने की बाध्यता से अपने को मुक्त कर लिया। यह बात सराहनीय है। इतना ही नहीं, उस युग के प्रतिभा-संपन्न कवि ऐसे थे जिनका व्यक्तित्व आश्रयदाताओं और शासकों के व्यक्तित्व से भी ऊँचा था। प्रतिभा-सम्पन्न होने के साथ-साथ वे स्वाभिमानी भी थे। उन्होंने अपने व्यवहार और कृतित्व से कवि और कविता दोनों के ही गौरव को उच्चता प्रदान की। केशव, चिन्तामणि, भूषण, बिहारी, देव, दास, पद्माकर आदि ऐसे ही कवि थे जिनको अपने दरबार में लेने के लिए अनेक राजा और शासक उत्सुक तथा लालायित रहते थे। ऐसे कवियों के द्वारा जो कुछ प्रशंसात्मक उक्तियाँ मिलती हैं वे गुणों और कार्यों की सराहना मात्र हैं।

उस युग में काव्य के अन्तर्गत चमत्कार का विशेष महत्व था। वह दरबारों का युग था जहाँ तड़क-भड़क और चमत्कार प्रदर्शन विशेष रूप से दिखलाई देता है। दरबार में रहनेवाले और आने वाले कवियों और कलाकारों के मध्य अपने को बढ़कर सिद्ध करने के लिए चमत्कार आवश्यक था। चमत्कार पूर्ण वर्णन उनकी प्रतिभा-प्रदर्शन का एक मार्ग था। इसके परिणाम स्वरूप हमें रीति काव्य के अन्तर्गत चामत्कारिक रचनायें अधिक मिलती हैं जिनमें कला का एक वैशिष्ट्य प्राप्त होता है। यह सत्य है कि इनमें अनुभूति की अपेक्षा कलात्मक चमत्कार अधिक है, फिर भी अभिव्यक्ति को सौष्ठव प्रदान करने का प्रयत्न इन रचनाओं में देखा जाता है। चामत्कारिक विशेषता को हम दोष के रूप में नहीं देख सकते; विशेष रूप से उस अलंकरण और सजावट प्रधान काल में इसे एक गुण के रूप में ही देखना चाहिए।

रूढ़िवादिता का दोष इस युग में दिखलाई देता है। एक ही प्रकार के प्रसंगों और विषयों पर इस युग के कवियों ने अपनी रचनाएँ लिखीं। ऐसी बात नहीं कि उनमें वैविध्य न हो, परन्तु परिपाटी-बद्धता उनमें अवश्य मिलती है। इस युग के कवि अपने लिए एक शुद्ध काव्य का मार्ग निकालना चाहते थे। अतएव परिपाटी का अनुगमन इस समग्र युग की विशेषता है और ध्यान से देखें तो थोड़े बहुत रूप में यह रूढ़िबद्धता सभी युगों के काव्य में दिखलाई देती हैं। इसी प्रक्रिया में दो-एक प्रतिभा-सम्पन्न कवि काव्य का नया मार्ग

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

निकालते हैं। धीरे-धीरे दूसरे कवि उसका अनुगमन करते हैं और उन कवियों की शब्दावली और परिपाटी को ग्रहण करते हैं। यही प्रक्रिया जब अधिक समय तक चलती है तब वह रूढ़ि जैसी लगने लगती है। पर यह परिपाटी-बद्धता किन्हीं न किन्हीं अंशों में सभी युगों के काव्य में परिलक्षित होती है। भक्ति काव्य, संत काव्य, छायावादी, प्रयोगवादी आदि सभी काव्यों में यह बात थोड़े बहुत अंशों में देखने को मिल जायगी जहाँ पद्धति, छंद, अप्रस्तुत विधान, और शब्दावली एक समान दिखलाई देती है। यह बात न केवल रीतिकाव्य के लिए, वरन् आधुनिक प्रयोगशील काव्य के लिए भी सत्य है।

इन दोषों के विश्लेषण और विवेचन के उपरान्त रीतिकालीन काव्य की कुछ विशिष्टताओं पर विचार करना भी आवश्यक है। जैसा कि पहले कहा जा चुका है, प्रायः लोग यह समझते हैं कि रीतिकाल में केवल श्रृंगारिक रचनाएँ हुईं, यह एक भ्रमात्मक धारणा है। इस युग में सभी प्रकार की प्रवृत्तियों का काव्य निर्मित हुआ। जो रीतिकाव्य के प्रणेता कवि थे उन्होंने भी केवल श्रृंगारी कविता न लिखकर अन्य प्रकार की कविताएँ भी लिखीं। बिहारी, देव, पद्माकर जैसे कवियों ने भी प्रचुर मात्रा में भक्ति एवं नीतिपरक रचनाएँ की हैं। इनकी भक्ति और नीति सम्बन्धी रचनाएँ भी बड़ी उच्चकोटि की हैं। कुछ उदाहरण हम देख सकते हैं:—

१. मैं देख्यो निरधार यह जग काँचों काँच सो।
एकै रूप अपार प्रतिबिम्बित लखियत जहाँ॥
२. जप माला छापा तिलक सरै न एकौ काम।
मन काँचे नाचे वृथा साँचे राचे राम॥ —बिहारी

३. जो मैं ऐसो जानतो कि जैहै तू विषय के संग।
ऐ रे मन मेरे हाथ पाव तेरे तोरतो॥
४. आजु लौं हौं केते नर नाहन की नाहीं सुनी,
नेह सो निहारि हारि वदन निहोरतो।
चलन न देतो 'देव' चंचल अचल करि,
चाबुक चितावननि मारि मुँह मोरतो।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

भारी प्रेम पाथर नगारो दै गरे मो बाँधि,
राधावर विरद के वारिधि में बोरतो ।। ---देव

५. देव पद्माकर गोविन्द की अमित छवि,
शंकर समेत विधि आनँद सो बाढ़ो है।
झिझिकत झूमत मुदित मुसकात गहि,
अंचल को छोर दोऊ हाथन सो आढ़ो है।
पटकत पायँ होत पैंजनी झुनुक रंच,
नेक नेक नैनन तें नीरकन काढ़ो है।
आगे नन्द रानी के तनिक पय पीवे काज,
तीन लोक ठाकुर सो ठठुकत ठाढ़ो है ।।–पद्माकर

इसी प्रकार नीति-सम्बन्धी उक्तियाँ हैं।

१. बसै बुराई जासु तन ताही कौ सनमान।
भलो भलो कहि छोड़िए खोटे ग्रह जपदान ।।
२. रह्यो न काहू काम को सेत न कोऊ लेत।
बाजू टूटे बाज को साहब चारा देत ।। —बिहारी

३. सहज सुभाय मुसुकायवो मनोहर है,
जगत प्रसिद्ध आठौं सिद्धि को सरसिवो।
दिल सों दया सों देखिबोई देव दर्शन है,
रीझिबो रसायन है पारस परसिबो ।। — पद्माकर

इससे स्पष्ट होता है कि रीतिकाव्यकार कवियों ने भी अपने अनुभवों को विविध रूपों में व्यक्त किया था, उन्होंने केवल शृंगारपूर्ण रचनायें ही नहीं कीं।

वास्तविकता तो यह है कि रीतिकालीन कवियों का दृष्टिकोण मूलतः ऐहिक था, भक्तिकालीन युग की भाँति आध्यात्मिक नहीं। इसीलिए इन्होंने अपनी रचनाओं के अन्तर्गत जीवन में व्याप्त आशाओं, आकांक्षाओं, लालसाओं रूप, तृष्णा, सौन्दर्य, प्रेम, विलास, त्याग, खीझ, साहस आदि मानव-वृत्तियों का यथातथ्य वर्णन किया है। इनके वर्णन में जो अत्युक्ति या अतिशयोक्ति है

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

वह प्रभावोत्पादन के लिए । इस युग के साहित्य के अन्तर्गत अनेक ऐसे ग्रंथ भी मिलते हैं जो लोक-जीवन के वास्तविक अनुभव और ज्ञान को प्रकट करते हैं। यह अनुभव और ज्ञान विविध विषयों का है जैसे—राजनीति, कामशास्त्र, शालिहोत्र (पशुचिकित्सा) ज्योतिष, सामुद्रिक-शास्त्र, भोजन-शास्त्र, सुरापान, मैत्री, संगीतशास्त्र, उद्यान-शास्त्र आदि। रीतिकालीन साहित्य के इस पक्ष का प्रचार कम हुआ इसलिए प्रायः हम यह समझते हैं कि इस युग के काव्य दृष्टिकोण एकांगी हैं, किन्तु वास्तव में बात ऐसी नहीं। जीवन के विविध पक्षों से सम्बन्धित रचनाओं के कुछ उदाहरण नीचे दिये जाते हैं।

अवधूतसिंह ने सं० १८४४ में सुरापचीसी की रचना की। इसमें सुरा और सुधा को एक ही कोटि का ठहरा कर सुरा के प्रति धार्मिक दृष्टिकोण से विरोध के भाव को हटाया। उसका एक छंद निम्नांकित है—

एकाई उदरते प्रकट है सुधा औ सुरा,
ऐकै रूप, एकै गुन सबन बनाई है।
अजर अमर सुधा करत प्रसिद्ध,
सुरा सुर नर मुनि देव जोनि समुझाई है।
सुरा मधुराई देवलोक में अलभ्य,
सुरा पटरस तीनो लोक सुलभ सदाई है।
सुरन सुहाई गुन स्वाद गरुआई,
याते सुधा सुरा नामके पुरानन कहाई है।

इस छंद से उस युग की ऐहिकतापरक दृष्टि स्पष्ट होती है। इसी प्रकार हुक्के की प्रशंसा में लिखा हुआ एक छंद देखिए—

तौर ते याके न तौर है और,
सुवास ते याके त और सुवास है।
याके अनादर ते न अनादर
आदर याके न आदर कासु है।
धीरता धीरज सारस सोल
उदारता श्री प्रभुता को निवासु है।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

अष्टउ सिद्धि नवउ निधि के सुख
हुक्कहिं देखत पावत आसु है ।

उपर्युक्त हुक्का-प्रशंसा को पढ़कर इतना तो कम से कम जाना ही जा सकता है कि आज के यथार्थवादी युग में भी सिगरेट के विज्ञापन में आए दृष्टिकोण की अपेक्षा यह अधिक यथार्थवादी दृष्टिकोण है । व्यंग्य और हास्य के साथ इसके लिखने वाले की सच्ची आस्था की प्रशंसा करनी ही पड़ती है ।

इसी प्रकार अली मुहिब खाँ प्रीतम ने 'खटमल बाइसी' लिखी और हरिनाथ ने विभिन्न जातियों के द्विजों को चिड़ियाखाना बनाया । किसी कवि ने अदानी के दान की प्रशंसा यहाँ तक की कि उसे आठों पहर देनेवाला सिद्ध किया ।

उदाहरण इस प्रकार है—

पौर के किवार देत, धरै सब गारी देत,
साधुन को दोष देत, प्रीति न चहत है ।
माँगने पै ज्वाब देत, बात कहे रोय देत,
लेत देत भाँज देत ऐसे निबहत हैं ।
बागेहू के बन्द देत, बोरन की गाँठ देत,
परधन गाढ़ि देत, काम में रहत हैं ।
ऐसे पै सबैई कहैं लाला कछु देत नाहीं,
लाला जू तौ आठौ जाम देत हरत हैं ।।

इस युग के काव्य में जीवन के यथार्थ स्वरूप और अनुभूतियों का चित्रण हमें मिलता है । भाव और मनोवृत्तियों के प्रसंग में यह एक बात देखने को अवश्य मिलती है कि कवि युवावस्था के भावों का ही विशेष रूप से चित्रण करता है जिनके अन्तर्गत वह अभिलाषा, खीझ, प्रेम आदि का बड़ा ही सटीक चित्रण करने में सफल हुआ है । एक ही व्यक्ति के रूप में प्रभाव से उत्पन्न विभिन्न लोगों के मनोभावों का संकेत मतिराम के एक दोहे में इस प्रकार किया गया है ।

जानति सौति अनीति है, जानत सखी सुभीति ।
गुरुजन जानत लाज है, प्रीतम जानत प्रीति ।।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

इसमें रूपवती नारी के सौन्दर्य और व्यवहार एक साथ ही सौति के लिए अनीति, सखी के लिए सुनीति गुरुओं के लिए लज्जा और प्रिय के लिए प्रीति का रूप धारण करते हैं ।

आन्तरिक भावों को चतुराई से कहकर भी व्यक्त किया जाता है । सुकुमार इंगितों और चेष्टाओं द्वारा इसका चित्रण करने वाला बिहारी का दोहा प्रसिद्ध है—

बतरस लालच लाल की, मुरली धरी लुकाय ।
सौंह करैं, भौंहनि हँसै, दैन कहै, नटि जाय ।।

इस प्रसंग में पद्माकर का निम्नांकित छंद दृष्टव्य है—

गो-गृहकाज गुपालन के कहि देखिये की कहूं दूरि कै खरौ ।
माँगि बिदा लई मोहिनी सों 'पद्माकर' मोहन होत सबेरौ ।।
फेंट गहि न गहि बहिनाँ न गरो गहि गोविंद गौन ते फेरौ ।
गोरी गुलाब के फूलन को गजरा लै गोपाल की गैल में गेरौ ।।

रीतिकाव्य में विविध रूपा सूक्ष्म मनोवृत्तियों का समावेश है । वे अपने सहज और मार्मिक रूप में साहित्य की स्थायी सम्पत्ति हैं । इस दृष्टि से यदि हम रीति काल के साहित्य का मूल्यांकन करें तो इसके रचयिता हमारी श्रद्धा संवलित भावनाओं के अधिकाधिक अधिकारी सिद्ध होंगे ।

कवियों के भाव-चित्रण की स्वच्छन्दता के साथ-साथ यह भी सत्य है कि उस युग में जीवन अनेक प्रतिबन्धों और मर्यादाओं से बँधा हुआ था । जहाँ तक सामाजिक प्रतिबन्धों का प्रश्न है उन पर उस युग के संत-साहित्य में पर्याप्त प्रकाश पड़ना है, परन्तु इस युग के रीति काव्य में वैयक्तिक और पारिवारिक प्रतिबन्धों के कारण जो मनोदशा थी उसका कहीं-कहीं बड़ा मार्मिक और विलक्षण चित्रण हुआ है । ऐसे छंद हैं जिनमें प्रेयसी अपने प्रिय को गाय दुहने, या खोए हुए बछड़ों को अपने साथ ढूँढ़ने का आग्रह करती है, नदी के किनारे पानी से भरे घड़े को उठाने का अनुरोध करती है और कहीं पत्नी पति के साथ खेत पर काम करने के लिए जाने को आतुर होती है । ये सब भावनाएँ घर और परिवार के बीच प्रिय या पति से मिल सकने के प्रतिबंधों और कठिनाइयों

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

के कारण है। इन प्रतिबन्धों के कारण कहीं-कहीं ऐसी तीक्ष्ण भावनाओं का चित्रण है जहाँ स्त्री घर में आग लग जाने पर प्रसन्न होती है क्योंकि ऐसी दशा में उसे अपने प्रिय के हाथों आग बुझाने के लिए पानी का घड़ा भर-भर कर देने का अवसर मिलता है—

आगि लागि घर जरिगा बड़ सुख कौन।
पिय के हाथ घइलवा भरि भरि दीन॥

ऐसे चित्रण उस समय के सामाजिक जीवन का स्वरूप स्पष्ट करते हैं। वह युग सामन्तवादी था, अतएव सामन्तवादी प्रवृत्तियों का चित्रण उस युग में मिलना स्वाभाविक है। परन्तु जैसा कि पहले संकेत किया जा चुका है, उस युग के सामन्तवादी परिवेश में साहित्य, कला और शास्त्र का संरक्षण अवश्य हुआ। अनेक प्रकार के भक्ति और संत-सम्प्रदायों को प्रोत्साहन मिला और इन पंथों और सम्प्रदायों के मंदिर और मठों का निर्माण हुआ।

अनेक प्रकार के तंत्र और शास्त्रों की भी रचना हुई। साथ ही विविध चित्रकला-शैलियों का विकास हुआ जिनका उपयोग अनेक धार्मिक और काव्य सम्बन्धी ग्रंथों में किया गया। इसी प्रकार भारतीय संगीत कला का भी विकास हुआ और अनेक नई शैलियाँ खोज निकाली गईं। इन शैलियों के अनुरूप छंदों और गीतों की रचना हुई।

इतिहास इस तथ्य का साक्षी है कि उत्कृष्ट कला और तंत्र का विकास बिना राजकीय संरक्षण के नहीं होता। विशेष रूप से कला के चमत्कारिक उत्कर्ष के लिए वैयक्तिक सराहना और संरक्षण अत्यन्त आवश्यक है। तंत्र और कला की विलक्षण उपलब्धियाँ जनतान्त्रिक या समाज-शास्त्रीय शासन पद्धतियों के बीच उतनी नहीं पनपती जितनी सामन्तवादी या एकाधिकारवाली पद्धतियों के बीच। यही कारण है कि रीतियुग में जन सामान्य के जीवन के लिए चाहे अधिक कुछ न हुआ हो, परन्तु तन्त्र और कला के प्रोत्साहन के लिए वह युग अधिक पोषक सिद्ध हुआ। अतः आज इस बात की आवश्यकता है कि हम उस युग की रचनाओं को केवल वर्तमान युग के ही सन्दर्भ में न देखकर उस युग के भी संदर्भ में देखें जिसमें उनकी निर्मिति हुई। हमें उस समय के भी संदर्भ

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

की कल्पना करना चाहिये जब ऐसी कृतियों के लिए सम्भवतः कोई वातावरण मिल सकेगा ।

काव्य-सृष्टि के मूल में युग-चेतना, कवि-हृदय का संस्कार, उसका परिवेश तथा उसके सोद्देश्य चिंतन की प्रक्रिया प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में सतत क्रिया-शील रहती है । कवि जीवन-दृष्टा बनकर जीवन-सृष्टा भी बनना चाहता है । उसकी अभिव्यक्ति की विविधता के रूपों में इसी यथार्थ एवं आदर्श की कहीं संघर्षमयी और कहीं समन्वयकारिणी प्रवृत्ति का निदर्शन होता चलता है । रीतिकालीन साहित्य का मूल्यांकन करते समय इन तथ्यों पर भी दृष्टिपात करना होगा । किसी युग विशेष की भूमिका के आग्रह में उस युग के साहित्य के प्रति न्याय नहीं किया जा सकता है ।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

कवि-परिचय

आचार्य केशवदास

हिन्दी साहित्य के उत्तर मध्य युग को अपनी प्रतिभा और प्रभाव से सर्वाधिक प्रभावित करने वाले कवि केशवदास हैं। इन्होंने हिन्दी साहित्य-रचना के लिए शुद्ध काव्य का मार्ग प्रशस्त किया। केशव जितने काव्य के क्षेत्र में सम्मानित थे, उतने ही राजकीय क्षेत्र पर भी प्रभावशील थे। ये ओरछा नरेश राजा इन्द्रजीत सिंह और वीर सिंह देव के समय में उनके काव्य-गुरु के रूप में रहे। केशव के वंशजों का मूलनिवास यद्यपि ब्रज प्रदेश माना जाता है, परन्तु कई पीढ़ियों से इनके पूर्वज ओरछा राज्याश्रय में रहे। वे मुख्यतः पुराण-कथा कहकर अपना जीवन-निर्वाह करते थे। संस्कृत की विद्वता और स्वाभिमानी संस्कार उनकी वंश-परम्परा के लक्षण थे। केशवदास भारद्वाज, गोत्रीय मिश्र सनाढ्य ब्राह्मण थे। सनाढ्य ब्राह्मणों का उस समय अच्छा सम्मान था। केशव के पितामह पंडित कृष्णदत्त मिश्र ओरछा नरेश महाराज रुद्रप्रताप के आश्रित थे तथा केशवदास के पिता पंडित काशीनाथ मिश्र महाराज मधुकर शाह के समय में ओरछा राज्य में रहे और उन्हीं को पुराण-कथाएँ सुनाया करते थे। मधुकर शाह का समय अकबर का समय था। इनके पश्चात् उनके पुत्र रामशाह ओरछा की गद्दी पर आसीन हुए। इन्हीं रामशाह के अनुज इन्द्रजीत सिंह थे, जिन्होंने केशवदास की बहुत अधिक सम्मानित किया था। इनके सम्बन्ध में प्रशंसा करते हुए केशवदास ने लिखा है :—

"भूतल को इन्द्र इन्द्रजीत जीवै जुग-जुग,
जाके राज केशवदास राज सो करतु है।"

महाराज इन्द्रजीत सिंह के आश्रित रायप्रवीण नामक वेश्या भी थी। इसी को काव्य-शिक्षा देने के लिए केशव ने 'कवि-प्रिया' की रचना की थी। कहते हैं कि एक समय अकबर ने ओरछा नरेश पर डेढ़ करोड़ रुपये का जुर्माना किया था। और रायप्रवीण को भी माँगा था। जुर्माना माफ कराने और

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

रायप्रवीण को ओरछा में रखने का श्रेय आचार्य केशवदास को ही मिला था।

केशवदास की जन्मतिथि के सम्बन्ध में मतभेद है। परन्तु अनेक बातों पर विचार करने से उनकी जन्मतिथि सं० १६१८ वि० ठहरती है। केशवदास का जन्म वर्तमान मध्यप्रदेश के अन्तर्गत ओरछा नगर में हुआ था। आज भी वहाँ के व्यासपुर मुहल्ले में केशवदास के भवन के भग्नावशेष मिलते हैं। केशव के बड़े भाई हिन्दी के प्रसिद्ध कवि बलभद्र मिश्र थे। इनके पाँच पुत्र कुछ लोग मानते हैं। केशव की पुत्र-वधू भी कवयित्री थीं, ऐसी जनश्रुति है। महाराज इन्द्रजीत सिंह ने केशव से गुरुदीक्षा ली थी—और इन्हीं के संकेत पर केशवदास ने 'रसिक-प्रिया' की रचना की। इन्द्रजीत सिंह के उपरांत वीरसिंह देव ओरछा के राजा हुए, इन्होंने ही जहाँगीर की इच्छानुसार अबुलफजल का बध किया था। केशवदास ने 'वीरसिंह देव चरित' ग्रंथ इन्हीं की प्रशंसा में लिखा है। वीरसिंह विद्वान व्यक्ति थे और इन्होंने केशवदास को 'विज्ञान-गीता' लिखने की प्रेरणा भी दी थी। अंतिम समय में केशवदास गंगा के किनारे निवास हेतु काशी चले गए थे।

केशवदास ने रतनसेन की प्रशंसा में 'रतन बावनी' और जहाँगीर की प्रशंसा में 'जहाँगीर जस चंद्रिका' का प्रणयन किया था। इस प्रकार केशवदास का अकबर, जहाँगीर, बीरबल आदि महत्वपूर्ण व्यक्तियों से सम्बन्ध था। केशवदास की मृत्यु सं० १६८० वि० के आस-पास हुई थी और इस प्रकार से ये गोस्वामी तुलसीदास के समकालीन थे। इतना होते हुए भी केशवदास की मूल प्रवृत्ति भक्तिकालीन न होकर रीतिकालीन है। केशवदास ने कुल मिलाकर दस ग्रंथों की रचना की, जिनका विवरण काल-क्रमानुसार इस प्रकार है :—

१. रतन बावनी (सं० १६३८) २. रसिक-प्रिया (सं० १६४८) ३. नख-शिख (सं० १६५७) ४. बारह मासा (सं० १६५७) ५. रामचन्द्रिका (१६५८) ६. कवि-प्रिया (सं० १६५८) ७. छन्दमाला (१५५९) ८. वीरसिंह देव चरित (सं० १६६४) ९. विज्ञानगीता (सं० १६६७) १०. जहाँगीर जस चन्द्रिका (सं० १६६९)। इन ग्रंथों में भक्ति, शृंगार तथा चरित-काव्य सम्मिलित हैं। इससे स्पष्ट है कि केशवदास ने अपने युग की सभी प्रवृत्तियों को लेकर रचना की।

साहित्यिक क्षेत्र में केशवदास की अत्यधिक प्रसिद्ध रचनाएँ रामचन्द्रिका,

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

कवि-प्रिया और रसिक-प्रिया हैं। रामचन्द्रिका के लिए कहा जाता है कि इन्होंने गोस्वामी तुलसीदास की रामचरितमानस से प्रेरणा लेकर इसकी रचना की और इसकी रचना बहुत शीघ्र हुई। इसमें विविध छन्दों का प्रयोग है। इसके साथ ही साथ इसमें रस, अलंकार, गुण और दोष को स्पष्ट करने वाले बड़े अच्छे उदाहरण मिलते हैं। दोषों का परिचय कराने वाले ग्रंथ रामचन्द्रिका जैसे बहुत कम हैं। रामकथा को लेकर लिखी गई यह पुस्तक वाल्मीकि रामायण पर आधारित है। और इसमें राम को ईश्वर रूप में चित्रित किया गया है। परन्तु इसकी अपनी दो विशेषताएँ स्पष्ट हैं, एक तो राज दरबारों और ठाट-बाट के चित्रण की विशेषता और दूसरी, शब्दों के चमत्कारी प्रयोग की विशेषता। इसमें बहुत से ऐसे छन्द हैं, जिनके पाँच-पाँच अर्थ निकलते हैं, और ऐसे छन्दों के लिए यह उक्ति प्रसिद्ध है—

कवि को दैन न चहै विदाई ॥
पूछै केशव की कविताई ॥

रामचन्द्रिका को महाकाव्य की कलेवरात्मक साज-सज्जा से युक्त करने का कवि-संकल्प सर्वत्र उभरता हुआ प्रतीत होता है। उसमें रामकथा साहित्य-जगत की अति ख्यात कथा है, सद्वंशी राम धीरोदात्त नायक हैं, रावण खल प्रवृत्ति का मूर्त रूप है। नाति दीर्घ, नाति लघु उनतालीस प्रकाशों (अध्यायों) में रामकथा-वर्णन के माध्यम से कवि फलचतुष्ट्य की संप्राप्ति की कामना को संजोता हुआ प्रतीत होता है। कथा-प्रसंग के अन्तर्गत आये हुये प्रकृति के उघरे-मुँदे हुए नाना चित्र संस्कृत की नाम-परिगणन प्रणाली का अनुकरण करते हैं और ऐसा प्रतीत होता है कि कवि राजकीय वैभव के बीच रहने के कारण प्रकृति की रमणीय क्रीड़ास्थली से नितान्त दूर बैठा हुआ उसका नाम स्मरण मात्र कर रहा है। इसीलिए उषास्मित कानन, मकरन्दोत्सव मनाती हुई भ्रमरावलियाँ, लहाछेह वर्षा करती हुई सघन मेघमालाएँ, कल-कल निनादिनी ह्लादिनी पयस्विनी, वीचि-विकास करती हुई अनन्त जल-राशि, हिमाच्छादित मरकताभमंडित उत्तुंग शैल श्रेणियाँ, लुका-छिपी करता हुआ शरच्चन्द्र आदि अनेक प्राकृतिक दृश्य आचार्य केशव के लिए कोई आकर्षण नहीं रखते हैं। जीवन-चर्या के बीच सुख-दुख, राग-विराग, हास-रुदन, ममता और त्याग, औदार्य और कृपणता, शौर्य एवं कायरता आदि न जाने कितने

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

स्वरूप हमारी भाव मंजूषा की पूर्णता को सिद्ध करते हैं। सहृदय कवि इन सब में रमता हुआ मधुपी की भाँति जीवन-रस का पान करता है और फिर अपनी अन्तश्चेतना के अनुरूप एक नवीन जीवन-मधु की सृष्टि करता है। पर केशव ऐसे अवसरों की उपेक्षा करते हुए पाये जाते हैं और वे अपने कथन-चातुर्य, उक्तिवैचित्र्य आदि के द्वारा अपने आचार्यत्व की ऐसी धाक जमाते हुए चलते हैं कि पाठक को बरबस उनके वाणी-विलास एवं बुद्धि-वैभव की सराहनरा करते ही बनता है। उसका हृदय अपने रमने का स्थल न पा कर आगे बढ़-जाना ही श्रेयस्कर समझता है। पग-पग पर छंदों का परिवर्तन तथा उपमा, परिसंख्या, रूपक, भंग पद श्लेष तथा यमक अलंकार रसानुभूति में बाधा उत्पन्न करते हैं। पाण्डित्य-प्रदर्शन की यह अतिशयता महाकाव्य के भावात्मक सौन्दर्य को आच्छादित करती रहती है।

राजकीय आचार-परम्परा के अभ्यासी होने के कारण सम्वादों के प्रयोग में केशव को विशेष सफलता प्राप्त हुई है। भाव-प्रकाशन की क्षमता एवं पूर्णता की दृष्टि से कथोपकथन की नाटकीय शैली को कवि ने अधिकांश स्थलों में अपनाया है। इस शैली में क्षिप्रता, घातप्रतिघात तथा व्यञ्जकता की अत्यधिक अपेक्षा होती है। केशव के संवादों में ये समस्त गुण विद्यमान हैं। अंगद-रावण संवाद का एक उदाहरण प्रस्तुत है--

कौन के सुत ? 'बालि के,' 'वह कौन बालि', न जानिए ?
काख चाँपि तुम्हें जो सागर सात न्हात बखानिए।
'है कहाँ वह वीर ?' अंगद देवलोक बताइयो।
क्यों गयो ? 'रघुनाथ-बान-विमान बैठि सिधाइयो।'

लव-कुश से युद्ध करते समय इन दोनों वीर बालकों से जो राम-लक्ष्मण तथा भरत-शत्रुघ्न से संवाद हुआ है वह कवि की प्रतिभा का परिचायक है। इस संदर्भ में कुछ पंक्तियाँ भी प्रस्तुत हैं—

भरत— **मुनि बालक हौ तुम यज्ञ करावौ।**
सु किधौ वर बाजिहि बाँधन धावौ।
अपराध क्षमौ सब आशिष दीजै।
वर बाजि तजौ, जिय रोष न कीजै।

कुश— **बालक वृद्ध कहौ तुम काकों।**
देहनि कौ किधौ जीव प्रभा कों॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

है जड़ देह करै सब कोई।
जीव, सो बालक वृद्ध न होई।

कवि-प्रिया में कवि-शिक्षा का वर्णन है। इसके अन्तर्गत् केशवदास ने वर्णन-पद्धति और अलंकार का मौलिक रूप से निरूपण किया है। इसमें इनका काव्य-शास्त्रीय ज्ञान प्रकट होता है। रसिक-प्रिया में रसों का विवेचन है। इनके रसों का विवेचन भी मौलिकता रखता है। इसमें प्रत्येक रस के प्रच्छन्न और प्रकाश करके दो भेद दिए गये हैं। कविता की दृष्टि से कविप्रिया और रसिकप्रिया दोनों ही ग्रंथ उत्तमकोटि के हैं। वास्तव में ये दोनों ग्रंथ केशव को हृदयहीनता के आरोप से मुक्त कराने की क्षमता से पूर्ण हैं। इनके आधार पर केशव को रसिक, कल्पनाशील एवं उच्चकोटि का कवि निश्चित रूप से कहा जा सकता है। इनकी भाषा प्रांजल और सरस है। इन्हीं के आधार पर केशव का प्रभाव समस्त रीति-काल पर छाया रहा और परवर्ती रीतिकवि केशव की रचनाओं को पढ़कर ही काव्य क्षेत्र में प्रवेश करते थे। शुद्ध काव्य का मार्ग प्रशस्त करने के कारण केशव का महत्त्व रीतिकाल में अक्षुण्ण है।

सेनापति

कविवर सेनापति की जीवनी के सम्बन्ध में अधिक सामग्री नहीं मिलती। जो कुछ भी सूचना ज्ञात है, वह इनकी रचना के आधार पर ही है। सेनापति ने अपने ग्रंथ 'कवित्त रत्नाकर' में अपना परिचय दिया है, जो इस प्रकार है :–

"दीछित परसराम दादौ है विदित नाम,
जिन कीने जज्ञ जाकी जग में बड़ाई है।
गंगाधर पिता गंगाधर के समान जाकौं,
गंगा तीर बसति अनूप जिन पाई है।
महा जानि मनि विद्यादान हू कौ चिंतामनि,
हीरामनि दीछित तैं पाई पंडिताई है।
सेनापति सोई सीतापति के प्रसाद जाकी,
सब कवि कान दै सुनत कविताई हैं।"

इस छंद से स्पष्ट होता है कि इनके दादा अर्थात् पितामह का नाम परशु-राम दीक्षित था तथा इनके पिता गंगाधर दीक्षित गंगा के किनारे अनूप बस्ती में रहते थे। अनूप का अर्थ गंगा के किनारे स्थित प्रसिद्ध नगर अनूप शहर भी

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

हो सकता है, जो उत्तर-प्रदेश के बुलंद शहर जिले में स्थित है । यद्यपि निश्चित रूप से यह नहीं कहा जा सकता, पर जब तक कोई अन्य प्रमाण न मिले, तब तक उन्हें अनूप शहर का निवासी मानने में कोई हानि नहीं है । कुछ लेखक सेनापति को संस्कृत के प्रसिद्ध विद्वान भट्ट नागेश दीक्षित सिद्ध करते हैं । उनका भी यह कथन है कि भट्ट नागेश दीक्षित उसी समय के थे एवं वे भी गंगा के तट पर ही निवास करते थे । यह सत्य है कि सेनापति भी अपनी रचनाओं के आधार पर संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान् सिद्ध होते हैं । परन्तु वे भट्ट नागेश दीक्षित ही हैं—ऐसा कहना कठिन है । क्योंकि नागेश भट्ट के पिता का नाम शिव भट्ट था, और वे श्रृंगवेरपुर के महाराज रामदत्त के आश्रय में रहते थे । वे काशी में ही अधिकतर रहे । वे प्रसिद्ध वैयाकरण महाराष्ट्र ब्राह्मण थे । उन्होंने अनेक ग्रंथों की टीका की । नागेश भट्ट के गुरु हरि दीक्षित थे । परन्तु नागेश भट्ट की किसी हिन्दी रचना का पता नहीं चलता, न नागेश भट्ट के सेनापति उपनाम के ही सम्बन्ध में कोई सूचना प्राप्त होती । परन्तु दोनों में कुछ साम्य ऐसा है—जो इस अनुमान को पुष्ट करता है कि दोनों एक हो सकते हैं । सेनापति के पिता गंगाधर शिव का ही दूसरा नाम हो सकता है और शिव भट्ट नागेश जी के पिता थे । इसी प्रकार सेनापति के गुरु हीरामन दीक्षित थे, जब कि नागेश भट्ट के गुरु हरि दीक्षित थे । हरि और हीरा में ध्वन्यात्मक साम्य ही है । इसके अतिरिक्त सेनापति की प्रसिद्धि सीतापति के प्रसाद से हुई । नागेश जी भी महाराज राम के आश्रित थे, तथा दोनों ही गंगा के किनारे रहने वाले थे । अनुमान के लिए थोड़ा आधार यद्यपि इन बातों से मिल जाता है, परन्तु निश्चित रूप से प्रमाण के साथ यह कहना कठिन है कि नागेश भट्ट और सेनापति एक ही हैं ।

सेनापति के सम्बन्ध में और कोई सूचना नहीं प्राप्त होती । अभी तक उनकी एक ही कृति प्राप्त हुई है, जिसका नाम है, **'कवित्त रत्नाकर'** । कुछ इतिहासकारों ने इनकी दूसरी कृति 'काव्य-कल्पद्रुम' भी मानी है, पर वह उपलब्ध नहीं है । और कुछ लोग **'काव्य-कल्पद्रुम'** और **'कवित्त-रत्नाकर'** को एक ही ग्रंथ मानते हैं । कवि-रत्नाकर में पाँच तरंगें और तीन सौ चौरानबे छंद हैं। इसके अन्तर्गत सेनापति ने श्लेष अलंकार, श्रृंगार, षट्ऋतु, रामायण और रामरसायन का वर्णन किया है । इनकी प्रथम तीन तरंगों से स्पष्ट हो जाता है

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

कि इनका प्रणयन रीति-परम्परा का ध्यान रखकर किया गया है। इनके छंदों की मूलचेतना रीति-कालीन है। इसीलिए इन्हें रीति-बद्ध कवि मानने में कोई आपत्ति नहीं हो सकती।

सेनापति का प्रिय अलंकार श्लेष है। इसीलिए इन्होंने पूरी-की-पूरी तरंग इसी श्लेष अलंकार का चमत्कार दिखाने के लिए रची है। इनके ये श्लेष बड़े रोचक एवं काव्य-चमत्कार से पूर्ण हैं। श्लेष-योजना में सेनापति की समता करने वाला केशव को छोड़कर अन्य कोई कवि नहीं। सभंग पद-श्लेष और अभंग पद-श्लेष दोनों का चमत्कार इसमें मिलता है। श्लेष के आधार पर इन्होंने अनेक रोचक साम्य स्थापित किये हैं। इन्होंने राम-कथा को गंगाधर के समान, गंगा में मञ्जन-अंजन के समान तथा बचन ईख के समान सिद्ध किया है। इन्होंने एक श्लेष में सीतापति को साहु के समान प्रकट किया है। छंद इस प्रकार है :

"जाके रोजना में में सेस सहस बदन पढ़े,
पावत न पार जउ सागर सुमति को।
कोई महाजन ताकी सरि को न पूजे,
नभ जल थल व्यापि रहे अद्भुत गति को।
एक-एक पुर पीछे अगनित कोठा तहाँ,
पहुँचत आप सँग साथी न सुरति को।
बानियै बर बानी जाकी हुण्डी न फिरति,
सोई नाहु सियरानी जू को साहु सेनापति को।"

इसी प्रकार अन्य अनेक चमत्कारी छंद इसमें हैं। कवित्त रत्नाकर के दूसरी तरंग में श्रृंगार वर्णन है, जिसके भीतर नख-शिख सौन्दर्य, उद्दीपन भाव, वयः संधि आदि का मनोहर चित्रण हुआ है। श्रृंगार के कहीं-कहीं बड़े सुन्दर चित्र इसमें हैं। पर मूल प्रयत्न शब्द-चमत्कार-प्रदर्शन का है, भाव और गुण का विश्लेषण उतना नहीं है। इस बात को स्पष्ट करने वाला निम्नलिखित छंद दृष्टव्य है :

"नूपुर को झनकाइ मेदनी धरति पाइ,
ठाढ़ी आइ आंगन भई ही साँझी बार सी।
करता अनूप कीन्ही रानी मैं न भूप किसी,
राजे रासि रूप की विलास-को अधार सी।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

सेनापति जाके हक बूत ह्वै मिलत दौरि,
कहत अधीनता को होत है सिपारसी ।
गेह को सिंगार सी सुरत सुख सार सी,
सो प्यारी मानो आरसी चुभी है चित आरसी ।"

सेनापति की अप्रतिम सफलता उनके उत्कृष्ट ऋतु-वर्णन में है जिसमें यद्यपि शब्द और अर्थ का चमत्कार भरा पड़ा है, परन्तु वर्णित ऋतु का सहज और यथार्थ स्वरूप उनके छंदों में बड़ा खरा उतरता है। प्रत्येक ऋतु में उठने वाले लोक-मानव के सहज भाव भी ऋतु-वर्णन के छंदों में तरंगित हो उठते हैं। इनके ऋतु-वर्णन के छंद ही सर्वाधिक प्रसिद्ध हैं। यद्यपि सभी ऋतुओं का सुन्दर वर्णन उन्होंने किया है, पर ग्रीष्म और वर्षा का वर्णन अत्यन्त प्रभावशाली है। केवल एक छंद ही इसके लिए पर्याप्त होगा —

"दूरि जदुराई, सेनापति सुखदाई देखौ,
आई रिपु पाउस, न पाई प्रेम पतियाँ ।
धीर जलधर की, सुनत धुनि धर की है,
दर की सुहागिल की छोह भरी छतियाँ ।
आई सुधि वर की, हिये में आनि खरकी तू,
मेरी प्रान प्यारी यह पीतम की बतियाँ ।
बीती औधि आवन की, लाल मन भावन की,
डग भई बावन की, सावन की रतियाँ ।।"

इससे स्पष्ट है कि इनके ऋतु-वर्णन बड़े मार्मिक हैं। चौथी और पाँचवीं तरंगों में राम का चरित्र और राम भक्ति-भावना का संक्षिप्त सुन्दर वर्णन है। इन तरंगों में श्रृंगार, वीर, शान्त और भक्ति-भाव प्रधान हैं। पाचवीं तरंग में भी आलंकारिक चमत्कार भरा पड़ा है। जिसमें यमक, श्लेष, अनुप्रास, चित्र, प्रश्नोत्तर आदि के चमत्कार की विशेषता है।

सेनापति की कविता में उनकी प्रतिभा फूटी पड़ती है। निश्चित एवं सुनि-योजित लय में संतुलित गति से चलती हुई उनके छंदों की पंक्तियाँ नर्तकी के पद-संचार का सौंदर्य बिखेरती हैं। उनके वर्णों और शब्दों का ध्वनि-सौन्दर्य नृत्य के मनोहर लालित्य से युक्त है। इससे स्पष्ट होता है कि शब्दों और भाषा पर उनका असाधारण अधिकार है। शब्द-चमत्कार के साथ-साथ उनकी कविता में उक्तिवैचित्र्य उनके छन्दों को स्मरणीय बनाता है जो उनकी प्रतिभा और

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

सूझ की परिचायक है । इन सब विशेषताओं से युक्त सेनापति की कविता एक अपना परिमार्जित और विलक्षण व्यक्तित्व प्राप्त किए हुए हैं और उसे अन्य कवियों के बीच सहज ही पहचाना जा सकता है । सेनापति का रचना-काल सन् १६५० ई० के लगभग रहा है ।

बिहारी

बिहारी रीति-काल के सर्वश्रेष्ठ कवि माने जाते हैं । बिहारी का जन्म ग्वालियर में हुआ था । इनके पिता का नाम केशव राय था । परन्तु ये केशव राय प्रसिद्ध आचार्य केशवदास से भिन्न थे । बिहारी माथुर चौबे थे । इनका जन्म सन् १९९५ में हुआ था । इनका सम्बन्ध ओरछा से भी था और प्रारम्भ में इन्होंने केशवदास के ग्रंथों का अध्ययन किया । इनके पिता निम्बार्क सम्प्रदाय के महंत नरहरिदास के शिष्य थे । बिहारी ने उनके यहाँ संस्कृत, प्राकृत के काव्य-ग्रंथों का अध्ययन किया था । केशवदास के ओरछा छोड़ देने पर ये वृन्दावन आ गये और वहीं मथुरा के किसी ब्राह्मण परिवार में इनका विवाह हुआ । तदुपरांत ये वहीं रहने लगे । इसी बीच इन्होंने फारसी काव्य का अभ्यास किया और अब्दुल रहीम खानखाना तथा बादशाह शाहजहाँ से भेंट की । शाह-जहाँ के कृपापात्र बिहारी का सम्पर्क अन्य राजाओं से भी हुआ और अनेक राज्यों से इनके लिए वृत्ति बँध गई । सन् १६४५ के आस-पास ये जब वृत्ति लेने जयपुर गये तो पता लगा कि वहाँ के महाराज जयसिंह अपनी नव-विवा-हिता रानी के प्रेम में मुग्ध होकर महलों में ही पड़े रहते हैं, और राज-काज देखना छोड़ दिया है । सभी सामंतगण तथा प्रजा के लोग व्यथित थे, उसी समय बिहारी ने एक दोहा लिखकर महाराज के पास पहुँचाया, जो इस प्रकार है :

नहिं पराग नहिं मधुर मधु, नहिं विकास इहि काल ।
अली कली ही सों बिध्यो, आगे कौन हवाल ।।

बिहारी के इस दोहे का बड़ा अद्भुत प्रभाव पड़ा और महाराजा जयसिंह तथा चौहानी रानी दोनों ही बड़े प्रसन्न हुए और उनको काली पहाड़ी नामक ग्राम दिया गया तथा प्रति छंद पर एक मुहर पुरस्कार में देने का संकल्प भी किया । बिहारी तदुपरांत जयपुर में ही रहने लगे और आमेर दरबार के राज-कवि के रूप में अपना जीवन सुख-पूर्वक व्यतीत करने लगे । चौहानी रानी से कुमार रामसिंह का जन्म हुआ और तदनंतर राजकुमार के बड़े होने पर बिहारी ने ही

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

उसका विद्यारम्भ संस्कार कराया । कुमार के पढ़ने के लिए इन्होंने अपने दोहों का संग्रह किया, साथ-ही-साथ अनेक दोहे भी आवश्यकतानुसार संकलित किये, और इस प्रकार बिहारी का जयपुर राज-परिवार में विशिष्ट स्थान हो गया।

बिहारी के कोई संतति नहीं थी। कहते हैं कि निरंजन कृष्ण को इन्होंने गोद लिया था। एक कृष्ण कवि बिहारी सतसई के टीकाकार थे। हो सकता है ये कृष्ण कवि निरंजन कृष्ण ही हों। परम्परा के अनुसार बिहारी सतसई की समाप्ति १६६२ (सं १७१९ वि०) माना जाता है। और यह भी कहा जाता है कि उनका देहावसान सन् १६६३ में (सं० १७२०) में हुआ।

बिहारी के कविरूप में ख्याति का मूल आधार उनका अन्यतम् ग्रंथ 'सतसई' है। संस्कृत और हिन्दी के सतसई साहित्य की परम्परा में इसका सर्वश्रेष्ठ स्थान है। सतसई की रचना बिहारी ने महाराज जयशाह के आदेशानुसार की थी जैसा कि उनके अंतिम दोहे से प्रगट होता है :

हुकुम पाय जय शाह को हरि राधिका प्रसाद।
करी बिहारी सतसई, भरी अनेक संवाद ॥

बिहारी-सतसई की रचना 'गाथा-सप्तशती', 'आर्या सप्तशती', 'अमरूक-शतक' आदि ग्रंथों की प्रेरणा से निर्मित एक विविध रत्न मणि-माल है, जिसकी आभा के सामने आज भी कोई मुक्तक काव्य ठहर नहीं पाता। मुक्तक परम्परा में बिहारी का स्थान शीर्ष पर है। सतसई में बिहारी ने अलंकार, रस, भाव, नायिका-भेद, ध्वनि, वक्रोक्ति रीति, गुण आदि का ध्यान रखकर सुन्दर दोहे रचे हैं। यह सतसई-परम्परा की एक उज्ज्वल कड़ी है। सतसई के अन्तर्गत आलंकारिक चमत्कार और भाव-सौन्दर्य दोनों ही हैं। इसमें ध्वनि काव्य के उत्कृष्ट उदाहरण हैं। अतः बिहारी की रचना रीति काव्य है, इसमें सन्देह नहीं।

बिहारी-सतसई की अनेक टीकाएँ हो गई हैं, जिनसे उसकी लोक-प्रियता का पता चलता है। डॉ० ग्रियर्सन के अनुसार योरप महाद्वीप में बिहारी सतसई के समकक्ष कोई रचना नहीं। बिहारी ने प्रेम और कला दोनों का महत्व अंकित किया है। उन्होंने लिखा है—

तंत्रीनाद कवित्त रस, सरस राग रति रंग।
अनबूड़े-बूड़े तिरे, जे बूड़े सब अंग ॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

बिहारी का समस्त जीवन काव्य-साधना में ही व्यतीत हुआ, इसलिए उनका एक-एक दोहा मर्मस्पर्श करने वाला है और हमारी आँखों के समक्ष सौन्दर्य तथा प्रेम-क्रीड़ा की झाँकियाँ प्रस्तुत करता है। बिहारी अपने संक्षिप्त वर्णन और नपे-तुले शब्दों में किसी वस्तु, व्यक्ति या भाव का जगमगाता रूप निखार कर प्रस्तुत करते हैं। उनके रूप-वर्णन, वय-संधि के चित्रण, अलंकृति-हीन सौन्दर्य, मादक एवं गदराई युवावस्था की मधुर झलकें मन को मुग्ध कर लेते हैं, और ये चित्रण केवल काल्पनिक न होकर जीवन के यथार्थ रूप हैं। उदाहरणार्थ निम्नलिखित दोहे दृष्टव्य हैं :

छुटी न सिसुता की झलक, झलक्यो जोबन अंग।
दीपति देह दुहून मिलि, दिपत ताफ्ता रंग ।।
वाहि लगै लोयनि लगै, कौन जुवति की जोति।
जाके तन की छाँह ढिग, जोन्ह छाँह सी होति ।।
सई जु तन छबि बसन मिलि, बरनि सकै सुन बैन।
अंग-अंग आँगी दुरी, आँगी अंग दुरै न ।।

बिहारी ने अपनी पैनी दृष्टि से जीवन का निरीक्षण किया था, अतः उन्होंने युवा मनोवृत्तियों का सजीव चित्रण किया है। इन चित्रणों में एक नाटकीय विशेषता प्राप्त होती है। श्रृंगार के संयोग पक्ष के चित्रण में सिद्ध-हस्त हैं। आंतरिक भावना से प्रेरित शारीरिक चेष्टाओं का तथा विभिन्न कार्य-कलाप का चित्रण बिहारी इस प्रकार करते हैं कि वह मानस-पटल पर सदा के लिये अमिट हो जाता है। अंग-चेष्टाओं और क्रिया-कलाप के कुछ चित्रण निम्न-लिखित दोहों में देखे जा सकते हैं :—

सटपटाति सी ससि मुखी, मुँख घूँघट पट ढाँकि।
पावक झर सी झमकि कै, गई झरोखे झाँकि ।।
मुख धोवत एँड़ी धँसति, हँसति अनगवति तीर।
धँसति न इन्दीवर नयनि, कालिन्दी के नीर ।।
बतरस लालच लाल के, मुरली धरी लुकाय।
सौंह करै भौंहनि हँसै, दैन कहै नटि जाय ।।

इस प्रकार रूप और भाव के चित्रण में विहारी अद्वितीय हैं। बिहारी ने न केवल भावुकतावश सौन्दर्य-चित्रण किया, वरन् जीवन के प्रौढ़ अनुभवों का

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

उद्घाटन किया, वे अपने भावों और विचारों को कलात्मक रूप में प्रस्तुत करने की अद्भुत प्रतिभा से सम्पन्न थे। बिहारी ने केवल सौन्दर्य का ही चित्रण नहीं किया, वरन् भक्ति एवं नीति के मार्मिक दोहे भी लिखे हैं। इस प्रकार सतसई शृंगार, भक्ति और नीति की त्रिवेणी है।

ब्रजभाषा पर बिहारी का असाधारण अधिकार था। उनको शब्द और वर्ण के स्वभाव की परख थी। शब्द और वर्ण उनके दोहों में नगों के समान जड़े हैं, और रत्नों की आभा बिखेरते हैं। शब्द को माँजने, चमकाने, मोड़ने और सँवारने की कला में बिहारी सिद्ध-हस्त हैं। बिहारी की रचना में ब्रज-भाषा अपनी प्रौढ़ता और भाव-सम्पन्नता में इठलाती हुई चलती है। उसकी लय और गति, संगीत और नर्तन की विशेषताओं से युक्त है। उनकी भाषा प्रांजल, प्रौढ़, मधुर और सरस है। निम्नलिखित उदाहरण उसके प्रमाण हैं :–

अंग-अंग नग जगमगति, दीप सिखा सी देह।
दिया बुझाए हू रहै, बड़ो उजेरो गेह ॥
रस सिंगार मंजन किये, कंजन भंजन दैन।
अंजन रंजन हू बिना, खंजन गंजन नैन ॥
फिरि-फिरि चित उतही रहत, टूटी लाज की लाव।
अंग-अंग छवि झौंर में, भयो भवँर की नाव ॥
केसिर कैसिर क्यों सकै, चंपक कितक अनूप।
गात रूप लखि जात दुरि, जात रूप को रूप ॥

उपर्युक्त दोहों से स्पष्ट है कि भाव, अनुभूति और चेतना को बिहारी किस प्रकार मार्मिक शब्दों और प्रभावशाली बिम्बों से प्रकट करने की क्षमता रखते हैं। बिहारी विदग्ध कवि होते हुए भी अत्यन्त मौलिक हैं। केवल एक ग्रंथ की रचना करके भी कवियों की पंक्ति में बिहारी का उत्कृष्ट स्थान है। कवि के रूप में वे हिन्दी साहित्य के गौरव हैं और उनकी 'सतसई' काव्य की अपूर्व निधि है। बिहारी सहज, एवं शाश्वत मानव-भावनाओं के कवि तो हैं ही, वे एक सांस्कृतिक कवि भी हैं, जिन्होंने अपनी रचना में अपने युग के समाज और जीवन तथा संस्कृति का मनोहारी चित्रण किया।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

कविवर मतिराम

मिश्रबंधुओं के द्वारा हिन्दी कविता के नवरत्नों में परिगणित मतिराम अत्यन्त प्रतिभा-सम्पन्न एवं उत्कृष्ट ब्रजभाषा-कवि हैं। मतिराम के जीवनवृत्त एवं उनके ग्रन्थों और कवित्व की सूचना प्रायः हिन्दी साहित्य के समस्त इतिहास-ग्रन्थों में मिलेगी परन्तु मतिराम सम्बन्धी उल्लेख भिखारीदास कृत 'काव्य'-निर्णय', गोकुल कृत 'दिग्विजयभूषण' जैसे काव्य-ग्रन्थों में भी मिलते हैं। हिन्दी साहित्य के इतिहासकारों—शिवसिंह सेंगर, गार्सा द तासी, जार्ज ग्रियर्सन, मिश्रबंधु, रामचन्द्र शुक्ल, श्यामसुन्दरदास आदि ने जो सूचना अनेक जीवन-वृत्त और रचनाओं के सम्बन्ध में दी है, वह परम्परा-प्रसिद्ध एवं ग्रन्थों के उल्लेखों के आधार पर है। जिस ग्रन्थ में लगभग समस्त सामग्री का उपयोग पहले-पहल भली रीति से किया गया, वह है कृष्णबिहारी मिश्र कृत "मतिराम ग्रन्थावली"। सबसे पहले विस्तृत जीवन चरित देने वाला ग्रन्थ "हिन्दी नवरत्न" है जिसका मुख्य आधार "शिवसिंह सरोज" है। परन्तु अब मतिराम की जीवनी एवं साहित्य को लेकर दो शोध-प्रबन्ध भी लिखे जा चुके हैं—एक महेन्द्रकुमार का "मतिराम—कवि और आचार्य" है और दूसरा त्रिभुवन सिंह का "महाकवि मतिराम"। इन दोनों ग्रन्थों में लगभग समग्र उपलब्ध सामग्री का विवेचनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। परन्तु, अनेक प्रमाण होते हुए भी इन दोनों ही विद्वानों ने मतिराम के नाम पर मिलने वाले समस्त ग्रन्थों के रचयिता एक ही और प्रसिद्ध कवि मतिराम को माना है।

मेरा विचार इस सम्बन्ध में मतिराम नाम के दो कवियों को स्वीकार करने के पक्ष में है। इन ग्रन्थों अर्थात् फूलमंजरी, रसराज, ललितललाम, सतसई, अलंकार पंचाशिका, छन्दसार (पिंगल) संग्रह या वृत्तकौमुदी, साहित्यसार और लक्षणश्रृंगार—के रचयिता दो मतिराम थे, इस बात की पुष्टि में निम्नलिखित प्रमाण दिये जा सकते हैं—

(१) मतिराम का जन्म-समय १६०३ ई० (सं० १६६०) के लगभग आता है और 'कौमुदी' की रचना उन्होंने १७०१ ई० (सं० १७५८) में की और कुछ लोगों का विचार है कि 'साहित्यसार' आदि की रचना और भी बाद में हुई। एक ही व्यक्ति के सभी ग्रन्थ मानने पर 'वृत्तकौमुदी' की रचना ९८ वर्ष

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

की आयु में और अन्य ग्रन्थों की रचना उसके भी बाद ठहरती है । इस अवस्था में मतिराम का श्रीनगर (गढ़वाल) के राजा स्वरूप साहि बुन्देला के आश्रय में जाना और 'छन्दसागर-संग्रह' या 'वृत्त-कौमुदी' की रचना करना अधिक संगत नहीं जान पड़ता ।

(२) दोनों मति-रामों के वंश परिचय भिन्न-भिन्न हैं और दोनों का सम्बन्ध भिन्न गोत्रों के भिन्न-भिन्न व्यक्तियों से है ।[१]

(३) दोनों मतिरामों के समयों में ही थोड़ी भिन्नता नहीं, वरन् दोनों का कार्यक्षेत्र भी भिन्न रहा है । मतिराम का आगरा, बूँदी आदि था तथा दूसरे मतिराम का पहाड़ी क्षेत्र, कुमायूँ, गढ़वाल आदि था । (४) दोनों की भाषा-शैली में भी भिन्नता परिलक्षित होती है । जहाँ 'रसराज' और 'ललित-ललाम' के रचयिता मतिराम की भाषा समर्थ, विदग्ध, अलंकार एवं भाव-व्यंजना की अद्भुत क्षमता-सम्पन्न, ऐतिहासिक संदर्भ-संयुक्त तथा छन्द प्रवाह-पूर्ण, सुन्दर, मोहक गतिवाले हैं, वहाँ वृत्तकौमुदीकार की भाषा सामान्य, छन्द शिथिल तथा शैली अभिधात्मक है ।

(५) 'रसराज' के प्रणेता मतिराम ने न कहीं किसी ग्रन्थ में अपना परिचय दिया है और न रचना-काल ही, क्योंकि वे स्वयं ही अति प्रसिद्ध कवि थे और उनके ग्रन्थ भी अति विख्यात थे । किसी भी दरबार में मतिराम जैसे कवि का जाना उसकी परम शोभा ही थी । अतः उन्हें अपने परिचय की आवश्यकता नहीं पड़ी । परन्तु वृत्तकौमुदीकार की शैली ऐसी है जिसमें रचनाकाल भी दिया हुआ है । अतः दोनों व्यक्तियों की भिन्न पद्धतियाँ हैं ।

(६) यदि 'अलंकारपंचाशिका' और 'वृत्तकौमुदी' या 'छन्दसार संग्रह' ग्रन्थ बाद मे प्रसिद्ध मतिराम द्वारा अधिक परिपक्वावस्था में लिखे गये होते, तो वे निश्चय ही वैचारिक और भाषा सम्वन्धी अधिक प्रौढ़ता का द्योतन करते । यह हो सकता है कि उनमें कवित्व की मात्रा कम हो जाती, पर उनमें अधिक संदर्भ-गर्भता होनी चाहिए थी । परन्तु ऐसा नहीं है । उपर्युक्त कारणों से दोनों मतिराम भिन्न-भिन्न हैं, यह मानना उचित है । ऊपर लिखे हुए प्रथम

१. देखिये वृत्तकौमुदीकार मतिराम का परिचय तथा रसचन्द्रिका में बिहारीलाल का परिचय—(महाकवि मतिराम—डॉ० त्रिभुवनसिंह, पृ० १०६ व ११४)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

चार ग्रंथों के प्रणेता, प्रसिद्ध कवि मतिराम हैं और दूसरे चार ग्रंथों के रचयिता दूसरे मतिराम हैं।

प्रथम प्रसिद्ध मतिराम उत्तर प्रदेश के कानपुर जिले में स्थित टिकमापुर (त्रिविक्रमपुर) के निवासी और प्रसिद्ध आचार्य और कवि चिन्तामणि त्रिपाठी और भूषण के भाई थे। इसका उल्लेख 'वेशभास्कर' एवं 'तजकिरये सर्व आजाद हिन्द' में हुआ है। भूषण ने प्रसिद्ध ग्रंथ 'शिवराज भूषण' में अपना परिचय इस प्रकार दिया है—

'द्विज कनौज कुल कस्यपी, रतन सुत धीर।
बसत त्रिविक्रम पर सदा, तरनि तनूजा तीर ।।२६।।

इससे स्पष्ट होता है कि भूषण रत्नाकर के पुत्र और कश्यपगोत्रीय कान्यकुब्ज त्रिपाठी ब्राह्मण थे। इस बात की पुष्टि, मतिराम के प्रपौत्र तथा चरखारी नरेश महाराज विक्रमादित्य के राजकवि बिहारीलाल कृत 'विक्रम सतसई' की टीका "रसचंद्रिका" के अन्तर्गत होती है। इसमें अपना परिचय देते हुए बिहारीलाल ने लिखा है—

बसत त्रिविक्रम पुरनगर, कालिन्दी के तीर।
विरच्यो भूप हमीर जबु, मध्यदेश को हीर ।।१।।
भूषन चिन्तामनि तहाँ, कविभूषन मतिराम।
नृप हमीर सनमान ते, कीन्हें निज-निज धाम ।।२।।
हैं पन्ती मतिराम के सुकवि बिहारीलाल।
जगन्नाथ नाती विदित, सीतल सुत सुभचाल ।।३।।
कस्यप बँस कनौजिया, विदित त्रिपाठी गोत्र।
कविराजन के वृन्द में, कोविद सुमति उदोत ।।४।।

इससे स्पष्ट होता है कि भूषण और बिहारीलाल एक ही गोत्र के थे और निश्चय रूप से मतिराम और भूषण का सम्बन्ध भाई-भाई का था। नाती और पंती शब्दों से कुछ लोग दौहित्र (पुत्रीपुत्र) और प्रदौहित्र का अर्थ लगाने के पक्ष में हैं। और इस प्रकार वे मतिराम को वत्सगोत्री परम्परा में डालकर उपर्युक्त वर्णन मतिराम की पुत्री के वंश की परम्परा में रखना चाहते हैं, पर वह तर्क-संगत नहीं। पहली बात तो यह है कि वे कश्यप गोत्र षट्कुलों में से हैं और षट्कुलों में परस्पर विवाह की ही प्रथा प्रचलित रही है। वत्सगोत्रीय

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

सम्बन्ध उनसे नहीं होते रहे। दूसरी बात यह है कि यदि ऐसा कुछ होता, तो चिन्तामणि या भूषण से बिहारीलाल का अधिक सीधा सम्बन्ध होता, क्योंकि यदि मतिराम वत्सगोत्री होते और बिहारीलाल के परनाना होते, तो या तो बिहारीलाल अपने परबाबा (प्रपितामह) का नाम देते और यदि वे भूषण या चिन्तामणि ही होते, तो अपने को इनका प्रपौत्र कहने में भी गर्व का अनुभव करते। परन्तु ऐसा उन्होंने नहीं किया। उन्होंने पिता से पहले अपने बाबा (पितामह) के रूप में जगन्नाथ का और परबाबा (प्रपितामह) के रूप में ही मतिराम का स्मरण किया है। अतः पंती और नाती शब्द, प्रपौत्र और पौत्र के लिए ही आए हैं। ये शब्द उस क्षेत्र में इन अर्थों में प्रचलित हैं। (लेखक का जन्मस्थान टिकमापुर से दस-बारह मील दूर ही है और उसने स्वयं वहाँ जाकर भी इसकी पुष्टि की है। अब भी वहाँ 'कबिन के घर' के रूप मे घरों के खंड-हर विद्यमान हैं)। अतः मतिराम और भूषण दोनों ही कश्यपवंशीय त्रिपाठी तथा परम्परा-प्रसिद्ध के अनुसार सहोदर भाई थे। वत्सगोत्रीय वनपुर निवासी मतिराम दूसरे थे।

इसके अतिरिक्त "ललितललाम" ग्रंथ में कविवर मतिराम ने जो लक्षण दिए हैं, लगभग वही लक्षण भूषण ने अपने ग्रंथ शिवराज भूषण में भी स्वीकार किए हैं। 'ललितललाम' पहले बना है, अतः निस्संकोच लक्षणों को ले लेने के कारण भी दोनों हो का सगे भाई होना प्रमाणित हो जाता है, जिसमें मतिराम बड़े और भूषण छोटे थे, यह भी स्पष्ट होता है। किंवदन्ती में भी भूषण का अपनी बड़ी भौजाई के ताना मारने पर घर से निकल जाने की ख्याति है। हो सकता है कि वे भौजाई मतिराम की स्त्री ही हों। इनके पति राजदरबारों में प्रसिद्धि और सम्पत्ति प्राप्त कर चुके थे। अतः चिन्तामणि, मतिराम और भूषण ये सगे भाई थे और इनके पिता का नाम रत्नाकर त्रिपाठी था।

मतिराम ने किसी भी ग्रंथ में अपना कोई परिचय नहीं दिया। अतः इनके जन्म-समय के सम्बन्ध में भी कुछ कहना कठिन है। 'फूलमंजरी' के आधार पर इनका जन्म-समय कृष्णबिहारी मिश्र के अनुसार १६०२ ई० (सं० १६६० वि०) के लगभग आता है। "फूलमंजरी" इनकी सर्वप्रथम रचना है, जो जहाँगीर की आज्ञा से आगरे में लिखी गई। जहाँगीर अपने राज्यारोहण का १६ वाँ जलूसी वर्ष आगरे में मना रहा था, उसी समय के आस-पास इसकी

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

रचना हो सकती है। वह समय १०३० हिजरी या सं० १६७८ वि० था। मतिराम की यह किशोरावस्था की रचना मानने से उनकी अवस्था उस समय १८ वर्ष की रही होगी। अतः मतिराम का जन्म १६०२ ई० (१६६० वि०) ठहरता है।

मतिराम का अधिकांश समय बूँदी दरबार में व्यतीत हुआ था और वहाँ के हाड़ा राजाओं की वीरता और चरित्र का वर्णन इन्होंने अपने अलंकार ग्रंथ "ललितललाम" में किया है। जिन राजाओं का वर्णन उसमें आया है, वे राव सुरजन, रावराजा भोज, राव रतनसिंह, महाराज छत्रसाल और दीवान भावसिंह हैं। 'फूलमंजरी' इन्होंने जहाँगीर के लिए बनायी। सम्भव है, बूँदी दरबार से इनका सम्बन्ध उस समय भी रहा हो और बूँदी नरेश के साथ ही ये आगरे गए हों। "ललितललाम" ग्रंथ दीवान भावसिंह के आश्रय में लिखा गया और इसके अनेक छन्द उनकी वीरता एवं दान की प्रशंसा में हैं। इसके अतिरिक्त 'मतिराम सतसई' किन्ही राजा भोगनाथ के लिए लिखी गई जिनका ठीक इतिहास अभी ज्ञात नहीं है। ये भी राजस्थान या मध्यप्रदेश के कोई राजा या धनी-मानी किन्तु रसिक व्यक्ति ज्ञात होते हैं।

प्रसिद्ध मतिराम की केवल चार रचनाएँ ही प्रामाणिक मानी जानी चाहिए, जो रचनाक्रम के विचार से हैं—फूलमंजरी, रसराज, ललितलमाम और सतसई।

द्वितीय मतिराम का परिचय केवल 'वृत्तकौमुदी' के आधार पर ही प्राप्त होता है।

तिरपाठी बनपुर बसै, वत्सगोत्र सुठिगेह,
विवुध चक्रमणि पुत्र तहँ, गिरिधर गिरिधर देह।
भूमिदेव बलभद्र हुआ, नितहि तनुज मुनि-गान।
मंडित पंडित मंडली, मंडन मही महान।।
तिनके तनय उदार मति, विस्वनाथ हुआ नाम।
दुतिधर श्रुतिधर कौ अनुज सकल गुननि कौ धाम।
तासु पुत्र मतिराम कवि, निज मति के अनुसार।
सिंह स्वरूप सुजान को बरन्यो सुजस अपार।।

—वृत्तकौमुदी

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

इस, 'वृत्तकौमुदी का विवरण भगीरथप्रसाद दीक्षित ने अपने लेख तथा 'भूषण विमर्श' नामक ग्रंथ में दिया है। इसके अनुसार मतिराम के पिता का नाम विश्वनाथ था, पितामह का बलभद्र, प्रपितामह का गिरिधर। ये वत्सगोत्री त्रिपाठी थे और इनका निवासस्थान बनपुर था। ये प्रसिद्ध मतिराम से भिन्न थे, जिनका परिचय बिहारीलाल की 'रसचंद्रिका' में और विश्वनाथप्रसाद मिश्र द्वारा ढूँढ़े गए मथुरा के चौबों के यहाँ प्राप्त वंशवृक्ष में मिलता है। इसके अनुसार मतिराम के पिता रतिनाथ और पुत्र जगन्नाथ, पौत्र शीतल तथा प्रपौत्र बिहारीलाल थे। अतः यह कल्पना भी सही नहीं उतरती कि मतिराम की पुत्री की वंशपरम्परा में बिहारीलाल थे और इस कारण गोत्र-भिन्नता है। इसलिए दोनों मतिराम भिन्न-भिन्न थे और 'वृत्तकौमुदी' के रचयिता वत्सगोत्री द्वितीय मतिराम थे और वे 'रसराज' के रचयिता कश्यपगोत्री मतिराम से भिन्न व्यक्ति थे।

वत्सगोत्रीय, बनपुर निवासी मतिराम द्वितीय का परिचय और अधिक प्राप्त नहीं होता। यों टिकमापुर के निकट ही जिला फतेहपुर में बनपुरा नामक ग्राम है और हो सकता है कि यही मतिराम द्वितीय का स्थान वनपुर हो। इन मतिराम की लिखी हुई रचनाएँ हैं अलंकार पंचाशिका, साहित्यसार लक्षण श्रृंगार और छन्दसार संग्रह या वृत्तकौमुदी।

मतिराम रीतिकाल के सुकुमार कल्पना के कवि माने जाते हैं। यद्यपि इन्होंने काव्यशास्त्रीय परम्परा के अनुसार कई ग्रंथ लिखे, फिर भी इनकी अलंकृति बड़ी सहज और मार्मिक है। सौन्दर्य एवं श्रृंगार भावना की इनकी अभिव्यक्तियाँ अनूठी हैं। इनकी भाषा सहज, मधुर एवं प्रांजल हैं। इन्हें जैसे छन्द-रचना की सिद्धि प्राप्त थी; क्योंकि इनकी शब्दावली आयास-रहित एवं मर्मस्पर्शी है। रीतिकाल में बिहारी सतसई के समान ही मतिराम के 'रसराज' ग्रंथ की धूम रही जिसमें इन्होंने श्रृंगार और नायिका भेद का सुन्दर निरूपण किया है। इनका 'ललितललाम' अलंकार-निरूपण का ग्रंथ है। इसके अन्तर्गत मतिराम की नव्य कल्पना एवं बिम्बसृष्टि की सतरंगी विशेषतायें प्रकट हुई हैं। उपर्युक्त विशेषताओं के कारण सहज प्रतिभा के धनी कविवर मतिराम रीतियुग के एक उत्कृष्ट कवि माने जाते हैं।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

महाकवि भूषण

महाकवि भूषण के जन्मकाल और नाम के सम्बन्ध में विवाद है, और कुछ लोग इनके आश्रयदाता के सम्बन्ध में भी शंका उठाते हैं कि ये महाराज शिवाजी के समकालीन न होकर उनके पौत्र साहू के समकालीन थे। परन्तु अनेक तथ्यों के आधार पर अब यह बात प्रमाणित हो चुकी है कि भूषण महाराज शिवाजी के ही दरबार में थे और उन्हीं के समकालीन भी थे। इनके बड़े भाई चिंतामणि छत्रसाल शिवाजी के पिता सदाजी भोंसले के आश्रय में रहे। यह भी निर्विवाद है कि चिंतामणि, भूषण और मतिराम तीनों ही भाई थे। उनके चौथे भाई का नाम भी नीलकंठ या जटाशंकर के रूप में कुछ विद्वान मानते हैं। भूषण कान्यकुब्ज वंशीय कश्यपगोत्रीय त्रिपाठी ब्राह्मण थे। इनके पिता का नाम रत्नाकर था और वे कानपुर के अंतर्गत यमुना के समीप टिकवांपुर (त्रिविक्रमपुर) के रहने वाले थे। आज भी इस गाँव में कवियों का घर के रूह में भूषण के परिवार का घर विद्यमान है। भूषण का जन्म १९९२ के आस-पास माना जाता है। ये प्रारम्भ में शिक्षा-दीक्षा प्राप्त नहीं कर सके। परन्तु ऐसी किंवदंती है कि अपनी भावज के ताना देने पर इनके मन में इतना प्रभाव पड़ा कि ये विद्याध्ययन और काव्य-रचना के लिये घोर परिश्रम करने लगे और ये चित्रकूट अधिपति हृदयराम के पुत्र रुद्रराम सोलंकी के यहाँ लगभग ३० वर्ष की आयु में गये और इनकी कविता पर प्रसन्न होकर उन्होंने कवि भूषण की उपाधि दी। यह बात भूषण रचित 'शिवराज भूषण' के निम्नलिखित छंद से स्पष्ट होती है—

कुल सुलंकि चित्रकूट पति साहस शील समुद्र,
कवि भूषण पदवी दई हृदय राम सुत रुद्र।'

इसके उपरांत ही भूषण का यश विस्तृत हुआ। कुछ लोगों का विचार है कि भूषण औरंगजेब के यहाँ भी गये थे। परन्तु इसका कोई प्रमाण नहीं है। सं० १७२४ में भूषण शिवाजी के यहाँ गये और उन्हें अपना छंद सुनाया। वह छंद शिवाजी की प्रशंसा में था। कहते हैं कि उस छंद पर महाराज शिवाजी इतना प्रसन्न हुए कि उसे १८ बार सुना और प्रसन्न होकर भूषण को १८ लाख मुद्रा, १८ हाथी और १८ ग्राम पुरस्कार में दिये और इन्हें अपना राजकवि भी बनाया। वहीं रहकर भूषण ने १८३० में अपना सुप्रसिद्ध ग्रंथ

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

'शिवराज भूषण' रचा । सं० १७३१ में ये शिवाजी के यहाँ से अपने घर आये और मार्ग में बुंदेलकेसरी महाराज छत्रसाल से भेंट की । महाराज छत्रसाल ने भी इनका वड़ा सम्मान किया । भूषण ने प्रसन्न होकर छत्रसाल के लिए 'छत्रसाल दशक' ग्रंथ की रचना की ।

कुछ समय के उपरांत भूषण फिर महाराज शिवाजी के यहाँ गये । और वहाँ रहकर समय-समय पर अनेक छंद बनाते रहे । उनके ये छंद 'शिवा बावनी' नाम से संग्रहीत हैं । भूषण के नाम पर कई अन्य ग्रंथ भी कहे जाते हैं, जैसे भूषण हजारा, भूषण उल्लास, दूषण उल्लास आदि । परन्तु इन ग्रंथों में कोई ग्रंथ उपलब्ध नहीं होते, दूषण उल्लास नामक एक ग्रंथ इनके बड़े भाई चिंतामणि के नाम से उपलब्ध होता है, पर वह भी उनके कविकुल कल्पतरु का एक अध्याय है । इस प्रकार प्रामाणिक रूप से भूषण के ३ ग्रंथ ही माने जा सकते हैं—१ शिवराज भूषण, २ छत्रसाल दशक और ३ शिवाबावनी ।

कविवर भूषण दीर्घजीवी थे और इनकी मृत्यु सं० १७९७ में १०२ वर्ष की भोगकर मानी जाती है। अतः शिवाजी के स्वर्गवासी होने पर इनका संपर्क महाराज छत्रसाल और छत्रपति साहू जी से रहा । साहू जी सं० १७६४ में दिल्ली से मुक्त हुए थे । उसी समय के आस-पास उन्होंने साहू जी और छत्रसाल दोनों की प्रशंसा करते हुए एक छंद लिखा जो इस प्रकार है—

सजत अखण्ड तेज, छाजत सुजस बड़ो,
गाजत गयंद, दिग्गजन उर साल को ।
जाहि के प्रताप से मलिन आफताप होत,
ताप तजि दुज्जन करत बहुख्याल को ।
साज सजि गज, तुरी, पैंदर कतार दीन्हे,
'भूषन भनत ऐसो दीन-प्रतिपाल को ?
और राव-राजा एक मन में न लाऊँ अब,
साहू को सराहौं कै सराहौं छत्रसाल को ।।

(छत्रसाल दशक, ६८१०)

इस छंद के आधार पर पंडित भगीरथप्रसाद दीक्षित ने शिवाजी के समकालीन न मानकर साहू के समकालीन माना था, परन्तु वे दोनों के ही समकालीन थे । इन तीन महाराजाओं के अतिरिक्त भूषण का सम्बन्ध रीवांनरेश

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

अवधूतसिंह, कुमायूं नरेश ज्ञानचंद, गढ़वाल नरेश फतेसाह, जयपुर नरेश सवाई जयसिंह, बूँदी नरेश राव-राजा बुद्धसिंह, असोथर नरेश भगवंत राय रवीची आदि राजाओं से भी था। इस प्रकार काव्य-प्रतिभा के साथ विभिन्न राज्यों की यात्रा से देश का व्यापक अनुभव प्राप्त करने वाले कवि थे।

इस व्यापक अनुभव और अपनी मनोभावना के कारण भूषण ने तत्कालीन भारतीय नरेशों के यहाँ जाकर उनकी परीक्षा के उपरांत शिवाजी को ही एक योग्य और उच्च नरेश के रूप में स्वीकार किया और उसी की प्रशंसा में उन्होंने अपनी कवित्व शक्ति का संयोजन किया। शिवाजी को लेकर लिखे गये इनके ग्रंथ कवि सुलभ अत्युक्तियों से युक्त होते हुए भी अनर्गल और झूठी प्रशंसा के रूप में नहीं हैं। उनके पीछे उदात्त चारित्रिक गुणों की भूमिका है और ऐसे ही व्यक्तियों को प्रशंसित और प्रभावित करने के लिए भूषण ने अपनी काव्य की सृष्टि की। शिवाजी और छत्रसाल सम्बन्धी छंदों में जहाँ एक ओर इन राजाओं के उच्च चरित्र का संकेत मिलता है, वहीं उनसे सम्बन्धित छंदों में अनेक ऐतिहासिक तथ्य भी उपलब्ध होते हैं और इतिहास-कारों ने उनका विश्लेषण करके यह निश्चित किया है कि भूषण द्वारा वर्णित तथ्य ऐतिहासिक हैं, काल्पनिक नहीं।

भूषण उच्च प्रतिभा के कवि थे और उनकी यह प्रतिभा सहज रूप में उनके शब्द चयन और सटीक, उच्च और कभी-कभी विराट कल्पना में प्रकट होती है। कल्पना-प्रसूत उनकी विम्ब-सृष्टि एक अद्भुत नव्यता रखती है एवं उसके द्वारा वस्तु, परिस्थिति, घटना और चरित्र का बड़ा सही उद्घाटन हो जाता है। एक ओर जहाँ शब्दों में निहित भाव को झंकृत, प्रेरित और उत्तेजित करने की शक्ति है, वहीं दूसरी ओर भावानुभूति से भर देते हैं। इसीलिए भूषण का काव्य उनकी सहजा प्रतिभा का साक्षात् प्रमाण है। इस बात को स्पष्ट करने के लिए निम्नलिखित छंद दिये जा रहे हैं—

दुग्ग पर दुग्ग जीते सरजा-सिवाजी गाजी,
तुग्ग वाचे डग्गपर रुंड-मुंड फरके।
'भूषन' भनत बाजे जीति के नागारे भारे,
सारे करनाटी-भूप सिंहल को सरके।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

मारे सुनि सुभट पनारे-वारे उदभट,
तारे लागे फिरन सितारे-गढ़धर के।
बीजापुर बारन के, गोलकुंडा धीरन के,
दिल्ली उर मीरन के दाड़िम से दरके ॥

+ + +

रैया-राय चंपति को चढ़ो छत्रसाल सिंह,
'भूषन' भनत समसेरैं जोम जमकैं
भादों की घटा-सी उठी गरदैं गगन घेरैं,
सेलैं समसेरैं फेरैं दामिनी-सी दमकैं।
खान उमरावन के, आन राज-रावन के,
सुनि-सुनि उर लागैं धन की-सी धमकैं।
बैहर बगारन की, अरि के अगारन की,
नांघती पगारन नगारन की धमकैं ॥

+ + +

जा दिन चढ़त दल साजि अवधूत सिंह,
ता दिन दिगंत लौं दुवन डाटियतु है;
प्रलै के-से धराधर धमकैं नगारा, धूरि,
धारा ते समुद्रन की धारा पाटियतु है।
'भूषन' भनत भुवगोल को कहर तहाँ,
हहरात तगा जिमि गज काटियतु है।
काँच से कचरि जात सेस के असेस फन,
कमठ की पीटि पै पिठी से बाँटियतु है ॥

उक्त छंदो से स्पष्ट है कि भूषण की मूल प्रवृत्ति वीर रस की थी। वीर रस से सम्बन्धित विभिन्न भावों और सन्दर्भों का प्रस्फुरण भूषण की कविता में सहज रूप से देखा जा सकता है। भूषण की रचनाओं में वीर रस के अतिरिक्त रौद्र, भयानक, वीभत्स रसों का भी चित्रण हुआ है, पर वे वीर रस के सहकारी रूप में ही। हास्य, शांत और श्रृंगार के भी कुछ उदाहरण उनकी रचनाओं में मिल जाते हैं। इन सबसे यह स्पष्ट होता है कि भूषण रस-सिद्ध कवि थे।

अनेक स्थलों पर भूषण का वस्तु-वर्णन और दृश्य-चित्रण भी बड़ा रोचक

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

है। इससे यह स्पष्ट होता है कि भूषण मूलतः प्रबंध कवि थे और यदि उन्होंने कोई प्रबंध रचना की होती तो उसमें ये अत्यन्त सफल हुए होते। परन्तु समय की प्रवृत्ति के अनुसार उन्होंने वैसा नहीं किया। इनके 'शिवराज भूषण' में प्रायः सभी अलंकारों का बड़ा सुन्दर स्वरूप स्पष्ट हुआ है, जो इनकी कविता के कलापक्ष को उद्घाटित करता है। कुछ अलंकारों में इनकी विलक्षण सूझ और मौलिकता प्रकट होती है।

भूषण के प्रसंग में एक और प्रश्न उठता है, वह यह कि क्या इन्हें राष्ट्रीय कवि कहा जा सकता है ? और इनकी रचनाओं में औरंगजेब तथा म्लेच्छों के प्रति अनेक तीव्र कटूक्तियों को देखकर इनको जातीय भावना का कवि कहते हैं। विचार करने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि भूषण का विरोध मुसलमानों से नहीं, वरन् अत्याचारी औरंगजेब से और औरंगजेब के कुकृत्यों और कट्टरतापूर्ण कार्यों को लक्ष्य करके ही भूषण ने तीव्र प्रहार किए हैं। यह बात इस तथ्य से भी स्पष्ट होती है कि इन्होंने औरंगजेब के पूर्वज बाबर और अकबर की प्रशंसा की है। इससे प्रकट होता है कि भूषण का विरोध मुसलमानों से न होकर अत्याचारी औरंगजेब से ही था। उसी को लक्ष्य करके उन्होंने पीड़ित और अत्याचार की शिकार हिन्दू जाति के पक्ष का समर्थन किया है। भूषण के युग की वह स्थिति हमारे युग की अंग्रेजों के विरोधी उस स्थिति से भिन्न नहीं है, जब भारत में स्वतंत्रता-संग्राम चल रहा था। ऐसी दशा में यदि आधुनिक युग की अंग्रेज-विरोधी भावना को राष्ट्रीय कहा जा सकता है तो उस समय भूषण द्वारा व्यंजित भावनाएँ भी राष्ट्रीय हैं।

भूषण की भाषा मिश्रित भाषा है। उसमें संस्कृत, ब्रज, खड़ी बोली, अरबी, फारसी अनेक प्रचलित भाषाओं का मेल है। और इन विभिन्न भाषाओं के शब्दों को भूषण ने आवश्यकतानुसार तोड़ा-मरोड़ा भी है जिससे कि अपने छंद को वह गति और लय प्रदान कर सके जो उन्हें वांछनीय है। अपने इस कार्य में भूषण सफल हैं। इनकी शैली ओजपूर्ण है और इन्होंने सवैया, घनाक्षरी, दोहा, छप्पय, गीतिका, हरिगीतिका, लीलावती और अमृत ध्वनि छंदों का बड़ी सफलता से प्रयोग किया है। भूषण की कविता से उनका ओजस्वी व्यक्तित्व स्पष्ट होता है और यह बात भी स्पष्ट होती है कि भूषण का कृतित्व उनका सारी प्रतिभा के विस्तार को समेट नहीं पाया।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

देवदत्त (देवकवि)

हिन्दी के ब्रजभाषा काव्य के अन्तर्गत देव महाकवि के रूप में प्रतिष्ठित हैं। यद्यपि ये कवि प्रतिभा में बिहारी, भूषण, मतिराम आदि से कम नहीं वरन् कुछ बढ़कर ही सिद्ध होते हैं, फिर भी इनका किसी एक विशिष्ट राज दरबार से सम्बन्ध न होने के कारण इनकी वैसी ख्याति और प्रसिद्ध नहीं हुई। देव को अत्यधिक प्रसिद्ध करने वाले लेखकों में मिश्रबन्धु हैं जिनके विचार से देव का स्थान हिन्दी साहित्य में तुलसी के बाद आता है। देव और बिहारी में कौन अधिक श्रेष्ठ है इसको लेकर एक विवाद भी चला था और जिसके अनुसार 'देव और बिहारी' की रचना पण्डित कृष्णविहारी मिश्र ने और 'बिहारी और देव' की रचना लाला भगवानदीन ने की थी। इन दोनों में देव और बिहारी की काव्य-प्रतिभा को स्पष्ट करने का प्रयत्न है।

'देव' नाम के हिन्दी साहित्य के अन्तर्गत छः-सात कवि मिलते हैं विशेष प्रसिद्ध कवि देव को छोड़कर अन्य देव नामधारी कवियों की कोई विशेष ख्याति नहीं हुई। 'देव' कवि का जन्म सं० १७३० में हुआ था। ये देव सरिया कान्यकुब्ज द्विवेदी ब्राह्मण थे। 'देव' का निवास स्थान इटावा था। "भावविलास" की एक प्रति के निम्नलिखित उल्लेख से यही स्पष्ट भी होता है -

"देवसरिया कवि देव के नगर इटावो वास।"

और 'भाव विलास' की ही साक्षी पर इनके जन्म संवत् की भी पुष्टि होती है जिसकी रचना इन्होंने सं० १७४६ में की थी। वह दोहा इस प्रकार है--

"सुभ सत्रह सौ छियालिस चढ़त सोरहीं वर्ष।
कढ़ी देव मुख देवता भाव विलास सहर्ष॥'

'देव' ने कई आश्रयदाताओं के यहाँ रहकर अपनी रचनाएँ कीं। इनकी रचना अष्टमास औरंगजेब के पुत्र आजमशाह के संकेत पर हुई थी और उसने इन्हें पुरस्कृत भी किया था। संभवतः भाव-विलास भी आजमशाह के आश्रय में लिखी गई हो। 'देव' के दूसरे आश्रयदाता दादरी पति राजा सीताराम; भतीजे भवानीदत्त वैश्य थे। ये चरखी दादरी खोड़ी के रहनेवाले थे इनके

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

लिए इन्होंने "भवानी विलास" नामक ग्रन्थ लिखा। 'देव' के तीसरे आश्रय-दाता कुशल सिंह थे। ये फफूँद के रहनेवाले थे और 'देव' ने इनके लिये "कुशल विलास" नामक ग्रन्थ की रचना की। 'देव' के वास्तविक गुण-ग्राहक और आश्रयदाता राजा भोगीलाल हुए जिनके लिए इन्होंने "रस विलास" नामक ग्रन्थ की रचना की। इनके सम्बन्ध में 'देव' ने अपने "रस विलास" में लिखा है—

"भोगीलाल भूप लख पासन लिवैया जिन
लाखन खरचि रुचि आषर खरीदे हैं।"

देव की कृति "प्रेम चन्द्रिका" ड्योंड़िया खेड़े के राव मर्दनसिंह के पुत्र उद्योगसिंह को समर्पित है। "सुजान विनोद" की रचना दिल्ली के रईस पातीराम के पुत्र सुजान मणि के लिए हुई। इनकी अन्तिम रचना "सुखसागर तरंग" पिसनी के राजा अली अकबर खाँ के आश्रय में लिखी गई।

'देव' की बहुसंख्यक रचनाओं का उल्लेख किया जाता है। कुछ लोग इनके ग्रन्थों की संख्या ७२ और कुछ लोग ५२ कहते हैं। परन्तु इनके प्रामाणिक ग्रन्थ जो प्राप्त होते हैं वे अठारह हैं। अन्य नौ ग्रन्थ भी इनके नाम से उल्लिखित हैं और इस प्रकार कुल २७ ग्रन्थ इनके नाम से मिलते हैं। परन्तु निर्विवाद रूप से जिन अठारह ग्रन्थों को देवकृत स्वीकार किया जा सकता है वे इस प्रकार हैं—

(१) भाव विलास (२) अष्टयाम (३) भवानी विलास (४) रसविलास (५) प्रेमचन्द्रिका (६) राग रत्नाकर (७) सुजान विनोद (८) जगत दर्शन पचीसी (९) आत्मदर्शन पचीसी (१०) तत्व दर्शन पचीसी (११) प्रेम पचीसी (इन चारों पचीसियों का नाम देवशतक भी है।) (१२) शब्द रसायन (१३) सुख सागर तरंग (इतने ग्रन्थ प्रकाशित हैं)। हस्तलिखित ग्रन्थ हैं—(१४) प्रेम तरंग (१५) कुसल विलास (१६) जाति विलास (१७) देव चरित (१८) देवमाया प्रपंच।

देवकृत एक संस्कृत ग्रन्थ भी 'शृंगार विलासिनी' नाम से भरतपुर से प्रकाशित हुआ था। इसका विषय भी शृंगार और नायिकाभेद है और हिन्दी छन्दों की रचना इस ग्रन्थ संस्कृत भाषा में की गई है। यद्यपि इसकी रचना शुद्ध संस्कृत में है फिर भी देव की वास्तविक प्रतिभा के दर्शन इसमें नहीं होते

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

हैं अतएव इस ग्रन्थ को प्रसिद्ध देवकृत मानना संदिग्ध ही कहा जायगा ।

'देव' के इन बहुसंख्यक ग्रन्थों से यह निष्कर्ष निकालना कि सभी ग्रन्थ एक दूसरे से भिन्न हैं, भ्रमात्मक हैं । इनके एक ग्रन्थ के अनेक छन्द दूसरे ग्रन्थों में मिलते हैं और प्राय: इन्होंने अपने किसी पूर्ववर्ती ग्रन्थ को आश्रयदाता का नाम बदल कर दूसरा नाम दे दिया है । देव का अधिकांश वर्ण्य विषय प्रेम और शृंगार है परन्तु प्रेम और शृंगार के सम्बन्ध में उनकी धारणा अत्यंत उच्च है और उनकी भावना उदात्त और उज्ज्वल रूप में प्रकट हुई है । 'देव' का काव्य-शास्त्रीय विवेचन भी जो इनके ग्रन्थों में लक्षण अंश में प्राप्त होता है, अपनी मौलिक विशेषता रखता है । परन्तु 'देव' की अधिक प्रसिद्धि उनके लक्षणों में न होकर उदाहरणों में समाहित है । देव के सवैया और घनाक्षरी दोनों ही अपनी छाप रखते हैं और देव की सुन्दर रचनाओं को किसी दूसरे कवि की रचनाओं में मिलाकर छिपा रखना संभव न होगा । देव की रचना में जितना व्यापक अनुभव मिलता है उतनी ही गहरी भावुकता भी प्राप्त होती है । किसी भी भाव का 'देव'-जैसा सजीव और मर्मस्पर्शी वर्णन असाधारण वस्तु है । 'देव' की कल्पना केवल ऊहात्मक विशेषता ही नहीं रखती वरन् वह अनुभूति के रस से सिंचित होकर सरसता सम्पन्न होती है । इसी प्रकार देव की शब्दावली भी अपनी है । भाषा पर इनका अद्‌भुत अधिकार है । देव की शब्दावली में संगीतमय प्रवाहयुक्त शब्द चयन, छन्द को सहज स्मरणीय बना देता है और रूप, सौन्दर्य, वस्तु, चरित्र के चित्रण में तो देव को अप्रतिम सफलता प्राप्त हुई । देव अपनी इन्हीं विशेषताओं के कारण हिन्दी-साहित्य में अत्यन्त उत्कृष्ट स्थान के अधिकारी हुए हैं यद्यपि समसामयिक राज सम्मान वैसा प्राप्त नहीं हुआ था । 'देव' हिन्दी के श्रेष्ठ कवियों में परिगणित हैं । काव्य-प्रतिभा के साथ-साथ इनकी रचना में वैचारिक मौलिकता एवं अनुभव की सम्पन्नता भी मिलती है । दृश्यों और भावों का विशद मनोरम चित्रण देव की विशेषता है । अनेक छन्दों में देव ने मनोभावों और मन:स्थितियों का बड़ा सूक्ष्म चित्रण किया है । एक उदाहरण दृष्टव्य है—

मूरति वा मनमोहन की मनमोहिनी के हिय में हिरकी-सी ।
'देव' गोपाल को नाम सुने छतिया सियराति सुधा–सिरकी–सी ।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

नीके झरोखनि झाँकि सकै नहिं नैननि लाज घटा घिरकी-सी ।
पूरन प्रीति हिये हिरकी खिरकी खिरकीन फिरै फिरकी-सी ।

देव के अधिकांश छन्द अनुभूति से सराबोर हैं। बिहारी के समान वे तटस्थ दृष्टि वाले व्यक्ति न होकर, प्रखर वैयक्तिक संवेदना के जीव थे। उनके अनेक छन्दों में प्रेम की तीव्रता भी प्रकट होती है। बिहारी की रचना से उनकी रसिकता प्रकट होती है; पर देव की रचना से उनका प्रेमी व्यक्तित्व भी स्पष्ट होता है। देव के अन्तर्गत प्रबंध और गीति दोनों प्रकार के काव्यों की प्रतिभा थी; पर युग के प्रवाह के कारण उसका समुचित प्रस्फुटन नहीं हो पाया। फिर भी जो रचना उन्होंने की वह उनको सर्वोच्चकोटि के कवियों में प्रतिष्ठित करने के लिए पर्याप्त है।

पद्माकर

रीतियुग के अंतिम महत्वपूर्ण कवि पद्माकर थे। ये तैलंग ब्राह्मण थे। इनके पूर्वज गोदावरी के निकट रहा करते थे। बल्लभ सम्प्रदाय में दीक्षित होकर वे बाद में मथुरा शाखा के वैष्णव हुए। इनके पिता मोहनलाल भट्ट अच्छे विद्वान और कवि थे। वे सागर में रहते थे और बाद में बाँदा में आकर बस गये। पद्माकर का जन्म सं० १८१० वि० में सागर में हुआ, क्योंकि इनके पिता और परिवार के लोग कविता करते थे, इसलिए इनके वंश का नाम ही कवीश्वर वंश पड़ गया था। पद्माकर के पिता को सागर, नागपुर, पन्ना, जयपुर, आदि राज्यों में सम्मान और वृत्ति प्राप्त हुई थी। उसी परम्परा में पद्माकर का भी सम्पर्क अनेक दरबारों से हुआ और इनकी काव्य-शक्ति पर मुग्ध होकर अनेक राजाओं ने इन्हें आश्रय दिया। सुगरा निवासी नोने अर्जुन सिंह ने अपना इन्हें काव्य-गुरु बनाया था। ये दतिया के महाराज परीक्षित के यहाँ भी रहे। जयपुर के महाराज सवाई प्रतापसिंह तथा महाराज जगत सिंह के यहाँ इन्हें आश्रय और प्रतिष्ठा मिली। जगत सिंह के नाम पर ही इन्होंने 'जगत-विनोद' नामक रस-ग्रन्थ की रचना की। उदयपुर के राणा भीमसिंह ने भी इनका सम्मान किया था। बूंदी के महाराज भी पद्माकर को बहुत मानते थे और उन्हीं के कहने से इन्होंने राम-रसायन की रचना की थी जिसे कुछ लोग इनके दासी पुत्र की रचना मानते हैं। जयपुर निवास के समय पद्माकर को

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

कुष्ट रोग हो गया था। उसके निवारण के लिए इन्होंने 'प्रबोध-पचासा' की रचना की। ग्वालियर नरेश दौलतराव सिंधिया के यहाँ भी इन्हें आश्रय मिला तथा चरखारी नरेश के यहाँ भी गए थे। इनका अन्तिम समय कानपुर में गंगा तट पर बीता, उस समय वे रुग्ण, निराश और खिन्न हो गये थे। वहीं रहकर इन्होंने 'गंगालहरी' नामक ग्रन्थ की रचना की। पद्माकर का 'पद्माभरण' नामक ग्रन्थ अत्यन्त प्रसिद्ध है। यह चन्द्रलोक के आधार पर लिखा अलंकार ग्रन्थ है। जब कि 'जगत विनोद' रस और नायिका भेद का ग्रन्थ है। पद्माकर ने दतिया के अनूप गिरि उपनाम हिम्मतबहादुर की प्रशंसा में 'हिम्मत बहादुर बिरदावली' की रचना की। सं० १८९० वि० में कानपुर में इनका स्वर्गवास हुआ।

पद्माकर एक विद्वान और सहृदय कवि थे। उनमें वीरता और भक्ति की भावना भी थी, अपने जीवन में इन्होंने काफी ठाट-बाट और विलास भी किया। एक समय था जब इनके साज-समाज के साथ चलने पर लोग यह समझते थे कि कोई राजा जा रहा है, परन्तु अन्त में इनकी सारी भावनाएँ भक्ति में तल्लीन हो गई। इसीलिए पद्माकर को वीर, श्रृंगार और भक्ति तीनों ही रसों की सिद्धि प्राप्त हुई थी। वीररस 'हिम्मत बहादुर बिरदावली' में और भक्ति 'प्रबोध पचासा' तथा 'गंगालहरी' में देखने को मिलती है। परन्तु इनका मूलभाव श्रृंगार था। श्रृंगार का बड़ा मार्मिक वर्णन पद्माकर ने किया है। श्रृंगार के अनेक भावों का चित्रण इनकी रचना में मिलता है। श्रृंगार के वियोग और संयोग दोनों पक्षों के चित्रण में पद्माकर दक्ष हैं। श्रृंगार की विभिन्न स्थितियों का चित्रण इन्होंने किया है। श्रृंगार के प्रसंग में इनके फाग और होली के वर्णन अत्यन्त प्रसिद्ध हैं। उसके दो उदाहरण दृष्टव्य हैं—

वा अनुराग की फाग लखौं जहँ रागति राग किसोर–किसोरी।
त्यौं पद्माकर घाती घली फिरि लाल ही लाल गुलाल की झोरी।
जैसी की तैसी रही पिचकी कर काहू न केसरि रंग से बोरी।
गोरिन के रंग भीजिगो साँवरो साँवरे के रंग भीजिगै गोरी॥

\+ \+ \+

फाग की भीर अमीरन में गहि गोबिन्द लै गई भीतर गोरी।
भाई करी मन की पद्माकर ऊपर नाइ अबीर की झोरी।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

छीन पीतम्बर कमर ते सु बिदा दई मीड़ि कपोलन रोरी।
नैन नचाइ कही मुसकाइ लला फिर आइयो खेलन होरी ।।

संयोग के समान ही वियोग का मार्मिक चित्रण इन्होंने खीचा है। पद्माकर के ये चित्र घनानंद के समान विदग्ध न होकर बड़े सहज और स्वाभाविक हैं। ऐसे ही चित्रों के कारण पद्माकर अत्यन्त लोकप्रिय कवि के रूप में प्रख्यात हुए। इनके इन भावचित्रों में सुन्दर शब्द-योजना और आलंकारिक छटा है। अनुप्रास पद्माकर का प्रिय अलंकार था और वह इनके छन्दों में सर्वत्र देखा जा सकता है। वियोग श्रृंगार के चित्रण में भी सहज आलंकारिकता मिलती है। उदाहरण के रूप में निम्नलिखित छंद दृष्टव्य हैं—

पीतम के संग ही उमगि उड़ि जैबे को
न एति अंग अगनि परन्द पखियाँ दईं।
कहै पद्माकर जे आरती उतारैं चौंर ढारैं
श्रम हारे पै न ऐसी सखियाँ दईं।
देखि दृग द्वैही सों न नेकहु अघैये इन
ऐसे झुकाझुक में झपाक झखियाँ दईं।
कीजै कहा राम-श्याम आनन बिलोकिबे
बिरंचि न अनन्त अँखियाँ दईं ।।

\+ + +

चपला चमकैं चहुँ ओरन ते चाहभरी
चरजि गई तो फेरि चरजन लागी री।
कहै पद्माकर लवंगन की लोनी लता लरजि
गई तो फेरि लरजन लागी री।
कैसे धरौं धीर बीर त्रिविध समीरैं तन
तरजि गई तो फेरि तरजन लागी री।
घुमड़ि घमंड घटा घन की घनेरीं अबै
गरजि गई तो फेरि गरजन लागी री ।।

पद्माकर की प्रतिभा प्रकृति और मानव जीवन सौन्दर्य एवं विलास वर्णन में विशेष रूप से प्रवृत्त हुई है। दोनों में ही पद्माकर की गहरी रुचि थी। जहाँ इन्होंने मानव जीवन के विलास का मार्मिक उद्घाटन किया है,

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

वहीं प्रकृति के भण्डार का भी इन्होंने विशद चित्रण किया है। इनके षट्ऋतु वर्णन प्रसिद्ध हैं। ऋतु-वर्णन में इनके छंद परम्परा और नवीनता दोनों को लेकर चलने वाले हैं। वसंत ऋतु का वर्णन करने वाले निम्नलिखित छंद इस बात को स्पष्ट करेंगे—

और भाँति कुंजन में गुंजरत भौर भीर
और डौर झौंरन के बौरन के ह्वै गयो।
कहैं पद्माकर सु औरे भाँति गलियान
छलिया छबीले छैल और छवि छ्वै गये।
औरे भाँति बिहग समाज में अवाज होति
अबै ऋतुराज के न आज दिन द्वै गये।
औरे रस औरे रति औरे राम औरे रंग
औरे तन औरे मन औरे बन ह्वै गये॥

+ + +

पात बिन कीन्हें ऐसी भाँति गन बेलिन के
परत न चीन्हे जेये लरजत लुंज हैं।
कहै पद्माकर विसासी या वसंत के सु
ऐसे उतपात गात गोपिन के भुंज हैं।
ऊधो यह सूधो सो सँदेसो कहि दीजौ
भलो एरि सों हमारे ह्याँ न फूलो बन कुंज हैं।
किंसुक गुलाब कचनार औ अनारन की
डारन पै डोलत अँगारन के पुंज हैं।

इस प्रकार यह भली-भाँति स्पष्ट हो जाता है कि पद्माकर शब्द-सौन्दर्य और भाव सौन्दर्य के अद्भुत पारखी थे। उन्होंने अपनी रचनाओं में दोनों ही प्रकार का अविस्मरणीय चित्रण किया है।

घनानंद

घनानंद रीतिकाल के रीतिमुक्त धारा के महत्त्वपूर्ण कवि हैं। रीतिकाल के होते हुए भी इन्होंने रीति परम्पराओं से मुक्त होकर अपनी रचनाएं की हैं। घनानंद का जन्म सं० १७४६ वि० माना जाता है। इनका जन्म स्थान यद्यपि

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

निश्चित नहीं है, पर कुछ लोग उसे बुलंदशहर मानते हैं । ये भटनागर कायस्थ थे और दिल्ली के समकालीन बादशाह मुहम्मद शाह रंगीले के यहाँ मीर मुंशी का काम करते थे । ये अच्छे गायक और श्रेष्ठ कवि थे । बादशाह के दरबार में रहने वाली सुजान नामक वेश्या पर इनका उत्कट प्रेम था । इनके गायन की ख्याति के कारण किसी समय दरवार में बादशाह ने इनसे गाने के लिए कहा। परन्तु इन्होंने टाल दिया और कुछ लोगों ने उस समय बादशाह से कहा कि सुजान के कहने पर ये गायेंगे । दरबार में सुजान बुलाई गई और उसके कहने पर घनानंद ने बहुत सुन्दर गाया । गाते समय इन्होंने सुजान की ओर मुख करके और बादशाह की ओर पीठ की । बादशाह जहाँ इनके गाने से प्रसन्न हुआ, वहीं इनकी बअदबी से अत्यन्त क्रोधित हुआ, और इन्हें दरबार से निकाल दिया । सुजान दरबार की नर्तकी थी, साथ-ही-साथ अत्यन्त सुंदरी भी थी । घनानंद उस पर प्रेम करते थे और इनका विचार था कि वह भी इनसे उसी प्रकार प्रेम करती है । जब ये दरवार से निकाले गये तो इन्होंने सुजान को साथ चलने के लिए कहा, किन्तु उसने इनकार कर दिया ।

इस घटना के उपरान्त धनानंद का जीवन परिवर्तित हो गया और ये वृंदावन चले गये । वहाँ निम्बार्क सम्प्रदाय में दीक्षा लेकर कृष्णभक्ति में तल्लीन रहने लगे और वहीं रहकर इन्होंने अनेक ग्रंथों की रचना की । जो कवित्त और सवैया, छंदों के साथ-साथ पद रचना से युक्त हैं । ब्रजभूमि में आकर जो कृष्ण भक्ति संबंधी छंद इन्होंने लिखे, उनमें भी सुजान शब्द का प्रयोग बहुत अधिक है । इससे स्पष्ट है कि ये सुजान को भूल नहीं सके । और अन्ततोगत्वा इनका सुजान-प्रेम-कृष्ण प्रेम में परिणित हो गया । वृंदावन के जीवन में ये भक्ति में तन्मय जीवन व्यतीत करते थे । सं० १८१७ में जब अहमद शाह अब्दाली का दूसरा आक्रमण मथुरा पर हुआ, उस समय लोगों ने अब्दाली के सिपाहियों को बादशाह के मीर मुंशी के रूप में घनानंद को पता दे दिया, जब ये सिपाही घनानंद के पास पहुँचे तो उन्होंने इनसे जर यानी धन मांगा । इस पर घनानंद ने उसका उल्टा रज-रज करते हुए दो-तीन मुट्ठी धूल उनकी ओर फेंक दी । इस बात पर सिपाही अत्यन्त क्रुद्ध हुए और उन्होंने घनानंद का बध कर दिया । इस प्रकार घनानंद ने अपने प्रेम और भक्ति -साधना में कठिन कष्ट सहन किया ।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

घनानंद की ४१ रचनाएँ बतलाई जाती हैं, जो अधिकांश मुक्तक हैं। कुछ सवैया, घनाक्षरी में और कुछ पदों के रूप में। इन रचनाओं में अधिकाँश वही छोटी-छोटी रचनाएँ हैं जिनसे इनका प्रेम भाव और भक्ति प्रकट होती है। इनकी भक्ति निम्बार्क सम्प्रदाय के आधार पर है। उसका वियोग पक्ष जितना मार्मिक है, उतना संयोग पक्ष नहीं। रीतियुग के अधिकांश कवियों ने संयोग और वियोग दोनों पक्षों पर लिखा है, परन्तु किसी का भी वियोग पक्ष घनानंद के वियोग की तुलना नहीं कर सकता। उनकी वियोग भावना गहरी, विह्वलता से परिपूर्ण है। अनेक स्थलों पर उपालंभ, आत्म-निवेदन, अनन्यता, समर्पण, खीझ आदि के भाव बड़े मार्मिक ढंग से प्रकट हुए हैं। उदाहरण के लिए निम्नलिखित छंद दृष्टव्य है—

"अंतर हौं किधौं अँतर हौं दृग फारि
फिरौं कि अभागिन भीरौं
आगि जरौं अकि पानि परौं,
अब कैसी करौं हिय का बिधि धीरौं।
जो घन आनंद ऐसी रुची तौ कहा
बस है अहो प्राननि पीरौं
पाऊँ कहाँ हरि हाय तुम्हें धरनी
में धसौं कि अकासहिं चीरौं ॥"

घनानंद भावों के कुशल शिल्पी थे। इनकी-अभिव्यंजना प्रौढ़ और प्रभाव शाली है। आलंकारिक समृद्धि के साथ-साथ उसमें मार्मिकता विद्यमान है। इनकी उक्तियों में मौलिकता और चमत्कार प्राप्त होता है। घनानंद की मुख्य कला इनकी उक्तियों की लाक्षणिकता और व्यंजकता में है। चमत्कार और उक्ति-वैचित्र्य के संपादन के लिए घनानंद ने रूपक, प्रतीप, अतिशयोक्ति, विरोधाभास, व्यतिरेक, श्लेष और यमक जैसे अलंकारों का बड़ा सहज और सुन्दर प्रयोग किया है। इनका शब्दचयन भी बड़ा विदग्ध और कलापूर्ण है। इनके शब्द अर्थ-गौरव से युक्त होने के साथ-साथ ब्रजभाषा की मुहावरेदानी और मार्मिकता से युक्त हैं। कहा जा सकता है कि इनके छंदों में भाव और अभिव्यक्ति दोनों एक दूसरे से समन्वित, ओत-प्रोत और सुशोभित हैं घनानंद जैसे प्रौढ़ सवैया और घनाक्षरी छंद लिखने वाले बहुत कम कवि मिलते हैं।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

जो स्थान बिहारी द्वारा रचित विदग्ध और मार्मिक सतसई के दोहों को प्राप्त है, वही स्थान घनानंद के सवैयों और घनाक्षरी छंदों को मिलना चाहिए। इस बात के प्रमाण के लिए निम्नलिखित छंद दिये जा रहे हैं—

कहाँ ऐतो पानिप बिचारी पिचकारी धरै,
आँसू नदी नैननि उमगियै रहति है।
कहाँ ऐसी राँचनि हरदि केसू केसरि मैं,
जैसी पियराई गात पगियै रहति है।
चाँचरि चोप हू सु तौ औसर ही माचति, पै,
चिंता की चुहल बगियै रहति है।
तपनि बुझावनि आनन्दघन जान बिन,
होरी सी हमारी हिये लगियै रहति है॥

+ + + +

किंसुक-पुंज से फूलि रहे सु लगी उर दौ जुबियोग तिहारे।
मातो फिरै न, घिरै अबलानि पै, जान मनोज यौं डारत मारें।
ह्वै अभिलाषनि, पात-निपात कहे हिय-सूल उसासनि-डारें।
है पतझार बसंत दूहूँ घन आनंद एक ही बार हमारें॥

+ + + +

पाती-मधि छाती छत लिखि न लिखाये जाहिं,
काती लै बिरह घाती की ने जैसे हाल हैं।
आँगुरी बहकि नहीं पाँगुरी किलकि होति,
ताती राती दसनि के जाल-ज्वाल-माल हैं।
जान प्यारे जौऽब कहूँ दीजियै सँदेसो तोऽब,
आवा सम कीजियै जु कान तिहि काल हैं।
नेह भीजी बातैं रसना पै उर-आँच लागे,
जागैं घन-आनंद ज्यों पुंजनि-मसाल हैं॥

घनानंद रूप और गुन पर उलझने वाले व्यक्ति थे। ऐसा लगता है कि उनके मन में रूप की अनंत पिपासा भरी थी। उसी की अभिव्यक्ति इन्होंने सुजान के रूप के चित्रण में की है। यह रूप-चित्रण अत्यन्त बारीक और मार्मिक है जिसके अन्तर्गत् न केवल रूप के, रंग के आभा का समावेश है, वरन् क्रिया-

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

कलाप, बात-चीत और प्रभाव का भी विशद उद्घाटन है। इस बात को स्पष्ट करने के लिए निम्नलिखित छन्द उद्धृत हैं—

अंग-अंग-आभा संग द्रवित स्रवित ह्वै कै,
रचि सचि लीनी सौंजरं गनि घनेरे की।
हँसनि लसनि आछी बोलनि चितौनि चाल,
मूरति रसाल रोम-रोम छबि हेरे की।
लिखि राख्यौ चित्र यौं प्रवाह रूपी नैननि पै,
लही न परति गति ऊलट अनेरे की।
रूप को चरित्र है अनंद घन जान प्यारी,
अकि धौं विचित्रताईं मो चित चितेरे की॥

\+ \+ \+ \+

झलकै अति सुंदर आनन गौर, छके दृग राजत काननि छ्वै।
हँसि बोलनि मैं छबि-फूलन की बरषा, उर ऊपर जाति है ह्वै।
लटलोल कपोल कलौल करैं, कलकंठ बनी जल जावलि द्वै।
अंग-अंग तरंग उठै दुति की, परि है मनौ रूप अबै घर च्वै।

\+ \+ \+ \+

पानिप पूरी खरी निखरी, रस-रासि-निकाई की नीवँहिं रोपैं।
लाज लड़ी बड़ी सील-गसीली सुभाय हँसीली चितै चित लोपैं।
अंजन-अंजित श्री घन-आनंद मंजु महा उपमानि हूँ ओपैं।
तेरी सौं ऐ री सुजान तो आँखिन देखि ये आँखिन आवति मोपैं।

उपर्युक्त उद्धरणों से स्पष्ट है कि घनानंद एक सिद्धि कवि थे। शब्द की अद्भुत परख उनमें थी और उनकी बिम्ब रचना में कला और अनुभूति दोनों का विदग्ध समन्वय था। यही कारण है कि उनके छन्द उत्कृष्ट कविता के उदाहरण हैं, और घनानंद का स्थान हिन्दी के रीतिकालीन साहित्य में अद्वितीय है।

द्विजदेव

अयोध्या के राजा महाराज मानसिंह द्विजदेव उपनाम से कविता करते थे। इनके पिता का नाम दर्शन सिंह था। इनका जन्म १० दिसम्बर

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

१८२० ई० को हुआ था । ये संस्कृत, हिन्दी और फारसी के अच्छे विद्वान थे । महाराजा मानसिंह युद्ध कुशल व्यक्ति थे । इनको 'रायबहादुर' की उपाधि मिली थी । महाराजा मानसिंह के आश्रय में अनेक कवि रहे । इनमें लछिराम विशेष प्रसिद्ध हैं । द्विजदेव ब्रजभाषा में बड़ी सुन्दर कविता करते थे । इन्होंने दो ग्रंथ लिखे 'श्रृंगार बतीसी' और 'श्रृंगार-लतिक.' । 'श्रृंगार लतिका' की 'सौरभी टीका' वीरेश जी ने की । यह ब्रजभाषा मे है ।

द्विजदेव का जीवन बड़े साहसपूर्ण कार्यों में व्यतीत हुआ । १८५७ की राज्य क्रांति में इन्होंने अंग्रेज परिवारों की प्राण रक्षा की । परन्तु अन्त में अंग्रेजी शासन की कोपदृष्टि इन पर पड़ी, और ये वृन्दावन चले गए । वृन्दावन में माधुर्य भक्ति के प्रभाव में आकर इन्होंने श्रृंगारपूर्ण कृष्ण काव्य की रचना की । वहीं सन् १८६१ में इनका देहावसान हुआ था । द्विजदेव पर माधुर्य भक्ति और रीति श्रृंगार के ग्रंथों का पूरा प्रभाव पड़ा । इन्होंने यद्यपि रीति संबंधी कोई लक्ष्य ग्रंथ नहीं लिखा, परन्तु उसका पूरा प्रभाव इनके ग्रंथों में मिलता है । श्रृंगार वर्णन तथा ऋतु-चित्रण के इनके छंद बड़े ललित हैं । भाषा की प्रांजलता तथा भाव सुकुमारता इनकी रचना का सहज गुण है । इनके छंदों में बड़ा ललित प्रवाह और भावों की मोहक व्यंजना हुई है । इनकी शब्द-योजना से यह स्पष्ट होता है कि शब्द-प्रयोग का इन्हें विशिष्ट कौशल प्राप्त था । इनके अलंकार प्रयोग में भी सहज-सौन्दर्य देखने को मिलता है । एक उदाहरण इस प्रसग मे नीचे दिया जाता है—

"औरे भाँति कोकिल, चकोर, ठौर-ठौर बोलें,
औरे भाँति सबद पपीहन के बै गए ।
औरे भाँति पल्लव लिए हैं वृंद-वृंद तरु,
और छवि पुंज-पुंज कुंजन उनै गये ।
औरे भाँति सीतल सुगंध मंद डोलै पौन,
द्विजदेव देखत न ऐसी पल ह्वै गये ।
औरै रति औरे रंग औरे साज और सँग,
औरे बन औरे छन औरे मन ह्वै गये ।"

द्विजदेव ने जो नखशिख-सौन्दर्य-चित्रण किया है, वह अपने ही ढंग का है । अंग का जो वर्णन है, वह इनकी सौन्दर्यानुभूति का उत्कृष्ट द्योतक है ।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

उपमानों की परम्परा को ग्रहण न करते हुए भी द्विजदेव पर रीतिकालीन शृंगार और सौन्दर्य चेतना का अमिट प्रभाव है। नख-शिख के प्रसंग में इनके द्वारा किया गया अंगुलियों का वर्णन दृष्टव्य है--

"कर कंकन साज मयंक मुखी,
मुख पंक न कौन के लावति है।
द्विजदेव हि लाई कँ पाणि विभूषन,
का को हियो न हिलावति हैं।
उपमान वै कौन जिन्हें सजि कै,
अंगुरी अँगुरीन दिखावति है ।
मेंहदी निज हाथन लाय कहौ,
द्युति कौनि की हाथ न लावति है।"

इस छंद मे आभूषण युक्त हाथों और मेंहदी रचे करों का चित्रण अत्यन्त सुन्दर है। साथ ही सुन्दर मुहावरों का भी प्रयोग है। द्विजदेव ने जो अलंकारों का वर्णन किया है, वह भी इनकी सहज प्रतिभा का परिचायक है। ये अलंकार इतने चमत्कार लाने के लिए प्रयुक्त नहीं हुए, जितने भाव के मार्मिक उद्घाटन के लिए हुए हैं। इस प्रकार की रचना करने में द्विजदेव अप्रतिम ठहरते हैं। भ्रांति अलंकार का एक उदाहरण निम्नलिखित छन्द में दृष्टव्य है, और मेरे विचार से भ्रांति का ऐसा सहज उदाहरण अन्यत्र दुर्लभ है। कवि ने इसमें सावन में फागुन की भ्रांति का चित्रण किया है। छन्द इस प्रकार है—

"राती भई भूमि सो तौ, जावक की छाप,
चूनरी की दाप रंग ऐसो बरसै अशेष धन।
साखी पग पातन गुलाल गुंफ से हैं खिले,
ये हैं जरतारी जिन्हें जानत अबीर कन।
द्विजदेव ऐसी छवि देखि-देखि दौरों कहा,
फागुन के भोरे वृजमंडल के सारे जन।
सहज सखी इन सँग, राधा जू पधार्यों आजु,
सावन में सूधे ही सुभावन अशोक वन॥"

इस प्रकार काव्य-प्रतिभा द्विजदेव अत्यन्त ही उत्कृष्ट कोटि के कवि हैं। जितने छन्द इन्होंने लिखे हैं, वे सबके सब बड़े मार्मिक हैं। इनके छंदों में

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

सहज प्रवाह है, और सहज परिचित शब्दावली में भाव की मार्मिक अनुभूति इनके छन्दों में होती है। इस दृष्टि से 'शृंगार लतिका' के छंद एक से एक बढ़-कर हैं। एक छंद नीचे दिया जाता है—

"घाघरी राती सो हाती लखे,
सिर सारी सजे सुधा सोभ समूली।
प्रेम पियूष पगी उमगी,
द्विजदेव कदंब की डारन झूली।
भौंर की भीर बुलाय रही,
जड़ आप मरंदन के रस भूली।
हार सिंगार की बीथिन में सो तौ,
हार सिंगार के फूल सी भूली।"

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि रीति-काव्य-परंपरा में यद्यपि अनेक कवि आते हैं, परन्तु प्रतिभा की उत्कृष्टता और वाणी का विलास, जैसा सेनापति, बिहारी और द्विजदेव में मिलता है, वैसा अन्यत्र नहीं। इस परम्परा के ये सर्वश्रेष्ठ कवि हैं।

भगीरथ मिश्र

अध्यक्ष, हिन्दी-विभाग
सागर विश्वविद्यालय, सागर

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

केशवदास

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

रामचन्द्रिका

१. मगलाचरण

बालक मृणालनि ज्यों तोरि डारै सब काल,
कठिन कराल त्यों अकाल दीह दुख को।
विपति हरत हठि पद्मिनी के पात सम,
पंक ज्यों पताल पेलि पठवै कलुख को।
दूरि कै कलंक-अंक भवसीस ससि सम,
राखत हैं केशोदास दास के बपुख को।
साँकरे की साँकरन सनमुख होत तोरै,
दशमुख मुख जोवैं गजमुख मुख को ॥१॥
बानी जगरानी की उदारता बखानी जाय,
ऐसी मति कहौ धौं उदार कौन की भई।
देवता, प्रसिद्ध सिद्ध ऋषिराज तपवृद्ध,
कहि-कहि हारे सब, कहि न केहूँ लई।
भावी भूत वर्त्तमान जगत बखानत है,
केशोदास केहूँ न बखानी काहू पै गई।
वर्णे पति चारिमुख पूत वर्णे पाँच मुख,
नाती वर्णे षटमुख तदपि नई-नई ॥२॥
पूरण पुराण अरु पुरुष पुराण परि-
पूरण बतावैं न बतावैं और उक्ति को।
दरशन देत, जिन्हें दरशन समुझैं न,
नेति-नेति कहै वेद छाँड़ि आन युक्ति को।
जानि यह केशोदास अनुदिन राम-राम,
रटत रहत न डरत पुनरुक्ति को।
रूप देहि अणिमाहि, गुण देहि गरिमाहि,
भक्ति देहि महिमाहि, नाम देहि मुक्ति को ॥३॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

२. सीता स्वयम्बर

खंडपरशु को सोभिजै, सभा मध्य कोदंड।
मानहुँ शेष अशेष धर, धरनहार बरिबंड ॥४॥

शोभित मंचन की अवली गजदंतमई छवि उज्ज्वल छाई।
ईश मनौ वसुधा में सुधारि सुधाधरमंडल मंडि जोन्हाई ॥
तामहं केशवदास विराजत राजकुमार सबै सुखदाई।
देवन स्यों जनु देवसभा शुभ सीयस्वयंवर देखन आई ॥५॥

पावक पवन मणिपन्नग पतंग पितृ,
जेते ज्योतिवंत जग ज्योतिषिन गाए हैं।
असुर प्रसिद्ध सिद्ध तीरथ सहित सिंधु,
केशव चराचर जे वेदन बताए हैं।
अजर अमर अज अंगी और अनंगी सब,
बरणि सुनावै ऐसे कौन गुण पाए हैं।
सीता के स्वयंवर को रूप अवलोकिवे को,
भूपन को रूप धरि विश्वरूप आए है ॥६॥

दिकपालन की, भुवपालन की, लोकपालन की किन मातु गई च्वै।
ठाढ़ भए उठि आसन तें, कहि केशव, शंभुशरासन को छ्वै।
काहू चढ़ायो न, काहू नवायो न, काहू उठायो न आँगुरहू द्वै।
स्वारथ भो न भयो परमारथ, आए ह्वै बीर, चले बनिता ह्वै ॥७॥

काहू को न भयो कहूँ, ऐसो सगुन, न होत।
पुर पैठत श्रीराम के, भयो मित्र उदोत ॥८॥

राम

कछु राजत सूरज अरुन खरे। जनु लक्ष्मण के अनुराग भरे।
चितवत चित्त कुमुदिनी त्रसै। चोर चकोर चिता-सी लसै ॥९॥

लक्ष्मण

अरुण-गात अति प्रात पद्मिनी-प्राणनाथ भय।
मानहुँ केशवदास कोकनद कोकप्रेममय ॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

परिपूरण सिंदूरपूर कैधौं मंगलघट।
किधौं शक्र को छत्र मढ्यो मानिकमयूषपट।
कै श्रोणित-कलित कपाल यह किल कापालिक काल को।
यह ललित लाल कैधौं लसत दिग्भामिन के भाल को ।। १० ।।

पसरे कर कुमुदिनि काज मनो।
किधौं पद्मनि को सुख देन घनो।
जनु ऋक्ष सबै यहि त्रास भगे।
जिय जानि चकोर फँदान ठगे ।। ११ ।।

राम

व्योम में मुनि देखिए अतिलाल श्रीमुख साजहीं।
सिंधु में बड़वाग्नि की जनु ज्वालमाल विराजहीं।
पद्मरागनि की किधौं दिवि धूरि पूरित-सी भई।
सूर वाजिन की खुरी अति तिक्षता तिनकी हई ।। ९ ।।
चढ्यो गगनतरु धाय, दिनकर-बानर अरुणमुख।
कीन्हों झुकि झहराय, सकल तारका कुसुम बिन ।। १२ ।।

लक्ष्मण

जहीं वारुणी की करी, रंचक रुचि द्विजराज।
तहीं कियो भगवंत बिन, संपति शोभा साज ।। १३ ।।

चहुँभाग बाग तड़ाग। अब देखिए बड़भाग।
फल फूल सों संयुक्त। अलि यों रमै जनु मुक्त ।। १४ ।।

राम

ते न नगरि ना नागरी, प्रतिपद हंसक हीन।
जलजहार शोभित न जहँ, प्रगट पयोधर पीन। १५ ।।

सातहु दीपनि के अवनीपति हारि रहे जिय मे जब जाने।
बीस बिसे व्रत भंग भयो, सो कहो, अब केशव को धनु ताने।।
शोक की आगि लगी परिपूरण आइ गए घनश्याम बिहाने ।।
जानकि के जनकादिक के सब फूलि उठे तरु पुण्य पुराने ।। १६ ।।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

आइ गए ऋषिराजहिं लीने । मुख्य सतानंद विप्र प्रवीने ।
देखि दुवौ भए पाँयनि लीने । आशिष शीरष बासु लै दीने ।। १७ ।।

विश्वामित्र

केशव ये मिथिलाधिप हैं जग में जिन कीरति बेलि बई है ।
दानकृपान-विधानन सों सिगरी वसुधा जिन हाथ लई है ।
अंग छ सातक आठक सों भव तीनिहु लोक में सिद्धि भई है ।
वेदत्रयी अरु राजसिरी परिपूरणता शुभ योगमई है ।। १८ ।।

जनक

जिन अपनो तनस्वर्ण, मेलि तपोमय अग्नि में ।
कीन्हों उत्तम वर्ण, तेई विश्वामित्रये ।। १९ ।।

लक्ष्मण

जन राजवंत । जग योगवंत
तिनको उदोत । केहि भाँति होत ।। २० ।।

राम

सब छत्रिन आदि दै काहू छुई न छुए बिजनादिक बात डगैं ।
न घटै न बढ़ै निशि वासर केशव लोकन को तमतेज भगैं ।
भवभूषण भूषित होत नहीं मदमत्त गजादि मसी न लगैं ।
जलहूँ थलहूँ परिपूरण श्रीनिमि के कुल अद्‌भुत ज्योति जगैं ।। २१ ।।

जनक

यह कीरति और नरेशन सोहैं ।
सुनि देव अदेवन को मन मोहै ।
हम को बपुरा सुनिए ऋषिराई ।
सब गाँउँ छ सातक की ठकुराई ।। २२ ।।

विश्वामित्र

आपने-आपने ठौरनि तौ भुवपाल सबै भुव पालैं सदाई ।
केवल नामहि के भुवपाल कहावत हैं भुव पालि न जाई ।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

भूपति की तुमहीं धरि देहि बिदेहन में कल कीरति गाई ।
केशव भूषन को भवि भूषन भू-तन तैं तनया उपजाई ॥२३॥

जनक

इहि बिधि की चित चातुरी, तिनको कहा अकत्थ ।
लोकन की रचना रुचिर, रचिवो कीं समरत्थ ॥ २४ ॥

ये सुत कौन के सोभहिं साजे ?
सुन्दर श्यामल गौर विराजे ।
जानत हौं जिय सोदर दोऊ ।
कै कमला विमला पति कोऊ ॥ २५ ॥

विश्वामित्र

सुन्दर श्यामल राम सु जानो । गौर सुलक्ष्मण नाम बखानो ।
आशिष देहु इन्हें सब कोऊ । सूरज के कुलमंडन दोऊ ॥ २६ ॥
नृपमणि दशरथ नृपति के, प्रगटे चार कुमार ।
राम भरत लक्ष्मण ललित, अरु शत्रुघ्न उदार ॥ २७ ॥

दानिन के शील पर दान के प्रहारी दिन,
दानवारि ज्यों निदान देखिये सुभाय के ।
दीप-दीप हूँ के अवनीपन के अवनीप,
पृथु सम केशोदास दास द्विज गाय के ।
आनँद के कंद सुरपालक से बालक ये,
परदारप्रिय साधु मन वच काय के ।
देह धर्मधारी पै विदेहराज जू से राज,
राजत कुमार ऐसे दशरथ राय के ॥ २८ ॥

रघुनाथ शरासन चाहत देख्यौ ।
अति दुष्कर राजसमासनि लेख्यौ ॥

जनक

ऋषि है वह मन्दिर माँझ मँगाऊँ ।
गहि ल्यावहिं हौं जनयूथ बुलाऊँ ॥ २९ ॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

वज्र ते कठोर है, कैलाश तें विशाल काल,
दंड तें कराल, सब काल काल गावई ।
केशव त्रिलोक के विलोकि हारे देव सब,
छोड़ चन्द्रचूड़ एक और को चढ़ावई ।।
पन्नग प्रचंड-पति प्रभु की पनच पीन,
पर्वतारि पर्वत-प्रभा न मान पावई ।।
विनायक एकहू पै आवै न पिनाक ताहि,
कोमल कमलपाणि राम कैसे ल्यावई ।। ३० ।।

विश्वामित्र

सुनि रामचन्द्र कुमार । धनु आनिए इक बार ।
पुनि वेगि ताहि चढ़ाव । यश लोक-लोक बढ़ाव ।। ३१ ।।

रामचन्द्र कटिसौं पटु बाँध्यो । लीलयैव हर को धनु साँध्यो ।
नेकु ताहि कर पल्लव सों छ्वै । फूलमूल जिम टूक कर्‌यो द्वै ।। ३२ ।।
उत्तम-गाथ सनाथ जवै धनु श्री रघुनाथ जु हाथ कै लीनो ।
निर्गुण ते गुणवंत कियो सुख केशव संत अनंतन दीनो ।।
ऐंचो जहीं तबहीं कियो संयुत तिच्छ कटाच्छ नराच नवीनो ।
राजकुमार निहारि सनेह सों शंभु को साँचो शरासन कीनो ।। ३३ ।।

प्रथम टंकोर झुकि झारि संसार मद,
चंड कोदंड रह्यो मंडि नव खंड को ।
चालि अचला अचल घालि दिगपाल बल,
पालि ऋषिराज के वचन परचंड को ।
सोधु दै ईश को, बोधु जगदीश को,
क्रोधु उपजाइ भृगुनन्द बरिबंड को ।
बाँधि वर स्वर्ग को, साधि अपवर्ग, धनु—
भंग को शब्द गयो भेदि ब्रह्मंड को ।। ३४ ।।

सीता जू रघुनाथ को, अमल कमल की माल ।
पहिराई जनु सबन की हृदयावलि भूपाल ।। ३५ ।।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

३. वनमार्ग में राम

विपिन-मारग राम विराजहीं ।
सुखद सुन्दरि सोदर भ्राजहीं ।।
विविध श्रीफल सिद्ध मनो फल्यौ ।
सकल साधन सिद्धिहि लै चल्यो ।।३६।।

कौन हौ, कित तें चले कित जात हौ, केहि काम जू ।
कौन की दुहिता, बहू कहि कौन की यह वाम जू ।।
एक गाउँ रहौ कि साजन मित्र बन्धु बखानियै ।
देश के, परदेश के, किधौं पंथ की पहिचानियै ।।३७।।

किधौं यह राजपुत्री, वरही वरी है किधौं,
उपदि वर्‌यो है यहि सोभा अभिरत हौ ।
किधौं रति रतिनाथ जस साथ केसोदास ।
जात तपोवन सिव वैर सुमिरत हौ ।
किधौं मुनि शापहत, किधौं ब्रह्मदोषरत,
किधौं सिद्धियुत, सिद्ध परम विरत हौ ।
किधौं कोऊ ठग हौ ठगौरी लीन्हें,किधौं तुम,
हरि हर श्री हौ शिवा चाहत फिरत हौ ।।३८।।

मेघ मंदाकिनी चारु सौदामिनी
रूप रूरे लसै देहधारी मनौ
भूरि भागीरथी भारती हंसजा
अंस के हैं मनौ भाग भारे भनौ ।।
देवराजा लिए देवरानी मनौ
पुत्र संयुक्त भूलोक में सोहिए ।
पच्छ दू संधि संध्या सधी हैं मनौ
लच्छिये स्वच्छ प्रत्यक्ष ही मोहिए ।।३९।।

तड़ाग नीर-हीन ते सनीर होत केसौदास
पुंडरीक-झुंड भौंर-मंडलोन मंडहीं ।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

तमाल बल्लरी समेत सूखि-सूखि के रहे
ते बाग फूलि-फूलि कै समूल सूल खंडहीं ।।
चितै चकोरिनी चकोर, मोर मोरिनी समेत,
हंस हंसिनी समेत, शारिका सबै पढ़ैं ।
जहीं-जहीं विराम लेत रामजू तहीं-तहीं,
अनेक भाँति के अनेक भोग भाग सो बढ़ैं ।।४०।।

घाम को राम समीप महाबल ।
सीतहिं लागत है अति सीतल ।
ज्यों घन-संयुत दामिनि के तन,
होत हैं पूषन के कर भूषन ।।४१।।
मारग की रज तापित है अति ।
केशव सीतहिं सीतल लागति ।।
प्यौ पद-पंकज ऊपर पाँयनि ।
दै जो चलै तेहि ते सुखदायनि ।।४२।।

प्रति पुर औ, प्रति ग्राम की, प्रति नगरन की नारि ।
सीताजू को देखिकै, बरनत हैं सुखकारि ।।४३।।

वासों मृगअंक कहैं, तोसों मृगनैनी सब,
वह सुधाधर, तुहूँ सुधाधर मानिए ।
वह द्विजराज, तेरे द्विजराजि राजैं, वह
कलानिधि, तुहूँ कला-कलित बखानिए ।।
रत्नाकर के हैं दोऊ केसव प्रकासकर
अम्बर-विलास कुबलय हितु मानिए ।
वाके अति सीत कर, तुहूँ सीता सीतकर,
चन्द्रमा-सी चन्द्रमुखी सब जग जानिए ।।४४।।

कलित कलंक-केतु केतु-अरि, सेत गात,
भोग-योग को अयोग, रोग ही को थल सौं ।
पून्यौई को पूरन पै आन दिन ऊनो-ऊनो,
छन-छन छीन होत छीलर को जल सौं ।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

चन्द्र सौं जो बरनत रामचन्द्र की दुहाई,
सोई मति मंद कवि केसव मुसल सौं।
सुन्दर सुवास अरु कोमल अमल अति,
सीता जी को मुख सखि केवल कमल सौं। ४५ ॥

एक कहैं अमल कमल मुख सीता जू कौ,
एक कहैं चन्द्र-सम आनँद को कन्द री।
होइ जौ कमल तौ रयनि में न सकुचै री,
चन्द जौ तौ बासर न होइ द्युति मंद री ॥
वासर ही कमल रजनी में ही चन्द्र मुख,
बासर हू रजनि बिराजै जगबन्द री।
देखे मुख भावै अनदेखेई कमल चन्द,
तातें मुख मुखै, सखी, कमलौ न चन्द री ॥ ४६ ॥
सीता नयन चकोर सखि रविवंशी रघुनाथ।
राम चन्द्र सिय कमल मुख, भलो बन्यो है साथ ॥ ४७ ॥

बहु बाग तड़ाग तरंगिनी तीर,
तमाल की छाँह बिलोकि भली।
घटिका इक बैठत हैं सुख पाय
बिछाय तहाँ कुस-कास थली ॥
मग कौ श्रम श्रीपति दूर करैं,
सिय के शुभ बाकल अंचल सों।
श्रम तेऊ हर तिनको कहि केशव
चंचल चारु दृचञ्चल सों ॥ ४८ ॥

श्री रघुवर के इष्ट, अश्रु-बलित सीता-नयन।
साँची करी अदृष्ट झूँठी उपमा मीन की ॥ ४९ ॥
मारग यौं रघुनाथ जू, दुख सुख सब ही देत।
चित्रकूट पर्वत गए, सोदर सिया समेत ॥ ५० ॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

४. पंचवटी-स्थिति राम

केशव कहे अगस्त्य के पंचवटी के तीर ।
पर्णकुटी पावन करी, रामचन्द्र रणवीर ।। ५१ ।।

फल फूलन पूरे, तरुवर रूरे, कोकिल-कुल कलरव बोलैं ।
अति मत्त मयूरी पियरस पूरी, वन-वन प्रति नाचति डोलैं ।
सारी शुक पंडित, गुणगण-मंडित, भावनि मैं अरथ बखानैं ।
देखे रघुनायक, सीय सहायक, मनहु मदन रति मधु जानैं ।। ५२ ।।

सब जाति फटी दुख की दुपटी, कपटी न रहै जहँ एक घटी ।
निघटी रुचि मीच घटी हूँ घटी, जग जीव यतीन की छूटी तटी ।।
अघ-ओघ की बेरी कटी विकटी निकटी प्रकटी गुरुज्ञान गटी ।
चहुँ ओरन नाचति मुक्तिनटी, गुण धूरजटी वन पंचवटी ।। ५३ ।।
शोभीत दण्डक की रुचि वनी । भाँतिन-भाँतिनि सुन्दर धनी ।
सेव बड़े नृप की जनु लसै । श्रीफल भूरि भाव जहँ बसै ।। ५४ ।।
बेर भयानक-सी अति लगै । अर्क-समूह जहाँ जगमगै ।।
नैनन को बहुरूपन ग्रसे । श्री हरि की जनु मूरति लसे ।। ५५ ।।

राम

पांडव की प्रतिमा सम लेखौ ।
अर्जुन भीम महामति देखौ ।।
है सुभगा सम दीपति पूरी ।
सिन्दुर औ तिलकावलि रूरी ।। ५६ ।।
राजति है यह ज्यौं कुल कन्या ।
धाइ विराजति है सँग धन्या ।।
केलि-थली जनु श्रीगिरिजा की ।
शोभ धरे शितकंठ प्रभा की ।। ५७ ।।

निपट पतिव्रत धरणी । जग जन के दुख हरणी ।
निगम सदा गति सुनिए । अगति महापति गुनिए

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

विषमय यह गोदावरी, अमृतन को फल देति ।
केशव जीवनहार को, दुख अशेष हरि लेति ।।

सीताहरण

छिद्र ताकि छुद्रराज लंकनाथ आइयो ।
भिक्षु जानि जानकी सो भीख को बलाइयो ।।
अति निकट गोदावरी पाप-संहारिणी ।
चल तरंग तुङ्गावली चारु संचारिणी ।।
अलि कमल सौगंध लीला मनोहारिणी ।
बहु नयन देवेश शोभा मनो धारिणी ।।५९।।

रीति मनो अविवेक की थापी ।
साधुन की गति पावत पापी ।।
कंजज की मति-सी बड़ भागी ।
श्री हरिमन्दिर सौं अनुरागी ।।
सोच पोच मोचिकै सकोच भीम वेख को ।
अंतरिच्छही हरी ज्यों राहु चन्द्ररेख को ।।६०।।

धूमपुर के निकेत मानो धूमकेतु की,
शिखा कै धूमयोनि मध्य रेखा सुधाधाम की ।
चित्र की सी पुत्रिका की रूरे बगरूरे माँहि,
संबर छोड़ाइ लई कामिनी कै काम की ।
पाखंड की श्रद्धा कै मठेश बस एकादशी,
लीन्ही कै स्वपचराज साखा सुद्ध साम की ।
केशव अदृष्ट साथ जीवजोति जैसी, तैसी,
लंकनाथ हाथ परी छाया जाया राम की ।।६१।।

सीता

हा राम हा रमन हा रघुनाथ धीर ।
लंकाधिनाथ बस जानहु मोहि वीर ।।
हा पुत्र लक्ष्मण छोड़ावहु वेगि मोही ।
मार्तंडवंश-यश की सब लाज तोहीं ।।६२।।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

रामविलाप

निज देखौं नहीं शुभगीतहिं सीतहिं कारण कौन कहौ अब हीं ।
अति मोहित कै बन मांझ गई सुर मारग मैं मृग मार्यो जहीं ।।
कटु बात कछू तुमसों कहि आई किधौं तेहि त्रास डेराइ रहीं ।
अब है यह पर्णकुटी किधौं और किधौं वह लक्ष्मण होइ नहीं ।।६३।।

सरिता एक केशव सोभ रई ।
अवलोकि तहाँ चकवा चकई ।।
उर में सिय प्रीति समाइ रही ।
तिन सों रघुनायक बात कही ।।६४।।

अवलोकत हे जबहीं-जबहीं ।
दुख होत तुम्हें तबही-तबहीं ।।
वह बैर न चित्त कछू धरिए ।
सिय देहु बताइ कृपा करिए ।।६५।।

शशि के अवलोकन दूरि किए ।
जिनके मुख की छवि देखि जिए ।।
कृत चित्त चकोर कछूक धरौ ।
सिय देहु बताय सहाय करौ ।।६६।।

कहि केशव याचक के अरि चंपक शोक अशोक किए हरि कै ।
लखि केतक केतकि जाति गुलाब ते तीक्षण जानि तजे डरिकै ।।
सुनि साधु तुम्हें हम बूझन आए रहे मन मौन कहा धरिकै ।
सिय कौ कछु सोध कहौ करुणामय हे करुणा करुणा करिकै ।।६७।।

हिमांशु सूर सो लगै सो बात वज्र-सी बहै ।
दिशा लगे कृशानु ज्यों विलेप अंग को दहै ।।
विशेष कालराति सो कराल राति मानिए ।
वियोग सीय को न काल लोकहार जानिए ।।६८।।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

रसिकप्रिया

केशव एक समय हरि-राधिका आसन एक लसे रंग-भीने।
आनँद सों तिय आनन की दुति देखत दर्पण में दृग दीने।
भाल के लाल में वालबिलोकत ही भरि लालन लोचन लीने।
शासन पीय सवासन सीय हुतासन में जनु आसन कीने।। १ ।।

केशव सूधे विलोचन सूधी विलोकनि सों अवलोकै सदाई।
सूधिये बात सुनै समझै कहि आवत सूधिये बात सदाई।।
सूधी सुहाँसी, सुधाकर सों मुख, सोधि लई बसुधा की सुधाई।
सूधे स्वभाव सबै सजनी, सब कैसे किये अति टेढ़े कन्हाई।।२।।

चपला पट मोर किरीट लसै मघवाधनु शोभ बढ़ावत हैं।
मृदु गावत आवत वेणु बजावत मित्र मयूर नचावत हैं।
उठि देखि भटू भरि लोचन चातक चित्त की ताप बुझावत हैं।
घनश्याम घने घन वेष धरे जु बने बन ते व्रज आवत हैं।।३।।

बैठी हुती वृषभानुकुमारि सखीन की मंडली मंडि प्रवीनी।
लै कुम्हिलानो सो कंज परी इक पाँयन आइ गुवारि नवीनी।
चंदन सों छिरकी वह वा कहँ पान दये करुणारस भीनी।
चंदन चित्र कपोलन लोपि कै अंजन आँजि बिदा करि दीनी।।४।।

सखि सोहन गोप सभा महँ गोबिन्द बैठे हुते द्युति को धरिकै।
जनु केशव पूरन चन्द्र लसै चितचोर चकोरन को हरिकै।
तिनको उलटो करि आन दियो किहुँ नीरज नीर नयो भरि कै
कहि काहे तैं नेकु निहारि मनोहरि फेरि दियो कलिका करिकै।।५।।

खंजन हैं मन-रंजन केशव रंजन नैन किधौं, मति जी की।।
मीठी सुधा कि सुधाधर की द्युति दंतन की किधौं दाड़िम ही की।
चंद भलो मुख चंद किधौं सखि सूरति काम कि कान्ह की नीकी।
कोमल पंकज कै पदपंकज प्राण पियारे कि मूरति पी की।।६।।

दसन-बसन माँह दरसै दसन दुति,
बरषि मदन रस करत अचेत हौ।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

झाईं झलकति लोल लोचन कपोलन में,
मोल लेत मन क्रम वचन समेत हौ ।
भौहें कहे देत भाउ कहो मेरी भावती के,
भाव ते छबीले लाल मौन कौन हेत हौ ।
केशव प्रकाश हास हँसि कहा लेहुगे जू,
ऐस ही हँसे ते तौ हिये को हरि लेत हौ ।।७।।

माखन के चोर मधु चोर दधि दूध चोर,
देखत हौं देखत ही हियो हरि लेत हैं ।
पुरुष पुराण अरु पूरण पुराण इन्हें,
पुरुष पुराण सु कहत किहि हेत हैं ।
केशोदास देखि-देखि सुरन की सुन्दरी वे,
करती विचार सब सुमति समेत हैं ।
देखि गति गोपिका की भूलिजात निज गति,
अगतिन कैसे धौं परम गति देत हैं ।।८।।

सोहैं दिवाय-दिवाय सखी इकबारक कानन आन बसाये ।
जाने को केशव कानन ते कित ह्वै हरि नैननि माँझ सिधाये ।
लाज के साज धरे ही रहे सब नैनन लै मन ही सों मिलाये ।
कैसी करौं अब क्यों निकसैं ही हरेई हरे हिय में हरि आये ।।९।।

काल्हि की ग्वारि तौ आजहु तै न सम्हारति केशव कैसेहु देहै ।
सीरी ह्वै जात उठै कबहूँ जरि जीव रहै कै रही रुचि रे है ।
कोरि बिचार बिचारित है उपचारन के बरसै सखि मेहै ।
कान्हबुरो जिन मानौ तिहारी बिलोकन मैं बिस बीस बिसे है ।।१०।।

देखत ही चित्र सूनी चित्रसाला बाला आजु,
रूप की सी माला राधा रूपक सुहाये री ।
नूपुर के सुरन के अनुरूप तानै लेत,
पगतल ताल देत अति मन भाये री ।
ऐसे मैं दिखाई दीन्ह औचक कुँवर कान्ह,
जैसे हैं ये गात तैसे जात न बताये री ।
केशोदास कहैं परै अलज सलज से न,
जलज से लोचन जलद से ह्वै आये री ।।११।।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

गोप बड़े-बड़े बैठे अथाइनि केशव कोटि सबै अवगाहीं ।
खेलत बालक जाल गलीन मैं बाल बिलोकि-बिलोकि बिकाहीं ।
आवति जाति लुगाई चहूँ दिसि घूँघट में पहिचानत छाँहीं ।
चन्द सो आनन काढ़ि कहाँ चली सूझत है कछु तोहिं की नाहीं ।।१२।।

केशव कुँवर वृषभानु की कुँवरि वन,
देवता ज्यों वन उपवन विहरति है ।
कमला ज्यों थिर न रहति कहूँ एक ठौर,
कमलानुजा ज्यों कमलनि ते डरति है ।
काली ज्यों न केतकी के फूल सूँघ सीताजू,
ज्यों निसिचर मुख चन्द देखि ही जरति है ।
वदन उघारता ही मदन सुयोधन ही,
द्रौपदी ज्यों नाउँ मुख तेरोई ररति है ।।१३।।

घोर घने घन घोरत सज्जल उज्जल कज्जल की रुचि राँचैं ।
फूले फिरैं इभ से नभ पाइक सावन की पहिली तिथि पाँचैं ।
चौहूँ दिसा तड़िता तड़पै डरपै बनिता कहि केशव पाँचैं ।
जानि मनौं ब्रजराज बिना ब्रज ऊपर काल कुटुम्बिन नाचैं ।।१४।।

केशोदास लाख-लाख भाँतिन के अभिलाख,
बारि दै री बावरी न बारि हिये होरी सी ।
राधा हरि केरी प्रीति सब ते अधिक जानि,
रति रतिनाथ हूँ मैं देखो रति थोरी सी ।
तिनहूँ मैं भेद न भवानि हूँ पैं पार्‌यो जाइ,
भारती की भारती है कहिबे को भोरी सी ।
एकै गति एकै मति एकै प्राण एकै मन,
देखिबे को देह द्वै हैं नैनन की जोरी सी ।।१५।।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

कविप्रिया

ऋतुवर्णन

शीतल समीर शुभ गंगा के तरंगयुत,
अंबर विहीन वपु बासुकि लसंत है।
सेवत मधुपगण गजमुख परभृत,
बोल सुन होत सुखी संत औ असंत है।
अमल अदल रूप मंजरी सुपद रज,
रंजित अशोक दुख देखत नसंत है।
जाके राज दिसि दिसि फूले हैं सुमन सब,
शिव को समाज किधौं केशव बसंत है ॥१६॥

चंडकर कलित बलित बर सदागति,
कंदमूल फल फूल दलनि को नासु है।
कीच बीच बचैं मीन व्याल बिल, कोलकुल,
द्विरद दरीन दिनकृत को विलासु है।
थिर चर जीवन हरन वन वन प्रति,
केशोदास मृगसिर श्रवन निवासु है।
धावत बली धनुस सोहत निपानि सर,
शवर समूह कैधों ग्रीषम प्रकासु है ॥१७॥

भौंहें सुर चाप चारु प्रमुदित पयोधर,
भूषन जराय जोति तडित रलाई है।
दूरि करी सुख मुख सुखमा ससी की नैन,
अमल कमल दल दलित निकाई है।
केशोदास प्रवल करेनुका गमन हर,
मुकुत सुहंसक सबद सुखदाई है।
अंबर बलित मति मोहै नीलकंठ जू की,
कालिका कि बरषा हरषि हिय आई है ॥१८॥

सोभा को सदन ससि बदन मदन कर,
बंदै नर देव कुबलाय बरदाई है।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

पावन पद उदार लसति हंसक मार,
दीपति जलजहार दिसि दिसि धाई है।
तिलक चिलक चारु लोचन कमल रुचि,
चतुर चतुरमुख जग-जिय भाई है।
अमल अंबर नील लीन पीन पयोधर,
केशोदास शारदा कि शरद सुहाई है ॥१९॥
अमल कमल दल लोचन, ललित गति,
जारत समीर, सीत भीति दीह दुख की।
चंद्रक न खायो जाय, चंदन न लायो जाय,
चंद न चितयो जाय प्रकृति बपुष की।
घट की घटित जाति घटना घटी हू घटी,
छिन छिन छीन छबि रबिमुख सुख की।
सीकर तुषार खेद सोहत हेमंत ऋतु,
किधौं केशोदास प्रिया प्रीतम बिमुख की ॥२०॥
सरस असमसर सरसिज लोचनि, वि-
लोकि लोक लीक लाज लोपिबे को आगरी।
ललित लता सुबाहु जानि जून ज्वान बाल,
बिटप उरनि लागै उमँगि उजागरी।
पल्लव अधर मधु मधुपन पीवत ही,
रचित रुचिर पिक रुत सुख सागरी।
इति विधि सदागति बास बिगलित गात,
शिशिर की सोभा किधौं बारनारि नागरी ॥२१॥

स्फुट

फूले पलास बिलास थली कहिं,
केसवदास प्रकास न थोरे ।
शेष अमेय मुखानल की जनु,
ज्वाल विसाल चली दिवि बोरे।
किंसुक श्री सुकतुण्डनि की रुचि,
राचे रसातल में चित चोरे ।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

चंचुनि चापि चहूँ दिसि डोलत,
चार चकोर अँगारनि भोरे ।।२२।।

मैन ऐसे मन मृदु, मृदुल मृणालिका के,
सूत ऐसी स्वरध्वनि, मनहिं हरति है।
दार्‌यो कैसो बीजदंद, पात से अरुण ओंठ,
देखि केशवदास दृग आनँद भरति है।
येरी बीर तेरी मोंहि भावत भलाई ताते,
बूझति हों तोंहिं और बूझत डरति है।
माखनि सी जीभ, मुख कंज सो कोंवर, तासों,
काठ सी कठेठी बात कैसे निकरति है ।।२३।।

अनही ठीक को ठग, जाने ना कुठौर ठौर,
ताही पै ठगावै ठेलि जाही को ठगतु है।
याके डर तू निडर ! डग डगति डरि,
डर के डरनि डगै डौंगी ज्यों डगतु है।
ऐसो वसोवास ते उदास होहि केशवदास,
केशो न भजतु कहि काहे को भजतु है।
झूठो है रे झूठो जग राम की दोहाई, काहू,
साँचे को कियो है ताते साँचो सो लगतु है ।।२४।।

मेह के हैं सखि आँसू, उसासनि साथ निशा सु विसासिनि बाढ़ी।
हास गयो उड़ि हंसनि ज्यों, चपला सम नींद गई गति काढ़ी।
चातक ज्यों पिव पीव रटै, चढ़ि ताप तरंगिनि ज्यों तन गाढ़ी।
केशव वाकी दशा सुनिहौं अब आगि बिना अँग अंगनि डाढ़ी ।।२५।।

जा दिन ते वृषभानु लली ही अली मिलये मुरलीधर ते ही।
साधन साधि अगाधि सबै बुधि शोधि जे दूत अभूतन में ही।
ता दिन ते दिनमान दुहून की केशव आवति बात कहे ही।
पीछे अकास प्रकासै ससी चढ़ि प्रेम समुद्र बढ़ै पहिले ही ।।२६।।

राधा के अंग गोराई-सी और गोरा ई बिरंचि बनावन लीनी।
कै सत बुद्धि विवेक सों एक अनेक बिचारनि मैं दृग दीनी।
बानिक तैसी बनी न बनावत केशव प्रत्युत ह्वै गई हीनी।
लै तब केसरि केतिक कंचन चम्पक के दल दामिनि कीनी ।।२७।।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

सेनापति

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

कवित्त रत्नाकर

श्लेष-वर्णन

राखति न दोषै पोषै पिंगल के लच्छन कौं
        बुध कवि के जो उपकंठ ही बसति है ।
जोए पद मन कौं हरष उपजावति है
        तजै को कनरसै जो छंद सरसति है ।।
अच्छर हैं विशद करति उषै आप सम
        जातैं जगत की जड़ताऊ बिनसति है ।
मानौं छबि ताकी उदवत सबिता की सेना-
        पति कवि ताकी कबिताई बिलसति है ।। १ ।।

तुकन सहित भले फल कौं धरत सूधे
        दूर कौं चलत जे हैं धीर जिय ज्यारी के ।
लागत विविध पक्ष सोहत हैं गुन संग
        स्रवन मिलत मूल कीरति उज्यारी के ।।
सोई सीस धुनै जाके उर मैं चुभत नीके
        बेग बिधि जात मन मोहैं नर नारी के ।
सेनापति कवि के कबित्त बिलसत अति
        मेरे जान बान हैं अचूक चापधारी के ।। २ ।।

ब्यापी देस देस बिस्व कीरति उज्यारी जाकी
        सीतै संग लीने जामैं केवल सुघाई है ।
सुर-नर-मुनि जाके दरस कौं तरसत
        राखत न खर तेजै कला की निकाई है ।।
करन के जोर जीति लेत हैं निसा कलंकै
        सेवक हैं तारे ताकी गनती न पाई है ।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

राजा रामचंद अरु पून्यौं कौं उदित चंद
सेनापति बरनी दुहू की समताई है ।।३।।
सारंग धुनि सुनावै घन रस बरसावै
मोर मन हरषावै अति अभिराम है ।
जीवन अधार बड़ी गरज करनहार
तपति हरनहार देत मन काम है ।
सीतल सुभग जाकी छाया जग सेनापति
पावत अधिक तन मन बिसराम है ।
संपै संग लीने सम्मुख तेरे बरसाऊ
आयौ घनस्याम सखि मानौं घनस्याम है ।।४।।

सदा नंदी जाकौं आसा कर है विराजमान
नीकौ घनसार हू तैं बरन है तन कौं ।
सैन सुख राखैं सुधा दुति जाके सेखर है
जाके गौरी की रति जो मथन मदन कौं ।।
जो है सब भूतन कौं अंतर निवासी रमैं
धरै उर भोगी भेष धरत नगन कौं ।
जानि बिन कहैं जानि सेनापति कहैं मानि
बहुधा उमाधव कौं भेद छाँड़ि मन कौं ।।५।।

गीतहिं सुनावैं तिलकन झलकावैं भुज
मूलन छपावैं द्वारका हू के पयान ही ।
बैसनव भेष भगतन की कमाई खाहिं
सेवैं हरि साहिबै न साँच है निदान ही ।।
देखि कै लिबास नीची सबन की नारि होति
मोहि कै बिकच करैं मन धन ध्यान ही ।
सेनापति सुमति बिचारि देखौ भली भाँति
कलि के गुसाईं मानौं मँगना समान ही ।।६।।

कुबिजा उर लगाई हमहूँ उर लगाई
पी रहै दुहू के तन मन वारि दीने हैं ।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

वे तौ एक रति जोग, हम एक रति जोग
सूल करि उनके हमारे सूल कीने हैं ॥
कूबरी यौं कल पैहै हम इहाँ कल पैहैं
सेनापति स्यामैं समुझैं यौं परवीने हैं ।
हम वे समान ऊधौ कहौ कौन कारन तैं
उन सुख माने हम दुख मानि लीने हैं ॥७॥

कोट गढ़ गिरि ढाहैं जिनकौं दुरग ना हैं
बल की अधिक छबि आरवी सहित हैं ।
देखियै जिन मैं सदा गति अति मंद भारी
मानौं ते जलद ते जकरि राखे नित हैं ॥
डगनि चलत महा करिनी के बस राखे
सब कहैं सिंधुर हैं दरद रहित हैं ।
सेनापति बरने हैं महाराज राम जू कै
हाथी हैं सुधारे असवारी के उचित हैं ॥८॥

तेरे नीकी वसुधा है वाके तौ न वसुधा है
तू तौ छत्रपति सो न छत्रपति मानियै ।
सूर सभा तेरी जोति होति है सहसगुनी
एक सूर आगे चंद जोति पै न जानियै ॥
सेनापति सदा बड़ी साहिबी अचल तेरी
निसि-दिन चंद चल जगत बखानियै ।
महाराज रामचंद चंद तैं सरस तू है
तेरी समता कौं चंद कैसे मन आनियै ॥९॥

ऋतु-वर्णन

बृष कौं तरनि तेज सहसौ किरन करि
ज्वालन के जाल बिकराल बरसत है ।
तचति धरनि, जग जरत झरनि, सीरी
छाँह कौं पकरि पंथी-पंछी बिरमत है ॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

सेनापति नैंक दुपहरी के ढरत, होत
धमका विषम, ज्यौं न पात खरकत है।
मेरे जान पौनौं सीरी ठौर कौं पकरि कौंनौं
घरी एक बैठि कहूँ घामै बितवत है ॥१०॥

देखैं छिति अंबर जलै है चारि ओर छोर
तिन तरवर सब ही कौं रूप हर्यौ है।
महा झर लागै जोति भादव की होति चलै
जलद पवन तन सेक मानौं पर्यौ है॥
दारुन तरनि तरैं नदी सुख पावैं सब
सीरी घनछाँह चाहिबौई चित धर्यौ है।
देखौ चतुराई सेनापति कविताई की जु
ग्रीषम विषम बरषा की सम कर्यौ है ॥११॥

गगन-अँगन घनाघन तैं सघन तम,
सेनापति नैंक हू न नैंन मटकत हैं।
दीप की दमक, जीगनान की झमक छाँड़ि
चपला चमक और सौं न अटकत हैं॥
रवि गयौ दवि मानौं ससि सोऊ धसि गयौ,
तारे तोरि डारे से न कहूँ फटकत हैं।
मानौं महा तिमिर तैं भूलि परी बाट तातैं
रबि, ससि, तारे कहूँ भूले भटकत हैं ॥१२॥

सेनापति उनए नए जलद सावन के,
चारि हू दिसान घुमरत भरे तोइ कै।
सोभा सरसाने, न बखाने जात काहू भाँति,
आने हैं पहार मानौं काजर के ढोइ कै॥
घन सौं गगन छयौ, तिमिर सघन भयौ,
देखि न परत मानौं रबि गयौ खोइ कै।
चारि मास भरि स्याम निसा के भरम करि,
मेरे जान याही तैं रहत हरि सोइ कै ॥१३॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

सोत कौं प्रबल सेनापति कोपि चढ्यौ दल,
निबल अनल, गयौ सूर सियराइ कै ।
हिम के समीर, तेई बरसैं बिषम तीर,
रही है गरम भौन कोकन मैं जाइ कै ।।
धूम नैंन बहैं, लोग आगि पर गिरे रहैं,
हिए सौं लगाइ रहैं नैंक सुलगाइ कै ।।
मानौ भीत जानि, महा सीत तैं पसारि पानि,
छतियाँ की छाँह राख्यौ पाउक छिपाइ कै ।।१४।।

सिसिर तुषार के बुखार से उखारत है,
पूस बीते होत सून हाथ-पाइ ठिरि कै ।
द्यौस की छुटाई की बड़ाई बरनी न जाइ,
सेनापति पाई कछू सोचि कै सुमिरि कै ।।
सीत तैं सहस-कर सहस-चरन ह्वै कै,
ऐसे जात भाजि तम आवत है घिरि कै ।।
जौ लौं कोक कोकी कौं मिलत तौं लौं होति राति,
कोक अधबीच ही तैं आवत है फिरि कै ।।१५।।

राम-रसायन

सुरतरु सार की, सवाँरी है विरंचि पचि,
कंचन खचित चिंतामनि के जराइ की ।
रानी कमला कौं पिय-आगम कहनहारी,
सुरसरि-सखी, सुख-दैनी, प्रभु-पाइ की ।।
बेद मैं बखानी, तीनि लोकन की ठकुरानी,
सब जग जानी सेनापति के सहाइ की ।
देव-दुख-दंडन, भरत-सिर-मंडन, वे
बंदौं अघ-खंडन खराऊँ रघुराइ की ।।१६।।

कीनौ बालापन बालकेलि मैं मगन मन,
लीनौ तरुनापै अरुनी के रस तीर कौं ।
अब तू जरा मैं पर्‌यौ मोह पींजरा मैं, सेना

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

पति भजु रामैं जो हरैया दुख पीर कौं ।।
चितहि चिताउ भूलि काहू न सताउ, आउ
लोहे कैसौ ताउ, न बचाउ है शरीर कौं ।
लेह देह करि कै, पुनीत करि लेह देह,
जीभै अवलेह देह सुरसरि नीर कौं ।।१७।।

गंगा तीरथ के तीर, थके से रहौ जू गिरि,
कै रहौ जू गिरि चित्रकूट कुटी छाइ कै ।
जातै दारा नसी, बास तातैं बारानसी, किधौं
लुंज ह्वै कै वृन्दाबन कुंज बैठ जाइ कै ।।
भयौ सेतु अंध ! तू हिए कौं हेतु बंध जाइ,
धाइ सेतुबंध के धनी सौं चित लाइ कै ।
बसौ कंदरा मैं, भजौ खाइ कंद रामैं, सेना-
पति मंद ! रामैं मति सोचौ अकुलाइ कै ।।१८।।

पान चरनामृत कौं, गान गुन गनन कौं,
हरि-कथा सुनि सदा हिय कौं हुलसिबौ ।
प्रभु के उतीरन की, गुदरीयौ चीरन की,
भाल, भुज, कंठ, उर छापन कौं लसिबौ ।।
सेनापति चाहत है सकल जनम भरि,
बृन्दाबन-सीमा तैं न बाहिर निकसिबौ ।
राधा-मन-रंजन की शोभा नैंन-कंजन की,
माल गरे गुंजन की, कुंजन कौं बसिबौ ।।१९।।

धातु, सिला, दार, निरधार प्रतिमा कौं सार,
सो न करतार तू बिचार बैठि गेह रे ।
राखु दीठि अंतर, कछू न सून-अंतर है,
जीभ कौं निरन्तर जपाउ तू हरे हरे ।।
मंजन बिमल सेनापति मन-रंजन तू,
जानि कै निरंजन परम पद लेह रे ।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

कर न संदेह रे, कही मैं चित देह रे, क-
हा है बीच देहरे ? कहा है बीच देह रे ॥२०॥

एरे मन मेरे, खोए बासर घनेरे, करि
जोष अभिलाष अजहुँ न उह रत है।
तजि कै विवेक, राम-नाम कौं सरस रस,
सेनापति महा मोह ही मैं बिहरत है।
जद्यपि दुलभ तऊ और अभिलाष, दैव
जोग तैं सुलभ, ज्यौं घुनच्छर परत है।
कीजियै कहाँ लौं तेरे मन की बड़ाई, जातैं
मरेन के जीबे कौं मनोरथ करत है ॥२१॥

गंगामाहात्म्य

यह कलिकाल बढ्यौ दुरति कराल, देखि
आई दुचिताई, सुचिताई सब लूट हीं।
हम तपहीन, जाइ तरैं कत दीन, तोसी
दूसरी नदी न, देखि फिरे चहुँ खूँट हीं।
सेनापति सिव-सिर-संगिनी, तरंगिनी तू,
तोहि अचवत पचवत कालकूट हीं।
तजि कै अपाइ, तीर बसैं सुख पाइ, गंगा !
कीजै सो उपाइ, तेरे पाइ ज्यौं न छूटहीं ॥२२॥

यह सुरसरि, कौंन करै सुर सरि याकी,
भू पर जो ऊपर है तीरथ समाज के।
धरम अधार धार याकी निराधार दाता,
याही कै तरैंगे सेनापति सुभ काज के।
को कहै बखानि, अवलोकन करत जाके,
सोक न रहत, ओक होत सुख साज के।
थोक नसैं पापन के, दोक जल-कन चाखैं,
ओक भरि पियैं लोक जीतैं जमराज के ॥२३॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

कालतैं कराल कालकूट कंठ माँझ लसै
ब्याल उर माल, आगि भाल सब ही समैं।
ब्याधि के अरंग ऐसे ब्यापि रह्यौ आधौ अंग,
रह्यौ आधौ अंग सो सिवा की बकसीस मैं।
ऐसे उपचार तैं न लागती बिलात बार,
पैयती न बाकी तिल एकौ कहूँ ईस मैं।
सेनापति जिय जानी सुधा तैं सहस बानी,
जौ पै गंगा रानी कौं न पानो होतौ सीस मैं ।।२४।।

कोह कौं घटाइ, लोभ मोहन मिटाइ काम,
हू तैं निबटाइ करि, करति उधार है।
देखैं बारि दीन, दारिदी न होत सपने हू,
पावै राज बसु, ताके बस बसुधा रहै ।।
रोग करै दूरि, भोग राखै भरपूरि, एक
अमर करन मूरि मानहू सुधा रहै।
धरम अधार, सेनापति जानी निरधार,
गंगा तेरी धार कामधेनु तैं दुधार है ।।२५।।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

बिहारी

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

सतसई

भक्ति

मेरी भव-बाधा हरौ, राधा नागरि सोइ ।
जा तन की झाँईं परैं, स्यामु हरित-दुति होइ ॥ १ ॥
तजि तीरथ, हरि-राधिका-तन-दुति करि अनुरागु ।
जिहिं ब्रज-केलि-निकुंज-मग, पग पग होतु प्रयागु ॥ २ ॥
चिरजीवौ जोरी जुरै, क्यों न सनेह गँभीर ।
को घटि ए बृषभानुजा, वे हलधर के बीर ॥ ३ ॥
मकराकृति गोपाल कैं, सोहत कुंडल कान ।
धर्‌यौ मनौ हिय-धर समरु, ड्यौढ़ी लसत निसान ॥ ४ ॥
जहाँ जहाँ ठाढ़ौ लख्यौ, स्यामु सुभग-सिरमौरु ।
बिनु हूँ उन छिनु गहि रहतु, दृगनु अजौं वह ठौरु ॥ ५ ॥
या अनुरागी चित्त की, गति समुझै नहिं कोइ ।
ज्यों-ज्यों बूड़ै स्याम रंग, त्यों त्यों उज्जलु होइ ॥ ६ ॥
करौ कुबत जगु कुटिलता, तजौं न दीनदयाल ।
दुखी होउगे सरल हिय, बसत त्रिभंगीलाल ॥ ७ ॥

संयोग-श्रृङ्गार

छुटी न सिसुता की झलक, झलक्यौ जोबनु अंग ।
दीपति देह दुहून मिलि, दिपति ताफता-रंग ॥ ८ ॥
कुटिल अलक छुटि परत मुख, बढ़िगौ इतौ उदोतु ।
बंक बकारी देत ज्यौं, दामु रुपैया होतु ॥ ९ ॥
खौरि-पनिच भृकुटी-धनुषु, बधिकु समरु, तजि कानि ।
हनतु तरुन-मृग तिलक-सर-सुरक-भाल भरि तानि ॥ १० ॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

रससिंगार-मंजनु किए, कंजनु भंजनु दैन ।
अंजनु रंजनु हूँ बिना, खंजनु गंजनु नैन ।। ११ ।।

जोग-जुगति सिखये सबै, मनौ महामुनि मैन ।
चाहत पिय-अद्वैतता, काननु सेवत नैन ।। १२ ।।

सायक-सम मायक नयन, रँगे त्रिबिध रँग गात ।
झखौ बिलखि दुरि जात जल, लखि जलजात लजात ।। १३

पत्रा ही तिथि पाइयै, वा घर के चहुँ पास ।
नितप्रति पून्यौई रहै, आनन ओप उजास ।। १४ ।।

भाल लाल बेंदी ललन, आखत रहे बिराजि ।
इन्दुकला कुज मैं बसी, मनौ राहु-भय भाजि ।। १५ ।।

लौनें मुँह दीठि न लगै, यौं कहि दीनौ ईठि ।
दूनी ह्वै लागन लगी, दियैं दिठौना दीठि ।। १६ ।।

सहज सेत पँचतोरिया, पहिरत अति छबि होति ।
जलचादर के दीप लौं, जगमगाति तन-जोति ।। १७ ।।

औरै-ओप कनीनिकनु, गनी धनी-सिरताज ।
मनी धनी के नेह की, बनी छनी पट लाज ।। १८ ।।

घाम घरीक निवारियै, कलित ललित अलि-पुंज ।
जमुना-तीर तमाल तरु, मिलित मालती-कुंज ।। १९ ।।

निसि अँधियारी नील पटु, पहिरि चली पिय गेह ।
कहौ दुराई क्यौं दुरै, दीप-सिखा सी देह ।। २० ।।

हरषि न बोली लखि ललनु, निरखि अमिलु सँग साधु ।
आँखिनु हीं मैं हँसि धर्‌यौ, सीस हियैं धरि हाथु ।। २१ ।।

बतरस-लालच लाल की, मुरली धरी लुकाइ ।
सौंह करैं भौंहनु हँसै, दैन कहै नटि जाइ ।। २२ ।।

कहत नटत रीझत खिझत, मिलत खिलत लजियात ।
भरे भौन मैं करत हैं, नैननु ही सब बात ।। २३ ।।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

उन हरकी हँसि कै इतै, इन सौंपी मुसकाइ ।
नैन मिलैं मन मिलि गए, दोऊ मिलवत गाइ ।।२४।।

उड़ति गुड़ी लखि ललन की, अँगना अँगना माँह ।
बौरी लौं दौरी फिरति, छुवति छबीली छाँह ।।२५।।

डिगत पानि डिगुलात गिरि, लखि सब ब्रज बेहाल ।
कंपि किसोरी दरसि कै, खरैं लजाने लाल ।।२६।।

समरस-समर-सकोच-बस, बिबस न ठिक ठहराइ ।
फिरि फिरि उझकति फिरि दुरति, दुरि दुरि उझकति आइ ।।२७।।

सटपटाति सैं ससिमुखी, मुख घूँघट-पटु ढाँकि ।
पावक-झर सी झमकि कै, गई झरोखा झाकि ।।२८।।

वियोग-शृंगार

हरि-छबि-जल जब तैं परै, तब तैं छिनु बिछुरैं न ।
भरत ढरत बूड़त तरत, रहटघरी लौं नैन ।।२९।।

प्रजर्यौ आगि बियोग की, बह्यौ बिलोचन-नीर ।
आठौं जाम हियौ रहै, उड़्यौ उसास-समीर ।।३०।।

फिरि फिरि चितु उत ही रहतु, टुटी लाज की लाव ।
अंग-अंग-छबि-झौंर मैं, भयो भौंर की नाव ।।३१।।

पिय कैं ध्यान गही गही, रही वही ह्वै नारि ।
आपु आपु ही आरसी, लखि रीझति रिझवारि ।।३२।।

बिरह-जरी लखि जीगननु, कह्यौ न उहि कै बार ।
अरी आउ भजि भीतरैं, बरसत आजु अँगार ।।३३।।

कहा कहौं वाकी दसा, हरि प्राननु के ईस ।
बिरह-ज्वाल जरिबो लखैं, मरिबौ भई असीस ।।३४।।

यह बिनसतु नगु राखि कै, जगत बड़ौ जसु लेहु ।
जरी विषम जुर जाइयैं, आइ सुदरसनु देहु ।।३५।।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

कागद पर लिखत न बनत, कहत सँदेसु लजात ।
कहिहै सबु तेरौ हियौ, मेरे हिय की बात ।।३६।।

कर लै चूमि चढ़ाइ सिर, उर लगाइ भुज भेटि ।
लहि पाती पिय की लखति, बाँचति धरति समेटि ।।३७।।

प्रकृति

छकि रसाल-सौरभ सने, मधुर माधुरी-गंध ।
ठौर-ठौर झौंरत झँपत, भौंर-झौंर मधु-अंध ।।३८।।

वैठि रही अति सघन बन, पैठि सदन-तन माँह ।
देखि दुपहरी जेठ की, छाँहौं चाहति छाँह ।।३९।।

पावस-घन-अँधियार महँ, रह्यौ भेदु नहिं आनु ।
रात द्यौस जान्यौ परतु, लखि चकई चकवानु ।।४०।।

अरुन सरोरुह-कर-चरन, दृग-खंजन, मुख-चंद ।
समै आइ सुन्दरि सरद, काहि न करत अनंद ।।४१।।

ज्यौं ज्यौं बढ़ति बिभावरी, त्यौं त्यौं बढ़त अनंत ।
ओक ओक सब लोक-सुख, कोक-सोक हेमंत ।।४२।।

लगत सुभग सीतल किरन, निसि-सुख दिन अवगाहि ।
माह ससी-भ्रम सूर-त्यौं, रहति चकोरी चाहि ।।४३।।

सघन कुंज-छाया सुखद, सीतल सुरभि-समीर ।
मनु ह्वै जातु अजौं वहै, उहि जमुना के तीर ।।४४।।

चुवत स्वेद मकरंद-कन, तरु-तरु-तर बिरमाइ ।
आवत दच्छिन देस तैं, थक्यौ बटोही बाइ ।।४५।।

धुरवा होंहि न अलि उठै, धुवाँ धरनि चहुँ कोद ।
जारत आवत जगत कौ, पावस-प्रथम पयोद ।।४६।।

बहुज्ञता

मोर-मुकुट की चंद्रिकनु, यौं राजत नँदनंद ।
मनु ससिशेखर की अकस, किय सेखर सत चंद ।।४७।।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

सनि-कज्जल चख-झख-लगन, उपज्यौ सुदिन सनेहु ।
क्यौं न नृपति ह्वै भोगवै, लहि सुदेसु सबु देहु ।।४८।।

मंगलु बिंदु सुरंग, मुख ससि, केसरि-आड़ गुरु ।
इक नारी लहि संगु, रसमय किय लोचन-जगत ।।४९।।

मोहन मूरति स्याम की, अति अदभुत गति जोइ ।
बसत सुचित-अंतर तऊ, प्रतिबिंबित जग होइ ।।५०।।

मैं समुझ्यौ निरधार, यह जग काँचो काँच सौं ।
एकै रूप अपार, प्रतिबिंबित लखियतु जहाँ ।।५१।।

जोग-जुगति सिखए सबै, मनो महामुनि मैन ।
चाहत पिय-अद्वैतता, काननु सेवत नैन ।।५२।।

दूरि भजत प्रभु पीठि दै, गुन-बिस्तारत-काल ।
प्रगटत निर्गुन निकट रहि, चंग-रंग भूपाल ।।५३।।

कौड़ा आँसू-बूँद, कसि साँकर बरुनी सजल ।
कीने बदन निमूँद, दृग-मलिंग डारे रहत ।।५४।।

अन्योक्ति

नहिं परागु, नहिं मधुर मधु, नहिं बिकासु इहि काल ।
अली कली ही सौं बँध्यौं, आगैं कौन हवाल ।।५५।।

स्वारथु सुकृतु न, श्रमु बृथा, देखि बिहंग बिचारि ।
बाज पराए पानि परि, तूँ पच्छीनु न मारि ।।५६।।

काल्हि दसहरा बीतिहै, धरि मूरख, जिय लाज ।
दुर्‌यौ फिरत कत द्रुमनि मैं, नीलकंठ बिनु काज ।।५७।।

नहिं पावसु ऋतुराज यह, तजि तरुवर चित-भूल ।
अपतु भए बिनु पाइहै, क्यों नवदल फल फूल ।।५८।।

पटु पाँखै भखु काँकरै, सपर परेई संग ।
सुखी, परेवा पुहुमि मैं, एकै तुही बिहंग ।।५९।।

इहीं आस अटक्यौ रहतु, अलि गुलाब कै मूल ।
ह्वै है फेरि बसंत ऋतु, इन डारनु वे फूल ।।६०।।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

प्रेम

या अनुरागी चित्त की, गति समुझै नहिं कोइ।
ज्यों ज्यौं बूड़ै स्याम रँग, त्यौं त्यौं उज्जलु होइ ॥६१॥

गिरि तै ऊँचे रसिक-मन, बूड़े जहाँ हजारु।
बहै सदा पसुनरन कौं, प्रेम-पयोधि पगारु ॥६२॥

जद्यपि सुन्दर सुघर पुनि, सगुनौ दीपक-देह।
तऊ प्रकाश करै तितौ, भरियै जितौं सनेह ॥६३॥

क्यों बसियै क्यों निबहियै, नीति नेह-पुर माँहि।
लगालगी लोइन करैं, नाहक मन बँधि जाँहि ॥६४॥

दृग उरझत, टूटत कुटुम, जुरत चतुर–चित प्रीति।
परति गाँठि दुरजन हियैं, दई नई यह रीति ॥६५॥

प्रकीर्ण

तंत्री-नाद, कबित्त-रस, सरस राग, रति रंग।
अनबूड़े बूड़े तरे, जे बूड़े सब अंग ॥६६॥

इक भीजैं, चहलैं परैं, बूड़ैं बहैं हजार।
कितै न औगुन जग करैं, बै-नै चढ़ती बार ॥६७॥

लिखनि बैठि जाकी सबी, गहि गहि गरब गरूर।
भए न केते जगत के, चतुर चितेरे कूर ॥६८॥

चटक न छाँड़तु घटत हूँ, सज्जन-नेहु गँभीरु।
फीकौ परै न, बरु फटै, रँग्यौ चोल-रँग चीरु ॥६९॥

जौ न जुगति पिय मिलन की, धूरि मुकुति-मुँह दीन।
जौ लहियै सँग सजन तौ, धरक नरक हूँ कीन ॥७०॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

मतिराम

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

स्फुट

बिंब-से अरुन अति अमल अधर पर,
मंद बिलसत चारु चाँदनी सुबास हैं;
कासौं जाय बरनि बनक नाकबेसरि की,
ललित बिलोकनि पै बिबिध बिलास है;
कवि 'मतिराम' पाय सहज सुबास आस,
भौंरनि की भीर न तजत आस-पास है;
कहा दरपन कैसैं पावत बदन जोति,
चंद जाको चेरो अरबिंद जाको दास है ।।१।।

रावरे नेह कौं लाज तजी अरु गेह के काज सबै बिसराए;
डारि दियो गुरु लोगनि को डर, गाँव चवाय मैं नाव धराए ।
हेत कियो हम जो तो कहाँ तुम तो 'मतिराम' सबै बहराए;
कोऊ कितेक उपाय करौ कहूँ होत हैं आपने, पीव पराए ।।२।।

मोहन-लला कौं मनमोहनी बिलोकि बाल,
कसि करि राखति है उमगे उमाह कौं;
सखिनि की दीठि कौं बचाय कै निहारत है,
आनँद प्रवाह बीच पावत न थाह कौं ।
कवि 'मतिराम' और सब ही के देखत ही,
ऐसी भाँति देखति छिपावत उछाह कौं;
वे ही नैन रूखे-से लगत और लोगनि कौं,
वेई नैन लागत सनेह-भरे नाह कौं ।।३।।

जाके कोस भीतर भुवन करतार ऐसो,
जाके नाभिकुंड मैं कमल विकसत हैं;
कहैं 'मतिराम' सब थावर जंगम जग,
जाकी दिग्ध उदर-दरी मैं दरसत है ।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

जाके एक-एक रोम कूपनि मैं कोपनि,
अनंत ब्रह्मांडनि को वृंद बिलसत है;
राव भाव सिंह तेरी कहाँ लौं बड़ाई करौं,
ऐसो बड़ो प्रभु तेरे मन मैं बसत है ।।४।।

तेरो कह्यो सिगरो मैं कियो निसि-द्यौस तप्यों तिहूँ तापन पाई ।
मेरो कह्यो अब तू करि, जो सब दास मिटे परिहै सियराई ।
संकर-पायनि मैं लगि रे मन, थोरे बातनि सिद्धि सुहाई ।
आक-धतूरे के फूल चढ़ाए तें रीझत हैं तिहँ लोक के साईं ।।५।।

मोर पखा 'मतिराम' किरीट मैं, कंठ बनी बनमाल सुहाई ;
मोहन की मुसकानि मनोहर, कुंडल-डोलनि मैं छबि छाई ।
लोचन लोल बिसाल बिलोकनि, को बिलोकि भई बस माई;
वा मुख की मधुराई कहा कहौं, मीठी लगै अंखियान लुनाई ।।६।

बरषा-सी लागी निसि बासर बिलोचननि,
बाढ़ो परवाह भयो नावनि उतरिबौ ।
सहौ जाय कौन पै सुकवि 'मतिराम' अति,
बिरह अनल ज्वाल जालन ते जरिबौ ।
जैयत समीप तो उड़ैयत उसासनि सों,
हमकौं तौ होतु उत हेरत हहरिबौ ।
कियौ कहा चाहत सु करो न कुँवर कान्ह,
रह्यो अब वाको उपचारनि को करिबौ ।।७।।

पूरन चंद उदोत कियौ घन फूलि रही बन जाति सुहाई;
भौरनि की अबली कल कैरव-कुंजनि पुंजन मैं मृदु गाई ।
बाँसुरीताननि काम के बाननि, लै 'मतिराम' सबै अकुलाई;
गोपिन गोप कछू न गने, अपने-अपने घर तैं उठि धाई ।।८।

आनन-पूरन चंद लसै अरबिंद-बिलास-बिलोचन पेखे;
अंबर पति लसै चपला छबि अंबुद मेचक अंग उरेखे;
काम हूँ तैं अभिराम महा 'मतिराम' हिए निहचै करि लेखे;
तैं बरनैं निज वैनन सौं सखी मैं निज नैनन सौं जनु देखे ।।९।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

जा दिन तै चलिबे की चरचा चलाई तुम,
ता दिन तैं वाके पियराई तन छाई है।
कहैं 'मतिराम' छोड़े भूषन, बसन, पान,
सखिन सौं खेलनि, हँसनि बिसराई है।
आई रितु सुरभि, सुहाई प्रीति वाके चित्त,
ऐसे मैं चलौ तो लाल रावरी बड़ाई है।
सोवत न रैन-दिन, रोवति रहति बाल,
बूझे तैं कहत मायके की सुधि आई है ।।१०।।

जमना के तीर बहै सीतल समीर तहाँ,
मधुकर करत मधुर मंद सोर हैं;
कबि 'मतिराम' तहाँ छबि सौं छबीली बैठी,
अंगन ते फैलत सुगंध के झकोर हैं।
पीतम बिहारी की निहारिबे को बाट ऐसी,
चहूँ ओर दीरघ दृगनि करी दौर हैं;
एक ओर मीन मानों, एक ओर कंज-पुंज,
एक खंजन, चकोर एक ओर हैं ।।११।।

जाके अंग-अंग की निकाई निरखत आली,
वारने अनंग की निकाई कीजियतु है;
कवि 'मतिराम' जाकी चाह ब्रजनारिन को,
देह अँसुवन के प्रवाह भींजियतु है।
जाके बिनु देखे न परत कल तुमहूँ कौं
जाके बैन सुनत सुधा-सी पीजियतु है;
ऐसे सुकुमार प्रिय नंद के कुमार को यों,
फूलन के मालन की मारु दीजियतु है ।।१२।।

कुंदन कौ रंगु फीको लगै, झलकैं अति अंगन चारु गुराइ;
आंखिन मैं अलसानि, चितौनि में मंजु बिलासन की सरसाई।
को बिन मोल बिकात नहीं, 'मतिराम लहै मुसकानि मिठाई;
ज्यों-ज्यों निहारिए नेरे ह्वै नैननि, त्यों-त्यों खरी निकरै-सी निकाई ।।१४।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

ध्यावैं सुरासुर-सिद्धि समाज, महेसहु आदि महामुनि ग्यानी;
जोग मैं, जंत्र मैं, मंत्र मैं, तंत्र मैं, गावैं सदा स्तुति, सेष भवानी ।
संकट-भाजन आनन की दुति पूरन दंड उदंड सो जानी;
ध्याय सदा पद पंकज को, 'मतिराम' तवै रसराज बखानी ।।१५।।

भक्ति

मो मन तम-तोमहि हरो, राधा को मुख-चंद ।
बढ़ै जाहि लखि सिंधु लौं, नँदनंदन आनंद ।१।

हिये बसत मुख हँसत हौ, हमको करत निहाल ।
घट-घट व्यापी ब्रह्म तुम प्रकट भये नंदलाल ।२।

मैं रसाल की मंजरी, क्यों न करी करतार ।
सुन्दर श्रौन समीप जौ, राखै नंदकुमार ।३।

विषयनि ते निरबेद बर, ज्ञान जोग ब्रत नेम ।
बिफल जानियो ये विना, प्रभु-पद-पंकज प्रेम ।।४।

स्याम रूप अभिराम अति, सकल बिमल गुन धाम ।
तुम निसि-दिन 'मतिराम' की, मति बिसरौ मतिराम ।५।

तलफत घाइनि जीव को, कौन जियावत आनि ।
जो न होति उन दृगनि में, सुधा मधुर मुसकानि ।।६।।

बरनत साँच असंग कै, तुमको बेद गुपाल ।
हिये हमारे बसत हो, पीर न पावत लाल ।।७।।

राधा चरन सरोज नख, इंद्र किये ब्रज चंद ।
मोर मुकुट चंद्रिकनि तूँ, चख चकोर आनंद ।।८।।

अंग ललित सित रंग पट, अंगराग अवतंस ।
हंस वाहिनी कीजिए, वाहन मेरो हंस ।।९।।

श्रृंगार

खेलत मार सिकार है, डोरे पास समेत ।
नैन मृगन सों बाँधि कै, नैन मृगन गहि लेत ।।१।।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

रूप जाल नंदलाल के, परि करि बहुरि छुटैं न।
खंजरीट मृग-मीन से, ब्रजबनितनि के नैन ।।२।।

भौंह कमान कटाछ सर, समर भूमि बिच लैन।
लाज तजे हूँ दुहुन के, सजल सुभट से नैन ।।३।।

बिन देखे दुख के चले, देखे सुख के जाहिं।
कहो लाल उन दृगन के, अँसुवा क्यों ठहराहिं ।।४।।

तुरत दीठि लग जायगी, हौं बिलखी अति आनि।
अनखन दैकै कीजिए, अनख भरी अँखियानि ।।५।।

नील नलिन दल सेज मैं, परी सुतुनु तनु देह।
लसै कसौटी मैं मनों, तनक कनक की रेह ।।६।।

दुबराई गिरि जातु है, कंकन कामिनि बाँह।
उपदेस न ठहरात ज्यों, दुरजन के उर माँह ।।७।।

तेरी औरै भाँति की, दीप सिखा-सी देह।
ज्यों-ज्यों दीपति जगमगै, त्यों-त्यों बाढ़त नेह ।।८।।

रूप सदन मिलि तन बसन, रदन रुचिर रुचि होति।
दामिनि में बिधु बिंब जनु, बिधु में दामिनि जोति ।।९।।

तनु आगे को चलतु है, मन वाही मग लीन।
सलिल-सोत में ज्यों चपल, चलत चढ़ाऊ मीन ।।१०।।

बाल निहाल भई लखै, ललित लाल मुख इंदु।
मन पियूष बरषा भई, नैननि झलके बिंदु ।।११।।

भरी भाँवर साँवरे, रास रसिक रस जान।
तिनही मैं मन भँवतु है, ह्वै बौंडर को पान ।।१२।।

कंप प्रसेद बढ़ै, चढ़ै, भौंह मनो भव-चाप।
अपने पिय सों जानियत, सपने करति विलाप ।।१३।।

मुख बिधु छिन-छिन यों रहै, एक द्यौस ही माँझ।
पून्यो हुती प्रभात अब, होति अमावस साँझ ।।१४।।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

कहा कहे रूखे वचन, सातिक भाव अपार ।
तरुनि छपायो चहति तू, तिन की ओट पहार ।।१५।।
तेरी मृदु मुसक्यानि लखि, सरद जोन्ह सम रंग ।
वाढ़त मोद पयोधि कें, दृगनि तरंग उतंग ।।१६।।
ज्वलित ज्वाल सी जोन इहि, डारति अङ्ग उलीचि ।
भई पियूष मरीचि की, मोकों मरिच मरीचि ।।१७।।
देह दीप दीपति दिपै, बदन चन्द की ज्योति ।
दामिनि दुति मुसिक्यानि मृदु, सुख की खानि उदोति ।।१८।।
हरनि रूप बिरहीनि कौ, जलद जाल बगराइ ।
बाँधि-बाँधि बाननि बधत, मार-बधक सम आइ ।।१९।।
मुकुत हार हरि के हियें, मरकत मनिमय होति ।
पुनि पावत रुचि राधिका, मुख मुसक्यानि उदोति ।।२०।।
लाल तिहारे बिरह नित, छीन बाल के अङ्ग ।
जानति हौं चाहति दियो, निज सायुज्य अनंग ।।२१।।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

भूषण

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

वन्दना

बिकट अपार भव-पंथ के चले को श्रम-
हरन, करन-विजना-से ब्रह्म ध्याइए।
यहि लोक परलोक सुफल करन कोक-
नद से चरन हिए आनि कै जुड़ाइए॥
अलिकुल-कलित-कपोल, ध्यान ललित,
अनंदरूप-सरित मैं भूषण अन्हाइए।
पाप-तरु—भंजन, बिघन-गढ़-गंजन
जगत-मन-रंजन द्विरदमुख गाइए॥१॥

जै जयंति जै आदि सकति जै कालि कपर्दिनि।
जै मधुकैटभ-छलनि देवि जै महिष-विमर्दिनि॥
जै चमुंड जै चंड-मुंड-भंडासुर-खंडिनि।
जै सुरक्त जै रक्तबीज बिड्डाल-बिहंडिनि॥
जै जै निसुंभ सुंभद्दलनि, भनि भूषन जै जै भननि।
सरजा समत्थ शिवराज-कहँ, देहि-बिजै जै जग जननि॥२॥

रायगढ़-वर्णन

जा पर साहि तने सिवराज सुरेस कि ऐसी सभा सुभ साजे।
यों कवि भूषण जंपत हैं लखि संपति को अलकापति लाजै॥
जा मधि तीनिहु लोक कि दीपति ऐसो बड़ो गढ़राज बिराजै।
वारि पताल सी माची मही अमरावति की छवि ऊपर छाजै॥१॥

मनिमय महल शिवराज के इमि रायगढ़ मैं राजहीं।
लखि जच्छ किन्नर असुर सुर गंधर्व हौंसनि साजहीं॥
उतंग मरकत मन्दिरन मधि बहु मृदंग जु बाजहीं।
घन-समै मानहु घुमरि करि घन घनपटल गल गाजहीं॥२॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

मुकतान की झालरिन मिलि मनि-माल छज्जा छाजहीं ।
संध्या समय मानहुँ नखत गन लाल अम्बर राजहीं ।।
जहँ तहाँ ऊरध उठे हीरा किरन घन समुदाय है ।
मानो गगन-तम्बू तन्यो ताके सपेत तनाय है ।।३।।

भूषन भनत जहँ परसि कै मनि पुहुप रागन की प्रभा ।
प्रभु पीत पट को प्रकट पावत सिन्धु मेघन की सभा ।।
मुख नागरिन के राजहीं कहुँ फटिक महलन संग मैं ।
विकसंत कोमल कमल मानहु अमल गंग तरंग मैं ।।४।।

कितहूँ विसाल प्रबाल जालन जटित अंगन भूमि है ।
जहँ ललित बागनि द्रुम लतनि मिलि रहै झिलमिल झूमि है ।।
चंपा चमेली चारु चन्दन चारिहू दिसि देखिए ।
लवली लवंग यलानि केरे लाखि हों लगि लेखिए ।।५।।

पुन्नाग कहुँ कहुँ नागकेसरि कतहुँ बकुल अशोक हैं ।
कहुँ ललित अगर गुलाब पाटल-पटल बेला थोक हैं ।।
कितहूँ नेवारी माधवी सिंगारहार कहूँ लसैं ।
जहँ भाँति भाँतिन रंग-रंग बिहंग आनन्द सों रसैं ।।६।।

शिवाजी प्रशस्ति

साजि चतुरंग वीर रंग में तुरंग चढ़ि,
सरजा सिवाजी जंग जीतन चलत है ।
'भूषण' भनत नाद बिहद नगारन के,
नदी-नद मद गैवरन के रलत है ।।
ऐल-फैल खैल-भैल खलक में गैल-गैल,
गजन की ठेल-पेल सैल उसलत है ।
तारा सो तरनि धूरि धारा मैं लगत जिमि,
थारा पर पारा पारावार यों हलत है ।।१।।

प्रेतिनी पिसाचऽरु निसाचर निसाचरिहू,
मिलि-मिलि आपुस में गावत बधाई है ।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

भैरों भूत प्रेत भूरि भूधर भयंकर से,
जुत्थ-जुत्थ जोगिनी जमात जुरि आई है ॥
किलकि-किलकि कै कुतूहल करति काली,
डिम-डिम डमरू दिगंबर बजाई है ।
सिवा पूछैं सिव सों समाजु आजु कहाँ चली,
काहू पै सिवा नरेश भृकुटी चढ़ाई है ॥२॥

ऊँचे घोर मंदर के अंदर रहनवारी,
ऊँचे घोर मदर के अंदर रहाती हैं ।
कंदमूल भोग करैं कंदमूल भोग करैं,
तीन बेर खाती ते वै तीन (बीन) बेर खाती हैं ॥
भूषन सिथिल अंग भूषन सिथिल अंग,
बिजन डुलाती ते वै बिजन डुलाती हैं ।
'भूषन' भनत शिवराज बीर तेरे त्रास,
नगन जड़ाती ते वै नगन जड़ाती हैं ॥३॥

उतरि पलंग ते न दियो है धरा पै पग,
तेऊ सगबग निसि दिन चली जाती हैं ।
अति अकुलातीं मुरझातीं न छिपाती गात,
बात व सुहातीं बोले अति अनखाती हैं ॥
'भूषन' भनत सिह साहि के सपूत सिवा,
तेरी धाक सुनै अरिनारी बिललाती हैं ।
कोऊ करें धाती कोऊ रोतीं पीट छाती धरै,
तीन बेर खाती तेऽब तीन (बीन) बेर खाती हैं ॥४॥

सोंधे को अधार किसमिस जिन को अहार,
चार को सो अंक लंक चन्द सरमाती हैं ।
ऐसी अरिनारी शिवराज बीर तेरे त्रास,
पायन में छाले परे, कन्दमूल खाती हैं ॥
ग्रीषम तपनि ऐसी तपती न सुनी कान,
कंज कैसी कली बिन पानी मुरझाती हैं ।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

तोरि तोरि आछे से पिछौरा सो निचोरि मुख
कहैं सब कहाँ पानी मुकतों मैं पाती हैं ।।५।।

सबन के ऊपर ही ठाढ़ो रहिबे के जोग,
ताहि खरो कियो छ-हजारिन के नियरे ।
जानि गैर मिसिल गुसैल गुसा धारि उर,
कीन्हों न सलाम न बचन बोले सियरे ।
'भूषन' भनत महावीर बलकन लाग्यो,
सारी पातसाही के उड़ाय गये जियरे ।
तमक ते लाल मुख सिवा को निरखि भये,
स्याह मुख नौ रंग सिपाह मुख पियरे ।।६।।

राना भो चमेली और वेला सब राजा भये,
ठौर-ठौर रस लेत नित यह काज है ।
सिगरे अमीर आनि कुन्द होत घर घर,
भ्रमर भ्रमर जैसे फूल की समाज है ।।
'भूषन' भनत शिवराज वीर तैंहीं देस-
देसन मैं राखी सब दच्छिन की लाज है ।
त्यागे सदा षटपद-पद अनुमान यह,
अलि नवरंगजेब चंपा सिवराज है ।।७।।

केतिक देस चल्यो दल के वल, दच्छिन चंगुल चापि कै चाख्यो ।
रूप गुमान हर्‌यो गुजरात को, सूरत को रस चूसि कै नाख्यो ।।
पंजन पेलि मलिच्छ मले सब, सोई बच्यो जेहि दीन ह्वै भाख्यो ।
सो रंग है सिवराज बली, जिन नौ रंग में रंग एक न राख्यो ।।८।।

जोर करि जैहैं जुमिला हू के नरेस पर,
तोरि अरि खंड-खंड सुभट समाज पे ।
'भूषन' असाम रूप बलख बुखारे जैहैं,
चीन सिलहट तरि जलधि जहाज पै ।।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

सब उमरावन की हठ कूरताई देखौ,
कहैं नवरंगजेब साहि सिरताज पै।
भीख माँगि खैहैं बिन मनसब रैहैं,
पै न जैहैं हजरत महाबली सिवराज पै ॥९॥

गरुड़ को दावा सदा नाग के समूह पर,
दावा नाग-जूह पर सिंह सिरताज को।
दावा पुरहूत को पहारन के कुल पर,
पच्छिन के गोल पर दावा सदा बाज को॥
'भूषन' अखंड नवखंड महिमंडल मैं,
तम पर दावा रवि-किरन समाज को।
पूरब पछाँह देस दच्छिन्न तें उत्तर लौं,
जहाँ पातसाही तहाँ दावा सिवराज को ॥१०॥

'सिवा की बड़ाई औ हमारी लघुताई क्यों,
कहत बार बार कहि पातसाह गरजा।
सुनिये खुमान हरि तुरुक गुमान महि,
देवन जेंवायो कवि 'भूषन' यों अरजा॥
तुम वाको पायकै जरूर रन छोरो वह,
रावरे वजीर छोरि देत करि परजा।
मालुम तिहारो होत याहि मैं निबेरो रन,
कायर सो कायर और सरजा सो सरजा' ॥११॥

चकित चकत्ता चौंकि उठै बार-बार,
दिल्ली दहसति चितै चाह करषति है।
बिलखि बदन बिलखात बिजैपुरपति,
फिरत फिरंगिनि की नारी फरकति है॥
थर थर काँपत कुतुबसाह गोलकुंडा,
हहरि हबस भूप भीर भरकति है।
राज सिवराज के नगारन की धाक सुनि,
केते पातसाहन की छाती दरकति है ॥१२॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

स्फुट

साहितनै सरजा सिवा की सभा जा मधि है,
मेरुबारी सुर की सभा को निदरत है।
'भूषन' भनत जहाँ एक एक सिखर ते,
केते धौ नदी नद की रेल उतरति है॥
जोन्ह को हँसति जोति हीरामनि मंदिरन,
कन्दरन में छबि कुहू की उछरति है।
एतो ऊँचो दुरग महाबली को जामें नख,
तावली सों सहस दीपावली करति है॥१॥

मिलि तहि कुरुख चकत्ता को निरखि कीन्हों,
सरजा सुरेस ज्यों दुचित ब्रजराज को।
भूषन, कुमिस गैर मिसिल खरे किए को,
किये म्लेच्छ मुरछित करिकै गराज को॥
अरे ते गुसलखाने बीच ऐसे उमराय,
लै चले मनाय महराज सिवराज को।
दावदार निरखि निसानों दीह दलराय,
जैसे गड़दार अड़दार गजराज को॥२॥

चंदन में नाग, मद भर्‌यो इंद्रनाग,
विष भरो सेस नाग, कहै उपमा अबस को।
भोर ठहरात न, कपूर बहरात, मेघ,
सरद उड़ात बात लाके दिसि दस को॥
शंभु नीलग्रीव, भौंर पुंडरीक ही बसत,
सरजा सिवाजी सन भूषन सरस को?
छीरधि मैं पक, कलानिधि मैं कलंक याते,
रूप एक टंक ए लहैं न तव जस को॥३॥

तेरो तेज सरजा समत्थ! दिनकर सो है,
दिनकर सोहै तेरे तेज के निकर सो।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

भौंसिल भुवाल ! तेरो जस हिमकर सो है,
हिमकर सोहै तेरे जस के अकर सो ।।
भूषन भनत तेरो हियो रत्नाकर सो,
रत्नाकरौ है तेरो हिए सुखकर सो।
साहि के सपूत सिव साहि दानि ! तेरो कर,
सुरतरु सो है, सुरतरु तेरो कर सो ।।४।।

एक कहैं कलपद्रुम है इमि पूरत है सब की चित चाहै।
एक कहैं अवतार मनोज को यों तन मैं अति सुन्दरता है।
'भूषन' एक कहैं महि इंदु यों राज बिराजत बाढ्यो महा है।
एक कहैं नरसिंह है संगर एक कहैं नरसिंह सिवा है ।।५।।

तेरे ही भुजन पर भूतल को भार,
कहिबे को सेसनाग दिगनाग हिमाचल है।
तेरो अवतार जग पोसन भरनहार,
कछु करतार को न तामधि अमल है ।।
साहिन में सरजा समत्थ सिवराज, कवि,
भूषन कहत जीबो तेरोई सफल है।
तेरो करवाल करै म्लेच्छन को काल, बिन,
काज होत काल बदनाम धरातल है ।।६।।

कीरति को ताजी करी बाजि चढ़ि लूटि कीन्हीं,
भई सब सेन बिनु बाजी बिजैपुर की।
भूषन भनत, भौंसिला भुवाल धाक ही सों,
धीर धरबी न फौज कुतुब के धुर की।
सिंह उदैभान बिन अमर सुजान बिन,
मान बिन कीन्हीं साहबी त्यों दिली सुर की।
साहिसुव महाबाहु शिवाजी सलाह बिन,
कौन पातसाह की न पातसाही मुरकी ।।७।।

सीता संग सोभित सुलच्छन सहाय जाके,
भू पर भरत नाम भाई नीति चारु है।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

भूषन भनत कुल-सूर कुल-भूषन हैं,
दासरथी सब जाके भुज भुव भारु है ॥
अरि-लंक तोर जोर जाके संग बानर हैं,
सिंधु रहैं बांधे जाके दल को न पारु है ।
तेगहि कै भेंटै जौन राकस मरद जानै,
सरजा शिवाजी राम ही को अवतारु है ॥८॥

कौन करै बस वस्तु कौन इहि लोक बड़ो अति ?
को साहस को सिंधु कौन रज-लाज धरे मति ॥
को चकवा को सुखद, बसै को सकल सुमन महि ?
अष्टसिद्धि नव-निद्धि देत, माँगे को सो कहि ॥
जग बूझत उत्तर देत इमि, कवि, भूषन, कवि-कुल-सचिव ।
'दच्छिन नरेस सरजा सुभट साहिनंद मकरंद सिव' ॥९॥

आजु यहि समै महाराज सिवराज तुही,
जगदेव जनक जजाति अम्बरीक सो ।
भूषन भनत तेरे दान-जल-जलधि मैं,
गुनिन को दारिद गयो बहि खरीक सो ॥
चंदकर किंजलक चाँदनी पराग, उड़
वृन्द मकरन्द बुन्द पुंज के सरीर सो ।
कंद सम कयलास नाक-गंग नाल तेरे
जस पुण्डरीक की आकास चंचरीक सो ॥१०॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

देव

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

अध्यात्म-चिन्तन

श्री विधि बानी जु वेद बखानी, पुराननि जो सिव संग भवानी ।
जो कमला कमलापति के संग, देव, सचीस सची सुखदानी ।।
दीपसिखा वृज मंदिर सुन्दरि, जागति ज्योति चहूँ जुग जानी ।
सिद्धि की साधिका साधु समाधिका, सो बृजराज की राधिका रानी ।।१।।

पाँयनि नूपर मंजु बजैं, कटि-किंकिन में धुनि की मधुराई ।
साँवरे अंग लसै पट-पीत हिये हुलसै बनमाल सुहाई ।।
माथे किरीट, बड़ें द्रिग चंचल, मंद हंसी मुख-चंद-जुन्हाई ।
जै जग-मंदिर दीपक सुन्दर श्री ब्रज दूलह 'देव' सहाई ।।२।।

एक होत इन्द्र, एक सूरज औ चंद्र, एक,
होत है कुवेर कछु बेर देत नाया के ।
अकुल कुलीन होत, पाँमर प्रवीन होत,
दीन होत चक्कवै चलत छत्र छाया के ।
संपति-समृद्धि, सिद्धि, निद्धि, बुद्धि-वृद्धि सब,
भक्ति-मुक्ति पौरि पर परी प्रभु जाया के ।
एक ही कृपा-कटाछ कोटि यच्छ रच्छ नर,
पावै घरबार दरबार देव माया के ।।३।।

कथा मैं न, कंथा मैं न, तीरथ के पंथा मैं न,
पोथी मैं न पाथ मैं, न साथ की बसीति मैं ।
जटा मैं न, मुंडन न, तिलक त्रिपुंडन न
नदी कूप-कुंडन अन्हान दान-रीति मैं ।
पीठ-मठ-मंडल न, कुंडल कमंडल न,
माला-दंड मैं न देव देहरे की भीति मैं ।
आपु ही अपार पारावार प्रभु पूरि रह्यो
पाइए प्रगट परमेसुर प्रतीति मैं ।।४।।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

बटु ह्वै नटु ह्वै कै रिझावै जिन्हें हरि 'देव' करैं बतियाँ तुतरी ।
बिधि-ईस के सीस बसी बहु बारन, कोटि कला रस-सिंधु तरी ।।
जगमोहिनि राधे ! तू पांइ परौं वृषभान के भौन अबै उतरी ।
गुन बांधे नचावति तीनहुँ लोक लिये कर ज्यों कर की पुतरी ।।५।।

कोऊ कहो कुलटा कुलीन अकुलीन कहौ,
कोऊ कहौ रंकिनि कलंकिनि कुनारी हौं ।
कैसो परलोक, नरलोक बर लोकन में,
लीन्हों मैं अलीक लोक-लीकन ते न्यारी हों ।
तन जाहि, मन जाहि, 'देव' गुरुजन जाहि,
जीव किन जाहि टेक टरति न टारी हौं ।
वृंदाबनवारी बनवारी की मुकुट वारी,
पीत पटवारी वहि मूरति पै वारी हौं ।।६।।

मोही मैं छिपे ही मोहि छ्वावत न छाँहौं तातै,
छाहँ भए डोलत इतै पै मोहि छरिहौ ।
मच्छ सुनि कच्छप बराह नरसिंह सुनि,
बावन परसुराम रावन के अरि हौ ।
देव बलदेव देव दानव न पावैं भेव,
को हौ जू कहौ जू जौ हिये की पीर हरिहौ ।
कहत पुकारे प्रभु करुना-निधान कान्ह,
कान मूँदि बौ ह्वै कलंकी काहि करिहौ ।।७।।

विहार एवं ऋतुवर्णन

सुनि कै धुनि चातक-मोरनि की,
चहुँ ओरनि कोकिल-कूकनि सों ।
अनुराग-भरे हरि बागनि में,
सखि ! रागत राग अचूकनि सों ।।
कवि 'देव' घटा जु नयी उनयी,
नव भूमि भयी दल दूकनि सों ।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

रँग-राती हरी हहराती लता,
झुकि जाती समीर की झूकनि सों ।। १ ।।

स्याम-सरूप घटा ज्यों अनूपम,
नील-पटा तन राधे के झूमैं ।
राधे के अंग के रंग रग्यो,
पट बीजुरी ज्यों घन-से तन-भू मैं ।।
हैं प्रतिमूरति दोऊ दुहूँ की,
बिधो प्रतिबिंब वही घट दू मैं ।
एकहि देव दुदेह दुदेहरे,
देव दुवा यक देह दुहू मैं ।। २ ।।

आस-पास पूरन प्रगास के पगार सूझैं,
बनन अगार डीठि गली औनि वरतें ।
पारावार पारद अपार दस्यौ दिसि बूड़ीं,
बिधु ब्रहमंड उतरात बिधि-बरतें ।।
सरद-जुन्हाई जन्हु-जायी धार सहस सु,
धायी सोभा-सिंधुनभ सुभ्र गिरि-बरतें ।
उमड़ो परतु जोति-मंडल अखड सुधा,
मंडल मही में इन्दु-मंडल-विवरतें ।।२।।

संजोगिन की तू हरै उर-पीर,
बिजोगिन के सँचरै उर पीर ।
कलीन खिलाइ करै मधु-पान,
गलीन भरै मधुपान की भीर ।।
नचै मिल बेलि-बधूनि अचै रसु,
'देव' नचावति आधि अधीर ।
तिहूँ गुन देखियै दोख-भरो,
अरे सीतल मंद सुगन्ध समीर ।। ४ ।।

डार द्रुम पालन, बिछौना नव पल्लव के,
सुमन झगूला सोहै तन छवि भारी दे ।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

पवन झुलावै, केकी-कीर बतरावै देव,
कोकिल हलावै हुलसावै कर तारी दे ।।
पूरित पराग सों उतारो करै राई-नोन,
कंज-कली नायिका, लतनि पुचकारी दे ।
मदन-महीप जू को बालक बसंत, ताहि,
प्रातहि जगावत गुलाब चटकारी ।।६।।

उद्धव-प्रसंग

ऊधौ आये, ऊधौ आये, स्याम को संदेसो लाये,
सुनि गोप-गोप धाये, धीर न धरत हैं ।
पौरी लगि दौरीं उठि, भौरी लौं भ्रमति मति,
गनति न काहू, गुरु लोग न डरत हैं ।
ह्वै गयीं बिकल बाल बालम बियोग भरी,
जोग को सुनत बात गात यों जरत हैं ।
भारी भये भूखन, संभारे न परत अंग,
आगे को धरत पग पाछे को परत हैं । ।।१।।

को हमको तुम-से तपसी बिनु, जोग सिखावन आइ है ऊधो !
पै अब एही कहो, उनको पिछली सुधि आवति है कबहूँ धों ।।
एक भली भयी, भूप भये; जिन्हैं भूलि गये दधि माखन दूधौ ।
कूबरि-सी अति सूधी बधू बरु पायो भलो घनश्याम-सो सूधो ।।२।।

जो न जी में प्रेम तब कीजै व्रत-नेम, जब
कंज-मुख भूलै तब संजमु बिसेखियै ।
आस नहीं पी की तब आसनहीं बाँधियत,
सासन कै सांसन को मूंदि पति पेखियै ।
नख ते सिखा लों सब स्याममयी बाम भयीं,
बाहर लौं भीतर न दूजौ 'देव' देखियै ।
जोग करि मिलैं, जो वियोग होय बालम, जु,
ह्यां न हरि होयँ तब ध्यान धरि देखियें ।।३।।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

जोगहिं सिखैहैं ऊधो जो गहि के हाथ हम,
सो न मन हाथ, ब्रज-नाथ साथ कै चुकीं ।।
'देव' पंच-सायक नचाय खेलीं पंचन में,
पंच हू करनि पंचामृत सो अचै चुकीं ।।
कुलबधू ह्वै कै हाय ! कुलटा कहायीं, अरु
गोकुल में कुल में कलंक सिर लै चुकीं ।।
चित होत हित, न हमारे नित ओर सो तो
वाहि चित चोरहिं चितौत चित दै चुकीं ।।४।।

रावरो रूप रह्यो भरि नैनन, बैननि के रस सों स्रुति सनो ।
गात मैं देखत गात तुम्हारेई, बात तुम्हारिये बात बखानो ।।
ऊधो हहा हरि सो कहियो, तुम हौ न इहाँ यह हौं नहिं मानो ।
या तन से बिछुरे तो कहा, मन ते अनते जु बसौ तब जानो ।।५।।

कुबिजा कितेब जा के रहे आपु"देव",
अंस अवतारी अब तारी जिन गनिका ।
आरति न राखत निवारत नरक ही ते,
तारत तिलोक चरनोदक की कनिका ।।
उनके गुनानुवाद तुमसों सुने हैं ऊधो,
गोपिन को सूधो मत प्रेम की जवनिका ।
कुंजन मैं टेरिहैं जु स्याम को सुमिरि नीके,
हाथ लै न फेरिहैं सुमिरिनी के मनिका ।।६।।

अंजन सों रंजित निरंजनहिं चानै कहा,
फीको लगै फूल रस चाखे हौ जु बौड़ी को ।
तूरज बजाय सूर सूरज को बेधि जाय,
ताहिं कहा सबद सुनावत सो डोड़ी को ।
ऊधो पूरे पारखी हौ परखे बनाय "देव",
बार ही पै बोरौ पैरवैया धार औड़ी को ।
मनु मनिका दै हरि हीरा गाँठि बाँध्यो हम,
तिन्हैं तुम बनिज बताबत हौ कौड़ी को ।।७।।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

विरह-वर्णन

बरुनि बघंबर औ गूंतरी पलक दोऊ,
कोये राते बसन भगोहैं भेख रखियाँ ।
बूड़ी जल ही में दिन-जामिनी रहति, भौंहें,
धूम सिर छायो, बिरहानल बिलखियाँ ।
आँसू ज्यों फटिक-माल, लाल डोरे सेल्ही सजि,
भयी हैं अकेली तजि चेली संग-सखियाँ ।
दीजिये दरस 'देव' लीजिये संयोगिनि कै,
जोगिनि ह्वै बैठी वा बिजोगिनि की अँखियाँ ।।१

कैधो हमारियै बार बड़ो भयो,
कै रवि को रथ ठौर ठयो है ।
भोर ते भान की ओर चितौति,
घरी-पल हू गनतै न गयो है ।।
आवत छोर नहीं छिन को,
दिन को नहि तीसरो जाम छयो है ।
पाइयै कैसेक साँझ तुरंतहि,
देखु री ! द्यौस दुरंत भयो है ।।२

हास-हुलास हिये के लिये, सु
निरास उसास हमें दिये दोये ।
'देव' लुन्यो सुख-रुखन को बिन
या मन में बिष-बीजन बोये ।।
प्यास निगोड़ी रही गड़ि नैनन,
उज्जल सो निचुरे चित कोये ।
अपनो जागिबो सौंपि हमैं, अब
नींद हमारीयौ ले सुख सोये ।।३

पावस प्रथम प्रिय ऐबै की अवधि सो जो
आवत ही आवै तो बुलाऊँ अति आदरनि

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

नाहीं तो न ह्वील ह्वोन दे री ! झील झीबरनि,
ग्रीषमहि राखु खाली भाखु खल खादरनि ॥
बीजुरी बरजि, कहु मेघ न गरजि, इन,
गाज-मारे मोर-मुख मोरि री ! निरादरनि ॥
कंठ रोकि कोकिलनि, चोंच नोचि चातकनि,
दूरि करि दादुर, बिदा करि री ! बादरनि ॥४॥

आयी ऋतु पावस न आये प्रान-प्यारे या तें,
मेघनि बरजि, आली ! गरज सुनावै न ।
दादुरनि कहि, बकि-बकि जनि फोरैं कान,
पिकनि हटकि, हठि सबद सुनावैं न ॥
बिरह-बिथा में हौं तो व्याकुल परी हौं, 'देव'
जुगनू चमकि चित चिनगी लगावैं ना ॥
चातक न गावैं, मोर सोर न मचावैं, घन,
घुमड़ि न आवैं, जौ लौं कान्ह घर आवैं न ॥५॥

हौं ही हौं और, कि ये सब और, कि
डोलत आजु को औरै समीरौ ॥
या तें इन्हैं तन-ताप सिरातु, पै,
मेरे हिये न थिरातु है धीरौ ॥
ये कहैं कोकिल-कूक भली मोंहि,
कान सुने जम आवत नीरौ ।
लोग ससी को सराहत री ! सब,
तौहू लगै सखि ! साँचेहु सीरौ ? ६

रैन सोई दिन, इंदु दिनेस,
जुन्हाई हैं थाम, घनो बिख घाई ।
फूलन-सेज सुगंध दुकूलन,
सूल उठै तन, तूल ज्यों तायी ॥
बाहर भीतर भ्वैहरेऊ न,
रह्यो परै, 'देव' सु पूछन आयी ।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

हौं ही भुलानी कि भूले सबै,
कहैं ग्रीखम सों सरदागम माई ॥७॥
कंत बिन बासर बसंत लागे अंतक से,
तीर-ऐसे त्रिबिध समीर लागे लहकन ।
सान-धरे सार-से चंदन घनसार लागे,
खेद लागे खरे मृगभेद लागे महकन ।
फाँसी-से फुलेल लागे गाँसी-से गुलाब अरु,
गाज अरगजा लागे चोवा लागे चहकन ।
अंग-अंग आगि ऐसे केसरि के नीर लागे,
चीर लागे जरन, अबीर लागे दहकन ॥८॥

आत्मदर्शन

हाय दई यहि काल के ख्याल में फूल-से फूलि सबै कुम्हिलाने ।
देव अदेव बली बल हीन चले गये मोह की हीस हिलाने ॥
या जग वीच बचै नहिं मीचु पै, जे उपजे ते मही मैं मिलाने ।
रूप, कुरूप, गुनी, निगुनी जे जहाँ जनमें, ते तहाँई बिलाने ॥१॥

को तप कै सुरराज भयो, जमराज को बन्धन कौने खुलायौ ।
मेरु मही मैं सही करिकैं गथ ढेरु कुबेर को कौने तुलायो ॥
पाप न पुन्य न नर्क न सर्ग मरो सुमरो फिरि कौने दुलायौ ।
गूढ़ ही वेद पुराननि बाँचि लबारनि लोग भले भुरकायो ॥२॥

जाके न काम न क्रोध न विरोध न लोभ छुवै नहिं छोभ को छाहौ ।
मोह न जाहि रहै जग बाहिर, मोल जवाहिर तौ अति चाहौं ॥
बानी पुनीत ज्यौं देव धुनी रस आरद सारद के गन गाहौं ।
सील ससी, सबिता छबिता, कविताहि रचे, कबि ताहि सराहौं ॥३॥

बाग्यो बन्यो जरतार को तामहिं ओस को हार तन्यो मकरी ने ।
पानी मैं पाहन पोत चल्यो चढ़ि, कागद छतुरी सिर दीने ॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

काँख में बाँधिकै पाँख पतंग के देव सुसंग पतंग को लीने।
मोम के मंदिर माखन को मुनि बैठ्यो हुतासन आसन कीने ।। ४

आवत आयु को द्योस अथौत, गए रवि घों अँधियारिए ऐहै।
दाम खरे दै खरीदु खरो गुरु, मोह की गोनी न फेरि बिकैहै।
'देव' छितीस की छाप बिना, जमराज जगाती महादुख दैहै।
जात उठी पुर देह की पैंठ, अरे बनियै नहि रैहै ।। ५

काम पर्‍यो दुलही अरु दूलह, चाकर यार ते द्वार ही छूटे,
माया के बाजने बाजि गए, परभात ही भातखवा उठि बूटे।
आतसबाजी गई छिन में छुटि, देखि अजौं उठि के अँखि फूटे,
'देव' दिखैयन दाग बने रहे, बाग बने तो बरोठेई लूटे ।। ६

स्फुट

अनुराग के रंगनि रूप तरंगनि, अंगनि ओप मनो उफनी।
''कवि देव'' हिये सियरानो सबै, सियरानी को देखि सुहाग सनी ।।
बर धामन बाम चढ़ी बरसै, मुसुकानि सुधा घनसार घनी।
सखियानि के आनन इंदुन ते, अँखियानि की बंदनवार तनी ।। १

फूले अनारनि पांडर डारनि, देखत ''देव'' महा डरु माचै।
माधुरी झौरनि अंब के बौरनि भौरनि के गन मंत्र से बाँचै ।।
लागि उड़ै बिरहागिनि की कचनारनि बीच अचानक आँचै।
साँचे हुँकारि पुकारि पिकी कहै नाचे बनैगी बसंत की पाँचै ।। २

पूतना को पय पान करो मनु, पूत नाते बिसवास वगाहत।
''देव'' कहा कहौं मातु पिता हित बन्धुन सों हितु नीके निबाहत ।।
कारे हौ कान्ह निकारे हौ कीलि, रहे गुन लीलि पै औगुन थाहत।
पन्नग की मनि कीन्हें तुम्हैं, तुम पन्नग की किचुली कियो चाहत ।। ३

जीभ कुजाति न नेकु लजाति गनै कुल जाति न बात वह्यो करे।
'देव' नयो हिय नेह लगाय बिदेह कि आँचन देह दह्यो करे।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

जीव अजान न जानत जान जी मेन अयान के ध्यान रह्यो कर।
काहे को मेरो कहावत मेरो जुपै मन मेरो न मेरो कह्यो करे।।४।।

साँसन ही सों समीर गयो अरु आँसुन ही सब नीर गयो ढरि।
तेजु गयो गुन लै अपनो अरु भूमि गई तनु की तनुता करि।
'देव' जियै मिलिबे ही कि आस कि आसहू पास अकास रह्यो भरि।
जा दिन ते मुख फेरि हरे हँसि हेरि हियो जु लियो हरिजू हरि।।५।।

चित दै चितवौं जित ओर सखी नित नंदकिशोर की ओप ठयी।
दसहूँ दिसि दूसरो देखति ना, छवि मोहन की छिति माँह छयी।
कवि 'देव' कहाँ लौं कछू कहियै, प्रतिमूरति हौं उनही की भयी।
ब्रजवासिन को ब्रज जानि परे न भयो ब्रज री! ब्रजराजमयी।।६।।

राधे कही है कि ते छमियौ ब्रजनाथ! जिते अपराध किये मैं।
कानन तानन भूतल ना खिन आँखिन रूप अनूप पिये मैं।
ओछे हिये अपने दिन राति दयानिधि देव बसाय लिये मैं।
हौं हूँ असाधु, बसी न कहूँ पल आधु तिहारे अगाधु हिये मैं।।७।।

धार मैं धाइ धसी निरधार ह्वै, जाय फँसी उकसीं न अबेरी।
री अँगराइ गिरीं गहरी गहि फेरे फिरीं न घिरी नहिं घेरी।
'देव' कछू अपनो बस ना रसु-लालच लाल चितै भई चेरी।
वेगही बूड़ि गईं पँखियाँ मधु की मखियाँ भई मेरी।।८।।

राधिका कान्ह को ध्यान करै तव कान्ह ह्वै राधिका के गुन गावै।
त्यौं अँसुवा बरसैं बरसाने को पाती लिखै लिखि राधे को ध्यावै।
'राधे ह्वै जाय घरीक मैं 'देव' सु प्रेम की पाती लै छाती लगावै।
आपुने आपुही मैं उरझै सुरझै बिरुझै समुझै समुझावै।।९।।

औचक अगाध सिंधु स्याही को उमड़ि आयो,
तामैं तीनौ लोक बूड़ि गए यक संग में।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

कारे कारे आखर लिखे जु कारे कागर,
सुन्यारे करि बाँचैं कौन जाँचैं चित भंग मैं ।
आँखिन मैं तिमिर अमावस की रैनि जिमि,
जंबुरस-बुंद जमुना-जल-तरंग मैं ।
यों ही मन मेरो मेरे काम को न रह्यो माई,
स्याम रंग ह्वै करि समान्यो स्यामरंग मैं ।।१०।।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

पद्माकर

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

गंगा लहरी

कूरम पै कोल कोल हू पै सेष-कुंडली है,
कुंडली पै फली फैल सुफन हजार की ।
कहै "पदमाकर" त्यों फन पै फबी है भूमि,
भूमि पै भबी है थिति रजत-पहार की ।।
रजत-पहार पर संभु सुनरायक हैं,
संभु पर ज्योति जटाजूट है अपार की ।
संभु-जटाजूटन पै चंद की छुटी है छटा,
चंद की छटान पै छटा है गंगा-धार की ।।१।।

जैसे तै न मोसों कहूँ नेक हूँ डरात हुतो,
तैसों अब तोसों हौं हूँ नेक हू डरिहौं ।
कहै "पदमाकर" प्रचंड जो परैगो तौ,
उमंडि कर तो सों भुजदंड ठोंकि लरिहौं ।।
चलो-चलु चलो-चलु बिचलु न बीच ही तें,
कीच-बीच नीच तो कुटुम्ब को कचरिहौं ।
एरे दगादार मेरे पातक अपार तोहिं,
गंगा के कछार में पछारि छारि करिहौं ।।२।।

बिधि के कमंडल की सिद्धि है प्रसिद्धि यही,
हरि-पद पंकज-प्रताप की लहर है ।
कहै "पदमाकर" गिरीस-सीस-मंडल के,
मुंडन की माल ततकाल अघहर है ।।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

भूपति भगीरथ के रथ की सुपुन्य-पथ,
जह्नु-जप-जोग-फल फैल की फहर है।
छेम की छहर गंगा रावरी लहर,
कलिकाल को कहर जमजाल को जहर है ॥३॥

लोचन असम अंग भसम चिता को लाइ,
तीनों लोक नायक सो कैसे कै ठहरतो।
कहै "पदमाकर" बिलोकि इमि ढंग जाके,
वेद हूँ पुरान गान कैसे अनुसरतो ॥
बाँधे जटाजूट बैठि परवत-कूल माँहि,
महाकालकूट कहौ कैसे कै टँहरतो।
पीवै नित भंगै रहै प्रेतन कै संगै, ऐसे,
पूछतो को नंगै जो न गंगै सीस धरतो ॥४॥

रेनुका की रासन में कींच-कुस-कासन में,
निकट निवासन में आसन लदाऊ के।
कहै "पदमाकर" तहाँई मंजु सूरन में,
धौरी-धौरी धूरन में पूरन प्रभाऊ के।
बारन मे पारन में देखहु दरारन में,
नाचति हैं मुकुति अधीन सब काऊ के।
कूल औ कछारन में गंगाजल-धारन में,
झमॅरा मँझारन में झारन में झाऊ के ॥५॥

प्रबोध

देव नर किन्नर कितेक गुन गावत, प,
पावत न पार जा अनंत गुनपूरे को।
कहै "पदमाकर" सुगाल के बजावत ही,
काज करि देत जन-जाचक जरूरे की।
चंद की छटान-जुत पन्नग-फटान-जुत,
मुकूट बिराजै जटाजूटन के जूरे को।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

देखौं त्रिपुरारि की उदारता अपार जहाँ,
पैये फल चारि फूल एक दै धतूरे को ॥१॥

या जग जानकी-जीवन को जस क्यों इक आनन गाइ अघैये ।
त्यों "पदमाकर" मारग हैं बहु, द्वै पद पाई किते-किते जैये ।
नाम अनंत अनंत कहे, ते कहे न परें करि काहि जतैये ।
राम की रूरी कथा सुनिये को करोरन कान कहो कहाँ पैये ॥२॥

द्योस को रात करै जो चहै, अरु रातिहुँ को करि द्यौंस दिखावै ।
त्यों "पदमाकर" सीलको सिंधु, पिलीलिका कोवन फील फिरावै ।
यों समरत्थ तनै दसरत्थ को सोई करै जो कछु मन भावै ।
चहैं सुमेरु को राई करै, रचि राई को चाहै सुमेरु बनावै ॥३॥

आस-बस बास-बस विविध बिलास-बस,
बासना बड़ी को सुर-त्रासन-लौं हरिहौ ।
कहै "पदमाकर" त्यों अधम अजामिल-लौं,
औगुन हमारे गुन मानि हौ तौ धरिहौ ॥
गुह पर गीध पर गनिका गयंद पर,
जाही ढार ढरे तब ताही ढार ढरि हौ ।
ह्वै रहौं तिहारे चरनन ही को चेरो कहूँ,
ऐसो मन मेरो कब मेरे राम करिहौं ॥५॥

मानुष को तन पाय अन्हाय अवाय पियो किन गंग को पानी ।
भाषत क्यों न भयो "पदमाकर" राम ही राम रसायन बानी ।
सारंगपानि के पायन सों, तजि कै मन को कत होत गुमानी ।
मोटी मुचंड महामतिवारिनि, मूड़ पै मीच फिरै मड़रानी ॥५॥

स्फुट

जाहिरै जागति सी जमुना जब बूड़ै बहै उमहै वह बेनी ।
त्यों 'पदमाकर' हीर के हारिन गंग तरंगन कों सुखदेनी ।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

पायन के रंग सों रँगि जाति सी भाँति सरस्वति सेनी ।
पैरै जहाँई जहाँ वह बाल तहाँ-तहाँ ताल मैं होति त्रिबेनी ।

खेद को भेद न कोऊ कहै व्रत आँखिन हूँ अँसुवान को धारो ।
त्यों 'पदमाकर' देखती हौ तन कौ तन कंप न जात सँभारो ॥
ह्वै धौं कहा को कहा गयो यों दिन द्वैक ही तें कछु ख्याल हमारो ।
कान में बसी बाँसुरी की ध्वनि प्रानन में बस्यो बाँसुरी वारो ॥२॥

पीतम के संग ही उमगि उड़ि जैबे कों,
न एती अंग-अंगानि परंद पखियाँ दई ।
कहै 'पद्माकर' जे आरती उतारैं चौंर ढारैं,
श्रम हारैं पै न ऐसी सखियाँ दई ।
देखि दृग द्वै ही सों न नेक हूँ अघैये,
इन ऐसे झुकाझुक में झपाक झखियाँ दई ।
कीजै कहा राम स्याम-आनन बिलोकिबा कों,
बिरचि बिरंचि न अनंत अँखियाँ दई ।

साँझ के सलोने घन सबुज सुरंगन सों,
कैसे कै अनंग अंग अंगनि सताउतौ ।
कहै 'पदमाकर' झकोर झिल्ली सोरन को,
मोरन को महत न कोऊ मन ल्याउतो ।
काहू बिरही की कही मानि लेतौ जो पै दई,
जग में दई तौ दयासागर कहाउतौ ।
पावस बनायो तौ न बिरह बनाउतो,
जौ बिरह बनायो तौ न पावस बनाउतौ ॥४॥

राधिका सों कहि आई जु तू सखि साँवरे की मृदु मूरति जैसी ।
ता छिन ते 'पद्माकर ताहि सुहात कछू न बिसूरति वैसी ।
मानहु नीर भरी घन की घटा आँखिन में रही आनि उनैसी ।
ऐसी भई सुनि कान्ह कथा जु बिलोकहिगी तब होइगी कैसी ।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

कूलन में केलि में कछारन में कुंजन में,
क्यारिन में कलित कलीन किलंकत है।
कहै 'पद्माकर' परागन में पौन हूँ में,
पानन में पिक में पलासन पगंत है।
द्वार में दिसान में दुनी में देस देसन में,
देखौ दीप दीपन में दीपत दिगंत है।
वीथिन में ब्रज में नवेलिन में बेलिन में,
बनन में बागन में बगरो बसंत हैं।। ६ ।।

औरे भाँति कुंजन में गुंजरत भौंर भीर,
और डौर बौरन के ह्वै गये।
कहै 'पद्माकर' सु औरे भाँति गलियान,
छलिया छैल छबीले औरे छबि छ्वै गये।
ओरे भांति बिहंग समाज में अवाज होति,
ऐसे ऋतुराज के न आन दिन द्वै गये।
औरे रस औरे रीति औरै राग औरै रंग,
औरै तन औरै मन औरै बन ह्वै गये।। ७ ।।

पात बिन कीन्हे ऐसी भाँति गन बेलिन के,
परत न चीन्हे जे ये लरजत लुंज हैं।
कहैं 'पद्माकर' बिसासी या बसंत के,
सु ऐसे उतपात गात गोपिन के भुंज हैं।
ऊधो यह सूधो सो सँदेसो कहि दीजो भले
हरि सों, हमारे ह्याँ न फूले बन कुंज हैं।
किंसुक गुलाब कचनार औ अनारन की,
डारन पै डोलत अगारन के पुंज हैं।। ८ ।।

फाग के भीर अबीरन में गहि गोविंद लै गई भीतर गोरी।
भाई करी मन की'पद्माकर' ऊपर नाइ अबीर की झोरी।
छीन पितंबर कंमर तें सु बिदा दई मीड़ि कपोलन रोरी।
नैन नचाइ कही मुसकाइ लला फिरि आइयौ खेलन होरी ।। ९ ।।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

खेलिये फाग निसंक ह्वै आज मयंकमुखी कहैं भाग हमारो।
लेहू गुलाल दूहूँ कर में पिचकारिन रंग हिये मँह मारो।
भावै तुमैं सो करो मोहि लाल पै पाँय परौं जि घूँघट टारो।
वीर की सौं हम देखिहैं कैसे अबीर तौ आँखैं बचाय कै डारो ॥१०॥

एकै संग धाये नंदलाल औ गुलाल दोऊ,
दृगनि गये जु भरि आनँद मढ़ै नहीं।
धोइ-धोइ हारी पदमाकर' तिहारी सौंह,
अब तौ उपाय एकौ चित्त पै चढ़ै नहीं।
कैसी करौं, कहाँ जाउँ, कासो कहौं, कौन,
सुनै, कोऊ तौ निकासौ जासौं दरद बढ़ै नहीं।
ए री मेरी बीर जैसे तैसे इन आँखिन तें,
कढ़िगो अबीर पै अहीर तो कढ़ै नहीं ॥ ११ ॥

धारत ही बन्यो ये ही मतो गुरु-लोगन कों डर डारत ही बन्यो।
हारति ही बन्यो हेरि हियो, 'पद्माकर' प्रेम पसारत ही बन्यो।
वारत ही बन्य- काज सबै, अब यों मुखचन्द उधारत ही बन्यो।
टारत ही बन्यो घूँघट को पट, नन्दकुमार निहारत ही बन्यो ॥१२॥

कैधौं रूप रास में सिंगार रस अंकुरित,
कंकुरित कैधौं तम जड़ित जुन्हाई में।
कहै 'पद्माकर' किधौं यों काम कारीगर,
नुकता दियो है हेम करद सुहाई में।
कैधौं अरविन्द में मलिंदसुत सोयो आनि,
कैधों तिल सोहत कपोल की लुनाई में।
कधों पर्‌यो इंदु में कलिन्दी जल विन्दु कैधौं,
गरक गुबिंद भयो गोरी की गुराई में ॥१३॥

चन्दकला चुनि चूनरी चारु, दई पहिराइ लगाइ सु रोरी।
वदी विसाखा रची 'पद्माकर', अंजन आँजि समाज करोरी।
लागी जबै ललिता पहिरावन, स्याम कौं कंचुकी केसरि-बोरी।
हेरि हरें मुसिकाइ रहीं, अँचरा मुख दै वृषभान किसोरी ॥ १४ ॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

घर ना सुहात न सुहात बन बाहर हूँ,
बाग न सुहात जे खुसाल खुसबोही सों।
कहै 'पद्माकर' घतेरे धन धाम त्यों ही,
चन्द न सुहात चाँदनी हूँ जोग जोही सों।
साँझ ना सुहात ना सुहात दिन माँझ कछू,
व्यापी यह बात सो बखानत हौं तो ही सों।
राति ना सुहात ना सुहात परभात आली,
जब मन लागि जात काहू निरमोही सों ॥१५॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

घनानंद

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

प्रशस्ति

नेही महा ब्रजभाषा-प्रबीन औ सुन्दरतानि के भेद कों जानै ।
जोग-वियोग की रीति मैं कोविद, भावना-भेद-स्वरूप कों ठानै ।।
चाह के रंग मैं भीज्यो हियो, बिछुरें मिले प्रीतम सांति न मानै ।
भाषा-प्रबीन, सुछंद सदा रहै सो घन जी के कवित्त बखानै ।।१

प्रेम सदा अति ऊँचो लहै सु कहै इहि भाँति की बात छकी ।
सुनि कै सब के मन लालच दौरै, पै बौरै लखैं सब बुद्धि चकी ।।
जग की कविताई के घोखें रहै, ह्याँ प्रबीनन की मति जाति जकी ।
समझै कविता घनआनन्द की हिय-आँखिन नेह की पीर तकी ।।२

स्फुट

हीन भएँ जल मीन अधीन कहा कछु मो अकुलानि समानै ।
नीर सनेही को लाय कलंक निरास ह्वै कायर त्यागत प्रानै ।।
प्रीति की रीति सु क्यों समुझै जड़, मीत के पानि परे कों प्रमानै ।
या मन की जु दशा घन आनंद जीव की जीवनि जान ही जानै ।।३

पहले अपनाय सुजान सनेह सों क्यों फिर नेह कै तोरियै ज ।
घन आनन्द आपने चातिक कों गुन-बाँधिकैं मोह न छोरियै जू ।।
निरधार अधार दै धार-मझार दई गहि बाँह न बोरियै जू ।
रस प्यास कै ज्याय बढ़ाय कै आस बिसास मैं यौं बिष घोरियै जू ।।४

भोर तें साँझ लौं कानन-ओर निहारति बावरी नेकु न हारति ।
साँझ तें भोर लौं तारनि ताकिबो तारनि सों ईकतार न टारति ।।
जो कहूँ भावतो दीठि परै घन आनन्द आँसुनि औसर गारति ।
मोहन-सोहन जोहन ही लगियै रहै आँखिन के उर आरति ।।५

रावरे रूप की रीति अनूप नयो नयो लागत ज्यौं ज्यौं निहारियै ।
त्यौं इन आँखिन बानि अनोखी अघानि कहूँ नहिं आन तिहारियै ।।
एक ही जीव हुतौ सु तौ वार्‌यौ सुजान सकोच औ सोच सहारियै ।
रोकी रहै न दहै घन आनन्द बावरी रीझ के हाथनि हारियै ।।६

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

आसहि अकास-मधि अवधि-गुनै बढ़ाय,
चोपनि चढ़ाय दीनौ कीनौ खेल सो यहै ।
निपट कठोर ए हो ऐंचत न आप-ओर,
लाड़िले सुजान सों दुहेली दसा को कहै ।।
अचिरजमई मोहिं भई घन आनन्द यौं,
हाथ साथ लाग्यौ पै समीप न कहूँ लहै ।
बिरह-समीर की झकोरनि अधीर,
नेह-नीर भीज्यौ जीव तऊ गुड़ी लौं उड़्यौ रहै ।।७

घनआनन्द जीवन मूल सुजान की कौंधन हूँ न कहूँ दरसैं ।
सु न जानियै धौं कित छाय रहे इत चातक-प्रान तपे तरसैं ।।
बिन पावस तौ इन थ्यावस हो न सु क्यौं करि भो अब सो परसैं ।
बदरा बरसै रितु मैं घिरि कै नित ही अँखियाँ उघरी बरसैं ।।८

अंतर हौ किधौं अंत रहौ, दृग फारि फिरौं कि अभागिनभीरौं ।
आगि जरौं अकि पानी परौं अब कैसी करौं हिय का विधि धीरौं ।।
जो घनआनन्द ऐसी रुची, तौ कहा बस है अहो प्राननि पीरौं ।
पाऊँ कहाँ हरि हाय तुम्हें, धरती मैं धसौं कि आकसहिं चीरौं ।।९

प्रान-पखेरू परे तरफैं लखि रूप-चुगो जु फँदे गुन-गाथन ।
क्यों हतियै हित पालि सुजान दया बिन ब्याध-बियोग के हाथन ।।
सालत बान समाज हियैं सु लहे घनआनन्द जो सुख साथन ।
देहु दिखाय दई मुख चन्द लग्यौ अब औधि-दिवाकर आथन ।।१०

रूप-चमूप सज्यौ दल देखि भज्यौ तजि देसहि धीर मवासी ।
नैन मिलें उर के पुर पैठत लाज लुटी न छुटी तिनका सी ।।
प्रेम दुहाई फिरी घनआनंद बाँधि लिए कुल-नेम गढ़ासी ।
रीझ सुजान सची पटरानी बची बुधि बावरी ह्वै करि दासी ।।११

लाखनि भाँति भरे अभिलाषनि कै पल पाँवड़े पंथ निहारैं ।
लाड़ली आवनि लालसा लागि न लागत हैं मन मैं पन धारैं ।।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

यों रस भीजे रहैं घनआनंद, रीझे सुजान सुरूप तिहारें।
चायनि बावरे नैन कबै अँसुवान सों रावरे पाँय पखारैं ।।१२

सोभा को निकेत नेत भाखत निगम जाहि,
ताके सुख हेत मीनकेत रसखेत है ।
सकल बननि सिर मौर ठौर ठौर जाकी,
राखैं चख-ठौर और थाकैं चित-चेत है।
राधा-पद-अँकित बिराजि रही मही महा,
श्रीपति निवास हू तें दीपति उपेत है।
मधुर बिनोद जहाँ आनन्द-पयोद-झर,
रसिक पपीहा प्रान प्यासनि समेत है ।।१३

कौन की सुजस-जोन्ह अमल अपूरब को,
जग मैं उदोत देखियत दिन रैन है।
जाकी जोति जागै रस पागै हो चकोर-नेन,
बुध कबि मित्रन को पोखै मन चैन है ।।
नेह-निधि बाढ्यौ घनआनंद गुनानि सुनि,
अचिरज-ऐन सो निहारों मन मैं न है।
बिरह बिडारि औ बिदारि दुख-तम कब,
सींचैगो स्रवन कहि सुधासने बैन है ।।१४

इत बाँट परी सुधि, रावरे भूलनि, कैसे उराहनो दीजियै जू ।
अब तो सब सीस चढ़ाय लई जु कछू मन भाई सु कीजियै जू ।।
घनआनंद जीवन-प्रान सुजान ! तिहारियै बातनि जीजियै जू ।
नित नीके रहौ-तुम्हैं चाड़ कहा पै असीस हमारियौ लीजियै जू ।।१५

जेतो घट सोधौं पै न पाऊँ कहाँ आहि सो धौं,
को धौं जीव जारै अटपटी गति दाह की।
धूम को न धरैं, गात सीरो परै ज्यौं ज्यौं बरै,
ढरै नैन नीर बीर ! हरै मति आह की ।।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

जतन बुझैं हैं सब जाकी झर आगे अब,
कबहूँ न दबै भरी भभक उमाह की ।
जब तें निहारे घनआनंद सुजान प्यारे,
तब तें अनोखी आगि लागि रही चाह की ॥१६

बधिकौ सुधि लेत, सुन्यौ, हति कै गति रावरी क्यौं हूँ न बूझि परै ।
मति आवरी बावरी ह्वै जकि जाय, उपाय कहूँ कि न सूझि परै ॥
घनआनंद यौं अपनाय तजी इन सोचनि ही मन मूझि परै ।
दिन रैन सुजान-वियोग के बान सहै जिय पापी न जूझि परै ॥१७

अंक भरौं, चकि चौंकि परौं, कबहुँक लरौं, छिन ही मैं मनाऊँ ।
देखि रहौं, अनदेखे दहौं, सुख सोघ सहौं जो लहौं सुनि पाऊँ ॥
जान ! तिहारी सौं मेरी दसा यह को समुझै अरु काहि सुनाऊँ ॥
यौं घनआनंद रैनदिना नहिं बीतत, जानियै कैसें बिताऊँ ॥१८

मूरति सिंयार की उजारी छबि आछी भाँति,
दीठि-लालसा के लोयननि लै लै आँजिहौं ।
रति-रसना-सवाद-पाँवड़े पुनीत कारी,
पाय चूमि चूमि कै कपोलनि सों माँजिहौं ॥
जान प्रान प्यारे अंग-अंग-रुचि-रंगनि मैं,
बोरि सब अंगनि अनंग-दुख भाँजिहौं ।
कब घनआनंद ढरौंहीं बानि देखैं सुख,
सुधा-हेत मन-घट-दरकनि राजिहौं ॥१९

घनआनंद मीत सुजान हहा सुनियै बिनती कर जोरि करैं ।
अरसाहु न नेकु रिसाहु अजू धरि ध्यानहिं दूरि तें पाय परैं ॥
मन भायौ वियोग मैं जारिबो जौ तौ तिहारी सौं नीकें जरैंऽरु भरैं ।
पै तुम्हैं मति कोऊ कहौ हित-हीन, सु या दुख-बीच अमीच मरैं ॥२०

लै ही रहे हौ सदा मन और को दैबो न जानत जान दुलारे ।
देख्यौ न है सपने हू कहूँ दुख, त्यागे सकोच औ सोच सुखारे ॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

कैसो संजोग वियोग धौं आहि ! फिरौ घनआनंद ह्वै मतवारे ।
मो गति बूझि परै तब हीं जब होहु घरीक हू आप तें न्यारे ।।२१

पूरन प्रेम को मंत्र महा पन, जा मधि सोधि सुधारि है लेख्यौ ।
ताही के चारु चरित्र विचित्रनि यौं पचि कै रचि राखि बिसेख्यौ ।
ऐसो हियो-हित-पत्र पवित्र जु आन-कथा न कहूँ अवरेख्यौ ।
सो घनआनंद जान अजान लौं टूक कियौ परि बाँचि न देख्यौ ।।२२

देखि धौं आरती लै बलि नेकु लसी है गुराई मैं कैसी ललाई ।
मानौं उदोत दिवाकर की दुति पूरन चंदहि भेंटन आई ।
फूलत कंज कुमोद लखें घनआनन्द रूप अनूप निकाई ।
तो मुख लाल गुलालहिं लाय कै सोतिन के हिय होरी लगाई ।।२३

सजनी रजनी-दिन देखें बिना दुख पागि उदेग की आगि दहौं ।
अँसुवा हिय पै धिय-धार परै उठि स्वास झरै सुठि आस गहौं ।
घनआनंद नीर समीर बिना बुझिवे को न और उपाय लहौं ।
उर आवत यौं छबि-छाँह ज्यों हौं ब्रजछैल की गैल सदाई रहौं ।।२४

डगमगी डगनि-धरनि छबि ही के भार,
ढरनि छबीले उर आछी बनमाल की ।
सुन्दर बदन तर कोरिक मदन वारौं,
चित चुभी चितवनि लोचन बिसाल की ।
काल्हि इहि गली अली निकसे औचक आय,
कहा कहौं अटक भटक तिहि काल की ।
भिजई हौं रोम रोम आनंद के घन छाय,
बसी मेरी आँखिन मैं आवनि गुपाल की ।।२५

अति सूधो सनेह को मारग है जहाँ नेकु सयानप बाँक नहीं ।
तहाँ साँचे चलैं तजि आपुनपौ झझकैं कपटी जे निसाँक नहीं ।
घनआनंद प्यारे सुजान सुनौ इत एक तें दूसरों आँक नहीं ।
तुम कौन धौं पाटी पढ़े हौ लला मन लेहु पै देहु छटाँक नहीं ।।२६

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

परकाजहिं देह कों धारे फिरौ परजन्य जथारथ ह्वै दरसौ।
निधि-नीर सुधा के समान करौ सब ही विधि सज्जनता सरसौ।
घनआनंद जीवन-दायक हौ कछू मेरियौ पीर हियें परसौ।
कबहूँ वा बिसासी सुजान के आँगन मो अँसुवानि हूँ लै बरसौ ॥२७॥

सावन-आवन हेरि सखी ! मन भावन-आवन-चोप विसेखी।
छाए कहूँ घनआनंद जान सम्हारि की ठौर लै भूलनि लेखी।
बूदैं लगैं सब अंग दगै उलटी गति आपने पापनि पेखी।
पौन सों जागति आगि सुनी ही पै पानी सों लागति आँखिन देखी ॥२८॥

सोंधे की बास उसासहिं रोकति, चंदन दाहक गाहक जी को।
नैननि वैरी सो है री गुलाल अबीर उड़ावत धीरज ही को।
राग विराग धमार त्यौं धार सी, लौटि पर्‌यो ढँग यौं सब ही को।
रंग-नचावन जान बिना घनआनंद लागत फागुन फीको ॥२९॥

फागुन महीना की कही ना परैं बातैं दिन-
रातैं जैसें बीतत सुने तें डफ-घोर कों।
कोऊ उठै तान गाय, प्रान बान पैठि जात,
हाय चित बीच, पै न पाऊँ चितचोर कों।
मची है चुहल चहूँ दिसि चोप चाँचरि सों,
कासों कहौं सहौं हौं बियौग-झकझोर कों।
मेरो मन आली वा बिसासी बनमाली बिन,
बावरे लों दौरि दौरि परै सब ओर कों ॥३०॥

ब्रज की छबि हेरि हर्‌यो हित होत,खिली मिलि जूथनि जूथ जुही।
घन घोरि घुरे चहुँ ओरनि तें बरसैं परसैं सरसैं सु फुही।
तिहि कुंजन मैं रसपुंज-भरे बिहरैं हरि-राधिका चोप उही।
घनआनंद नैंन-पपीहन कों नित ही रसरासि रहौ समुही ॥३१॥

नेह सों भोय सँजोय धरी हित-दीप दसा जु भरी अति आरति।
रूप उज्यारे अजू ब्रजमोहन सौंहनि आवनि ओर निहारति।
रावरी आरति बावरी लौं घनआनंद भूलि बियोग निवारति।
भावना-थार हुलास के हाथनि यौं हित-मूरति हेरि उतारति ॥३२॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

आसा गुन बाँधि कै भरोसो-सिल धरि छाती,
पूरे पन-सिंधु मैं न बूड़त सकाय हौ।
दीह दुख-दव हिय जारि उर अंतर
निरंतर यौं रोम-रोम त्रासनि तचाइ हौं।
लाख लाख भाँतिन की दुसह दसानि जानि,
साह सम्हारि सिर आरे लौं चलाय हौ।
ऐसे घन आनंद गड़ी है टेक मन माहिं,
एरे निरदई तोहि दया उपजाइ हौं ॥३३॥

अंतर आँच उसास तचै अति, अंग उसीजे उदेग की आवस।
ज्यौं कहलाय मसोसनि ऊमस क्यौं हूँ कहूँ सु धरै नहीं थ्यावस।
नैनउ धारि दिये बरसै घन आनंद छाई अनोखियै पावस।
जीवनि मूरति जान को आनन है बिन हेरैं सदाई अमावस ॥३४॥

तब तो छबि पीवत जीवत हे अब सोचन लोचन जात जरे।
हिय-पोष के तोष जु प्रान पले बिललात सु यौं दुख-दोष भरे।
घन आनंद प्यारे सुजान बिना सब ही सुख-साज समाज टरे।
तब हार पहार से लागत हे अब आनि कै बीच पहार परे ॥३५॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

द्विजदेव

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

प्रकीर्ण

कारो नभ कारी निसि कारियो डरारी धटा,
झूकन बहत पौन आनन्द को कन्द री।
'द्विजदेव' साँवरी सलोनी सजी श्याम जू पै,
कीन्हें अभिसार लखि पावस अनंद री।
नागरी गुनागरी सु कैसे डरै रैनि डर,
जागे संग सोहत सहायक अमंद री।
बाहन मनोरथ उमाहैं संगवारी सखी,
मैनमद सुभट, मसाल मुखचंद री ॥१॥

धूमि कै चहूँधा धाय आवैं जलधर-धार,
तड़ित पताके बाँके नभ में पसरिगे।
'द्विजदेव' कालिन्दी समीपन के नीपन के,
पात-पात जोगिनी जमानत ते भरिगे।
चातक चकोर मोर दादुर सुभट जोर,
निज-निज दाँव ठाँव ठाँवन सँभरिगे।
बिन यदुराय अब कीजै कहा माय,
हाय पावस महीप के चहूँघा घेरे परिगे ॥२॥

उमड़ि-घुमड़ि घन छाँड़त अखंड धार,
अति ही प्रचंड पौन झूकन बहुत है।
'द्विजदेव' संध्या को कोलाहल चहूँधा नभ,
शैल ते जलाहल को जोग उमहत है।
बुद्धि बल थाको सोई प्रबल निसा को मेघ,
देखि ब्रज सूनो बैर आपनो गहतु है।
एहो गिरधारी राखो सरन तिहारी,
अब फेरि यहि बारी ब्रज बूड़न चहतु है ॥३॥

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

आवत चली ही यह विषम बयारि देखु,
दबे-दबे पायन किवारन लरजि दै।
क्वैलिया कलंकिनी को दौरि समझाय,
मधुमाती मधुमालिन कुचालिन तरजि दै।
आज ब्रजरानी के वियोग को दिवस ताते,
हरे-हरे कीर बकवादिन हरजि दै।
पी-पी कै पुकारिबे को खोलैं ज्यों न जीहन,
त्यों बावरी पपीहन के जूहन बरजि दै ॥४॥

भूले भले भौंर बन भाँवरैं भरैंगे चहूँ,
फूलि फूलि किंसुक जको सो रहि जाय है।
'द्विजदेव' की सौं वह कूजनि बिसासी कूर,
कोकिल कलंकी ठौर ठौर पछिताय है।
आवत बसंत के न ऐहैं जो पै स्याम,
तो पै बावरी बलाय सों हमारे हू उपाय है।
पीहैं पहिले ही सौं हलाहल मँगाय,
या कलानिधि की एकौ कला चलन न पाय है ॥५॥

अब मति दै री कान कान्ह की बसीठिनि पै,
झूठे झूठे प्रेम के पतौवन को फेरि दे।
उरझि रही री जो अनेक पुरवातैं सोऊ,
नाते की गिरह मूँदि नैनन निबेरि दे।
मरन चाहत काहू छैल पै छबीली कोऊ,
हाथन उठाय ब्रजबीथिन बरजि दे।
नेह री कहाँ को जरि खेह री भई तो अब,
देहरी उठाय वाकी देहरी पै गेरि दे ॥६॥

बाँके संकहीने, राते कंज छबि छीने, माते,
झुकि-झुकि, झूमि-झूमि काहू को कछू गनैं न।
'द्विजदेव' की सौं ऐसी बनक बनाय बहु—
भाँतिन बगारे चित चाहन चहूँधा चैन।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

पेखि परे प्रात जौ पै गातन उछाह भरे,
बार बार तातें तुम्हैं बूझती कछूक बैन ।
अहो व्रजराज ! मेरो प्रेमघन लूटिवे को,
बीरा खाय आये कितै आपके अनोखे नैन ।।७।।

सूर ही के भार सूबे सबद सुकीरन के,
मंदिरन त्याग करैं अनत कहूँ न गौन ।
'द्विजदेव' त्यौंही मधुभारन अपारन सों,
नेकु झुकि झूमि रहे मोगरे मरून दौन ।
खोलि इन नैंननि निहारौं तो निहारौं कहा,
सुखमा अभूत छाय रही प्रति भौन भौन ।
चाँदनी के भारन लगत उनयो सो चंद,
गंध ही के भारन बहत मंद मंद पौन ।।८।।

पाई विभूति धनी तौ हमैं चित चाहि पठाई विभूति उहाँ तैं ।
त्यों 'द्विजदेव' जू कूबरी यों पठई यह कूबरी संगम नातै ।
ऊधो जू कीजै कहा इतनो स्रम यों उपचाय हिये वहु घातैं ।
जाहिर हैं सिगरे ब्रज में उन सुन्दर स्याम सनेह की बातैं ।।९।।

घहरि घहरि घन सघन चहूँधा घेरि,
छहरि छहरि विष-बूँद बरसावै ना ।
'द्विजदेव' की सौं अब कूक मत दाँव, एरे,
पातकी पपीहा ! तू पिया की धुनि गावै ना ।
फेरि ऐसो औसर न ऐहै तेरे हाथ, एरे,
मटकि मटकि मोर सोर तू मचावै ना ।
हैं तो बिन प्रान, चाहत तजोई अब,
कत नभ चन्द तू अकास चढ़ि धावै ना ।।१०।।

आजु सुभायन ही गयी बाग, बिलोकि प्रसून की पाँति रही पगि ।
ताहि समैं तँह आये गोपाल तिन्हैं लखि औरो गयो हियरो ठगि ।
पै 'द्विजदेव' न जानि पर्‌यो धौं कहा तेहि काल, परे अँसुवा जगि ।
तू जो कही, सखि ! लीनो सरूप सो मो अँखियान कौं लोनी गयी लगि ।।११।।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

आधी लै उसास मुख आँसुन से धोवै कहूँ,
कहूँ जोवै आधे आधे पलन पसारि कै ।
नींद भूख प्यास ताहि आधी हूँ रही न तन,
आधे हूँ न आखर सकत अनुसारि कै ।।
'द्विजदेव' की सौं आधि अधिकानी जासौं,
नेकहु न तन मन राखत सँभारि कै ।
जा दिन ते जोरि मनमोहन लला पै दीठि,
राधे आधे नैनन ते आई तू निहारि कै ।।१२।।

औरै भाँति कोकिल चकोर ठौर ठौर बोलैं,
औरै भाँति सबद पपीहन के ह्वै गये ।
औरै भाँति पल्लव लिये वृन्द तरु,
औरै छबि पुंज कुंज कुंजन उनै गये ।
और भाँति सीतल सुगन्ध मंद डोलै पौन,
'द्विजदेव' देखत न ऐसे फल ह्वै गये ।
औरै रीति औरै रंग औरै साज औरै संग,
औरै बन औरै छन औरै मन ह्वै गये ।।१३।।

चित चाहि अबूझ कहैं कितने छबि छीनी गयंदन की टटकी ।
कवि केते कहैं निज बुद्धि उदै, यहि सीखी मरालन की मटकी ।
'द्विजदेव जू' ऐसे कुतरकन मैं, सब की मति यों ही फिरै भटकी ।
वह मंद चलै किन भोरी भटू पग लाखन की अखियाँ अटकी ।।१४।।

देखि मधुमास की रुतीक अनरीति,
मधुसूदन जु होते तौ न औते कहौ काहे कौं ।
जानि ब्रज बूड़त जू होते गिरिधारी तौ पै,
ऊधौ इत तुमहिं पठौते कहौ काहे कौ ।
'द्विजदेव' प्यारे पिय पीतम जु होते तौ पै,
ब्रज में वढ़ौते दु:ख सोते कहौ काहे कौं ।
बसि कै विदेस बीजुरी-सी ब्रजबालनि कौं,
होते घनस्याम तौ बरौते कहौ काहे कौं ।।१६।।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

मेल्यो उर आनँद अपार मैन सोवत ही,
पाय सुधि सौरभ समीरन मिलन की।
नेह के झकोरनि हिलाय उर दीन्हों लखि,
सुखमा लवंग लतिकान के हिलन की।
स्वपन भयो धौं कैधौं साँची करतार इमि,
समुझत रीति लखि अंग शिथिलन की।
खिल गये लोचन हमारे एक बार सुनि,
आहट गुलाबन के अखिल खिलन की ।।१६।।

दाबि दाबि दंतन अधर छतवंत करै,
आपने ही पाँयन को आहट सुनत स्रौन।
'द्विजदेव' लेत भरि गातन प्रस्वेद अलि,
पात हूँ की खरक जु होति कहूँ काहू भौन।
कंटकित होति अति उससि उसासनि ते,
सहज सुबासन शरीर में जु लागे पौन।
पंथ ही में कंत के जो होति यह हाल तोपै,
लाल की मिलनि ह्वैहै बाल की दसा धौं कौन ।।१७।।

आई न जो बक बावरे पै 'द्विजदेव' जू हंसन की तौ गई गति।
मेढक मीनन मान कर्‌यो तो भई है कहा अरविन्दन की छति।
उक्ति उदार कविन्दन पै बन बासिन की सुभई न भई रति।
जा पै गँवारन लीन्हों न तो घटि जाती जवाहिर की कहूँ कीमति ।।१८।।

मंजु मंजु गुंजत मलिंदन की प्यारी धुनि,
सुनत सलोनी सुधि आवति न तन की।
द्विजदेव' बनक बिलोके ही बनत कछु,
ललित लवंग लतिकान के सुमन की।
सीरो धीर सुरभि समीर सरसात बन,
लखि रुकि जाति गति काके ना चखन की।
ऊधो जू न आवै लाज हिय में तिहारे आज,
आए हूँ बसंत सीख देत उजरन की ।।१९।।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

साँझ ही ते आवत हिलावत कटारी कर,
पाइकै कुसंगति कृशानु दुखदाई को ।
निपट निशंक ह्वै तजी तैं कुल कानि खानि,
औगुण कीने कहूँ तुलैं न बाप भाई को ।
येरे मति मंद चंद आवत न लाज तोहि,
देत दुख बापुरे बियोगिनी समुदाई को ।
ह्वै कै सुधा धाम काम विष को बगारै मूढ़,
ह्वै के 'द्विजराज' काज करत कसाई को ।।२०।।

लै लै कर झोरीं जुरि आईं इतै गोरी उतै,
होरी खेलिवे को ग्वाल बाल हूँ बनायो कीच ।
छायगो छिनै मे यों गुलाल मेघमाल ऐसो,
'द्विजदेव' जासों न जनायो परै ऊँच-नीच ।
ऐसी भई धूँधरि धमारि की जु ताही समै,
पावस के भोरे मोर शोर कै उठे अपीच ।
घन के समान ज्यों-ज्यों दौरैं घनश्याम त्यों-त्यों,
संपा सी दुरति आली चम्पा बन बीच-बीच ।।२१।।

मंद गंध बाहक सुधा के अवगाहक की,
अगिनि अवास सी अपूरब भई है गति ।
'द्विजदेव' तेई फूल दुखद भये हैं अब,
जिनहिं बिलोकि हिय होति ही कछू करति ।
अलज अक्रूर की सु ऐसी बिपरीत रीति,
बार-बार बावरे बिचारति कहा है अति ।
जाके इत आवत हमारे प्रिय प्रीतम की,
सारे व्रज मंडल सी लपटि गई है मति ।।२२।।

राती भई भूमि सो तो जावक की छाप,
चूनरी की दाप रँग ऐसो बरसैं अशेष घन ।
साखी पात पातन गुलाल गुंफ से है खिले,

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

हैं जरतारी जिन्हैं जानत अबीर-कन ।
'द्विजदेव' ऐसी छबि देखि दौरों कहा,
फागुन के भोरे ब्रजमंडल के सारे जन ।
सहज सखीन सँग राधा जू पधार्‌यो आजु,
सावन में सूखे ही सुभावन अशोक बन ।।२३।।

गावो किन कोकिल बजावो किन बेनु बेनु,
नाचो किन झूमरि लतागन बने ठने ।
फेंकि-फेंकि मारौ किन निज कर पल्लव सों,
ललित लवंग फूल पानन घने घने ।
फूल माल वारौ किन सौरभ सँवारौ किन,
ये ही परिचारक समीर सुख सों सने ।
मौर धरि बैठो किन चतुर रसाल आज,
आवत बसंत ऋतुराज तुम्हैं देखने ।।२४।।

अंग अंगरागन सो सोने सों भई है द्युति,
फूले घने पादपन ये हैं पारिजाति बन ।
टूटि परे हारन सों रतनमई है भूमि,
ती हैं घनी जाहि तुम जानत हौ देवी गन ।
पीरे परे जातक हा सुनो हो सुमेरु गिरि,
'द्विजदेव' की सों भ्रम नाहक तिहारे मन ।
या बिधि सों आजु वृषभानुजा पधार्‌यौ इतै,
शोधन करत सबै गोधन गिरीशतन ।।२५।।

वहु भांति बगारे जो या ब्रज में अति आनन ओप अनूप कला ।
'द्विजदेव' जू चन्द्रिका की छवि जाकी प्रसारि रही सिगरी अचला ।
निरख्यो जब ते इन नैन चकोरन बीत तज्यों युग एक पला ।
चहुँधा सखि चांदनी चौक में डोलत चंद अमंद सों नंदलला ।।२६।।

हाँसी भई सपनों अवाँ सी भई देह यह,
दासी भई बैरिनै विसासी भई सखियाँ ।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

'द्विजदेव' त्यों ही कछु फूले-फूले किंशुकन,
ज्वाल-जाल जागी सी चहूँघा दिशि लखियाँ ।
चोप चटवारो चित चंचल चकोर मेरो,
कैसी करै बावरी परिंद बिन पँखियाँ
जा क्षण ते जाय अति उमंगि अघाय मन-
मोहन सों हाय मिलि आईं मेरी अखियाँ ।।२७।।

कलधौत कपूर कलानिधि कुंद हँसी ही हँसी अति मंद किए ।
मुख बात ते कंज सुगंध सने उपराजित पौनहु चंद किए ।
'द्विजदेव' कटाक्ष ही ते छन जोन्ह के दूरि सबै छल छंद किए ।
पिक चातक मोर चकोरन के यक बात ही ते मुख बंद किए ।।२८।।

है रजनीरज में रुचि केती कहा रुचि रोचन रंक रसाल में ।
त्यों करहाट में केसर में 'द्विजदेव' है द्युति त्यों दामिनी जाल में ।
चम्पक में रुचि रञ्चकऊ नहिं केतकि है रुचि केतकि माल में ।
तीतन को तन को लखिये तौ कहा द्युति कुंदन चन्द मशाल में ।।२९।।

भाव-वर्णन

जानैं तवै परिहास जवै जब श्याम विदेश की वातन भाषैं ।
सो उन साँचो करौ 'द्विजदेव' पुरै दुख हा इनिकी अभिलाषैं ।
फूली घनी विष वेली इतै उत का विधि ये अखियाँ अब चाषैं ।
देहरी नाँघि चलै वै लला कहौ कौन प्रकार सों देहरी राषैं ।।३०।।

लेबे को चली ती बहु भाँतिन को चैन बन,
ऊँची कै भुजान भरि अंचल छिपाई लाज ।
छीबो को चली ती वह पानिप भरोई तन,
छाय छाय आई हियो पावक वियोग साज ।
भभरि रही सी अभिलाषा मन ही की मन,
'द्विजदेव' की सौं कछु भूलिहू भयो न काज ।
पीबे को चली ती ब्रजचंद्र को अमंद हास,
पाय चली प्यारी विष विरह विथा को आज ।।३१।।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

परम परब पाइ न्हाइ जमुना के नीर,
पूरिकै प्रबाह अंगराग के अगरते ।
'द्विजदेव' की सों द्विजराज अंजली के काज,
जौं लौं चहे पानिय उठायो कंज करते ।
तौं लौं बन जाइ मन मोहन मिलापी कहूँ,
फूकसी चलाई फूंकि बाँसुरी अधरते ।
श्वासा काढ़ि नासा ते न बासाते भुजाएँ कढ़ीं,
अंजलीन अंजली ते आखरो न गरते ।।३२।।

धीर धरै न मलैज मलै तन ताप दुरै न पुरौनि से पातन ।
त्यों 'द्विजदेव' कपूर की धूरन जाति न वाकी विथा जलजातन ।
ऐसिय श्याम सुनी कुशलात हौं छज्जन छाजन छातन छातन ।
बूढ़िन की अरु बारिन की ब्रज की युवतीन की बातन बातन ।।३३।।

भेद मुकुता के जेते स्वाति ही में होत ते तै,
रतन हूँ को कहूँ भूलि हूँ न होत भ्रम ।
मोती सों न रतन रतन हूँ न मोती होत,
एक के भये ते कहूँ होत दूसरे को क्रम ।
'द्विजदेव' की सों ऐसी बनक निकाई देखि,
राम की दोहाई मन होत है निहाल मम ।
कंज के उदर प्रगट्यो है मुकुताहल सो,
बाहर के आवत भयो है इन्द्रनील सम ।।३४।।

ज्यों-ज्यों तुम गाइ गहि गुनन बिकासो बन,
ह्वै ह्वै अध उरध झलान के झकोरे में ।
त्यों-त्यों सुख पाइ तुब गुनन गहीली बास,
होती अध उरध न केती चितचोरे में ।
'द्विजदेव' याही विधि झूलती किती की मति,
जाहि अवलोकि हिय हरष हिलोरे में ।
कैसी यह झूलन तिहारी है तिहारी सौंह,
ये हो ब्रजराज आज रंग के हिंडोरे मे ।।३५।।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

आज बरसाने की नवेली अलबेली बनि
पावन चरित्र बलि बावन तयारी में।
लै लै कर लेखनी लगावन लगीही रंग,
आनंद उमगते सबीह न्यारी न्यारी में।
ताही समय बाँसुरी सुनाई कहूँ कान्है टेरि,
'द्विजदेव' की सों या आनंद अधिकारी में।
चित्र लिखिवे की कौन चरचा चलावै जब,
चित्र की लिखी सी भई सारी चि सारी में ।।३६।।

खोइ के सुबंश बसी ऐसी ही कछुक दिन,
मारी फिरी ऐसे ही कछूक दिन नांगी री।
छेदक खाइ निज छाती में छ सात गई,
कारीगर हाथन अनेक विधि दागी री।
ताहि मनमोहन कित दिन ते राखी संग,
'द्विजदेव' की सौं ह्वै सुराग अनुरागी री।
ढीठ ह्वै ह्वै क्यों न ब्रज बालन सतावै सोई,
बाँसुरी सुन्यों मैं अब हरि मुख लागी री ।।३७।।

बोलि हारे कोकिल बुलाइ हारे केकी गन,
सिखै हारी सखी सब जुगति नई-नई।
'द्विजदेव' की सों लाज बैरिन कुसंग इन,
अंगन ही आपने अनीति इतनी ठई।
हाय इन कुंजन ते पलटि पधारे श्याम,
देखन न पाई वह मूरति सुधा मई।
आवन समै में सुख दाइनि भई री आज,
चलन समय में चल पलन दगा दई ।।३८।।

आरसी की उपमा जो हुती सोतो वा मुख की छबि देखतै लाजी।
सोतो सदा बिकसेई रहैं कब सारसी ता समता कहँ छाजी।
ये 'द्विजदेव' कहों किन आजु रहे उपमान जुपै हिय साजी।
तासों लहैगो प्रभा द्विजराज बिराजै जहाँ द्विजराज की राजी ।।३९।।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

डारे कहूँ मथनि बिसारे कहूँ घी को भाँड़ो,
बिकल बिगारैं कहूँ माखन मठा महो ।
भ्रमि भ्रमि आवत चहूँघा ते जु याही ओर,
प्रेम पयपूर के प्रवाहन मनौ बही ।
झुरसि गई धौं कहूँ काहू की वियोगझार,
बार-बार बिकल बिसूरति जहीं तहीं ।
एही ब्रजराज एक ग्वालिनी कहूँ की आज,
भोर ही ते द्वार पै पुकारति दही दही ।।४०।।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow